॥ श्री चन्द्रप्रभ स्वामिने नमः ॥

श्री वर्धमान जैन मंडल, चेन्नई द्वारा संचालित

(संस्थापक सदस्य : श्री तमिलनाड जैन महामंडल)

Estd.:1991

Estd.:2006

श्री वर्धमान कुंवर जैन संस्कार वाटिका

... *Ek Summer & Holiday Camp*

जैन तत्त्व दर्शन

(JAIN TATVA DARSHAN)

संकलन व प्रकाशक

श्री वर्धमान जैन मंडल, चेन्नई

पाठ्यक्रम - 7

एक ज्ञान ज्योत जो बनी अमर ज्योत

जन्म दिवस
14-2-1913

स्वर्गवास
27-11-2005

पंडित भूषण पंडितवर्य श्री कुंवरजीभाई दोसी

विशेष परिचय

- जन्म : गुजरात के भावनगर जिले के जैसर गाँव में हुआ था।
- सम्यग्ज्ञान प्रदान : भावनगर, महेसाणा, पालिताणा, बैंगलोर, मद्रास।
- प.पू. पंन्यास प्रवर श्री भद्रंकरविजयजी म.सा. का आपश्री पर विशेष उपकार।
- श्री संघ द्वारा पंडित भूषण की पदवी से सुशोभित।
- अहमदाबाद में वर्ष 2003 के सर्वश्रेष्ठ पंडितवर्य की पदवी से सम्मानित।
- प्रायः सभी आचार्य भगवंतों, साधु -साध्वीयों से विशेष अनुमोदनीय।
- धर्मनगरी चेन्नई पर सतत् 45 वर्ष तक सम्यग् ज्ञान का फैलाव।
- तत्त्वज्ञान, ज्योतिष, संस्कृत, व्याकरण के विशिष्ट ज्ञाता।
- पूरे भारत भर में बड़ी संख्या में अंजनशलाकाएँ एवं प्रतिष्ठाओं के महान् विधिकारक।
- अनुष्ठान एवं महापूजन को पूरी तन्मयता से करने वाले ऐसे अद्भुत श्रद्धावान्।
- स्मरण शक्ति के अनमोल धारक।
- तकरीबन 100 छात्र-छात्राओं को संयम मार्ग की ओर अग्रसर कराने वाले।
- कई साधु-साध्वीयों को धार्मिक अभ्यास कराने वाले।
- आपश्री द्वारा मंत्रों का स्पष्ट उच्चारण एवं विधि में शुद्धता को विशेष प्रधानता।
- तीर्थ यात्रा के प्रेरणा स्त्रोत।

दुनिया से भले गये पंडितजी आप, हमारे दिल से न जा पायेंगे।
आप की लगाई इन ज्ञान परब पर, जब-जब ज्ञान जल पीने जायेगें
तब बेशक गुरुवर आप हमें बहुत याद आयेंगे.....

वि.सं.२०६९ ई.स. 2013 प्रथम आवृत्ति : 2000 प्रतिया (कुल 5000 प्रतिया) मूल्य : रू. 70/-
सर्वहक : श्रमण प्रधान श्री संघ के आधीन साधु-साध्वीजी भगवंतो को और ज्ञानभंडारो को भेंट स्वरूप मिलेगी।

।। श्री चन्द्रप्रभस्वामिने नमः ।।

श्री वर्धमान कुंवर जैन संस्कार वाटिका

..... Ek Summer & Holiday Camp

जैन तत्त्व दर्शन

JAIN TATVA DARSHAN

पाठ्यक्रम 7

* दिव्याशिष *

"पंडित भूषण" श्री कुंवरजीभाई दोशी

* संकलन व प्रकाशक *

श्री वर्धमान जैन मंडल

(सदस्य : श्री तमिलनाड जैन महामंडल)

33, रेड्डी रामन स्ट्रीट, चेन्नई - 600 079. फोन : 044 - 2529 0018 / 2536 6201 / 2539 6070 / 2346 5721

E-mail : svjm1991@gmail.com Website : www.jainsanskarvatika.com

यह पुस्तक बच्चों को ज्यादा उपयोगी बने, इस हेतु आपके सुधार एवं सुझाव प्रकाशक के पते पर अवश्य भेंजे।

संस्कार वाटिका

अंधकार से प्रकाश की ओर

.... एक कदम

अज्ञान अंधकार है, ज्ञान प्रकाश है, अज्ञान रूपी अंधकार हमें वस्तु की सच्ची पहचान नहीं होने देता। अंधकार में हाथ में आये हुए हीरे को कोई कांच का टुकडा मानकर फेंक दे तो भी नुकसान है और अंधकार में हाथ में आये चमकते कांच के टुकडे को कोई हीरा मानकर तिजोरी में सुरक्षित रखे तो भी नुकसान हैं।

ज्ञान सच्चा वह है जो आत्मा में विवेक को जन्म देता है। क्या करना, क्या नहीं करना, क्या बोलना, क्या नहीं बोलना, क्या विचार करना, क्या विचार नहीं करना, क्या छोडना, क्या नहीं छोडना, यह विवेक को पैदा करने वाला सम्यग ज्ञान है। संक्षिप्त में कहें तो हेय, ज्ञेय, उपादेय का बोध कराने वाला ज्ञान ही सचा ज्ञान है। वही सम्यग ज्ञान है।

संसार के कई जीव बालक की तरह अज्ञानी है, जिनके पास भक्ष्य–अभक्ष्य, पेय–अपेय, श्राव्य–अश्राव्य और करणीय–अकरणीय का विवेक नहीं होने के कारण वे जीव करने योग्य कई कार्य नहीं करते और नहीं करने योग्य कई कार्य वे हंसते–हंसते करके पाप कर्म बांधते हैं।

बालकों का जीवन ब्लोटिंग पेपर की तरह होता है। मां–बाप या शिक्षक जो संस्कार उसमें डालने के लिए मेहनत करते हैं वे ही संस्कार उसमें विकसित होते हैं।

बालकों को उनकी ग्रहण शक्ति के अनुसार आज जो जैन दर्शन के सूत्रज्ञान–अर्थज्ञान और तत्त्वज्ञान की जानकारी दी जाय, तो आज का बालक भविष्य में हजारों के लिए सफल मार्गदर्शक बन सकता है।

बालकों को मात्र सूत्र कंठस्थ कराने से उनका विकास नहीं होगा, उसके साथ सूत्रों के अर्थ, सूत्रों के रहस्य, सूत्र के भावार्थ, सूत्रों का प्रेक्टिकल उपयोग, आदि बातें उन्हें सिखाने पर ही बच्चों में धर्मक्रिया के प्रति रूचि पैदा हो सकती है।

धर्मस्थान और धर्म क्रिया के प्रति बच्चों का आकर्षण उसी ज्ञान दान से संभव होगा। इसी उद्देश्य के साथ वि.सं. २०६२ (14 अप्रेल 2006) में 375 बच्चों के साथ चेन्नई महानगर के साहुकारपेट में **''श्री वर्धमान जैन मंडल''** ने संस्कार वाटिका के रूप में जिस बीज को बोया था, वह बीज आज वटवृक्ष के सदृश्य लहरा रहा है। आज हर बच्चा यहां आकर स्वयं को गौरवान्वित महसूस करता है।

पंडित भूषण पंडितवर्य श्री कुंवरजीभाई दोशी, जिनका हमारे मंडल पर असीम उपकार है उनके स्वर्गवास के पश्चात मंडल के अग्रगण्य सदस्यों की एक तमन्ना थी कि जिस सद्ज्ञान की ज्योत को पंडितजी ने जगाई है, वह निरंतर जलती रहे, उसके प्रकाश में आने वाला हर मानव स्व व पर का कल्याण कर सके।

इसी उद्देश्य के साथ आजकल की बाल पीढी को जैन धर्म की प्राथमिकी से वासित करने के लिए सर्वप्रथम श्री वर्धमान कुंवर जैन संस्कार वाटिका की नींव डाली गयी। वाटिका बच्चों को आज सम्यग्ज्ञान दान कर उनमें श्रद्धा उत्पन्न करने की उपकारी भूमिका निभा रही हैं। आज यह संस्कार वाटिका चेन्नई महानगर से प्रारंभ होकर भारत में ही नहीं अपितु विश्व के कोने-कोने में अपने पांव पसार कर सम्यग् ज्ञान दान का उत्तम दायित्व निभा रही है।

जैन बच्चों को जैनाचार संपन्न और जैन तत्त्वज्ञान में पारंगत बनाने के साथ-साथ उनमें सद् श्रद्धा का बीजारोपण करने का आवश्यक प्रयास वाटिका द्वारा नियुक्त श्रद्धा से वासित हृदय वाले अध्यापक व अध्यापिकागणों द्वारा निष्ठापूर्वक इस वाटिका के माध्यम से किया जा रहा है।

संस्कार वाटिका में बाल वर्ग से युवा वर्ग तक के समस्त विद्यार्थियों को स्वयं के कक्षानुसार जिनशासन के तत्त्वों को समझने और समझाने के साथ उनके हृदय में श्रद्धा दृढ हो ऐसे शुद्ध उद्देश्य से **''जैन तत्त्व दर्शन (भाग 1 से 9 तक)''** प्रकाशित करने का इस वाटिका ने पुरूषार्थ किया है। इन अभ्यास पुस्तिकाओं द्वारा ''जैन तत्त्व दर्शन (भाग 1 से 9), कलाकृत्ति (भाग 1-3), दो प्रतिक्रमण, पांच प्रतिक्रमण, पर्युषण आराधना'' पुस्तक आदि के माध्यम से अभ्यार्थीयों को सहजता अनुभव होगी।

इन पुस्तकों के संकलन एवं प्रकाशन में चेन्नई महानगर में चातुर्मास हेतु पधारे, पूज्य गुरु भगवंतों से समय-समय पर आवश्यक एवं उपयोगी निर्देश निरंतर मिलते रहे हैं। संस्कार वाटिका की प्रगति के लिए अत्यंत लाभकारी निर्देश भी उनसे मिलते रहे हैं। हमारे प्रबल पुण्योदय से इस पाठ्यक्रम के प्रकाशन एवं संकलन में विविध समुदाय के आचार्य भगवंत, मुनि भगवंत, अध्यापक, अध्यापिका, लाभार्थी परिवार, श्रुत ज्ञान पिपासु आदि का पुस्तक मुद्रण में अमूल्य सहयोग मिला, तदर्थ धन्यवाद। आपका सुन्दर सहकार अविस्मरणीय रहेगा।

<u>मंडल को विविध गुरु भगवंतों का सफल मार्गदर्शन एवं आशीर्वाद :-</u>

1. प. पू. पंन्यास श्री अजयसागरजी म.सा.
2. प. पू. पंन्यास श्री उदयप्रभविजयजी म.सा.
3. प. पू. मुनिराज श्री युगप्रभविजयजी म.सा.
4. प. पू. मुनिराज श्री अभ्युदयप्रभविजयजी म.सा.
5. प. पू. मुनिराज श्री दयासिंधुविजयजी म.सा.

अंत में ''जैन तत्त्व दर्शन'' के विविध पाठ्यक्रमों के माध्यम से सम्यग् ज्ञान प्राप्ति के साथ हर जैन बालक जीवन में आचरणीय सर्वविरती, संयम दीक्षा के परिणाम को प्राप्त करें ऐसी शुभाभिलाषा...

संस्कार वाटिका - जैन संघ के अभ्यूदय के लिए कलयुग में कल्पवृक्ष रूप प्रमाणित हो, यही मंगल मनीषा।

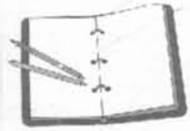

भेजिये आपके लाल को, सच्चे जैन हम बनायेंगे।
दुनिया पूजेगी उनको, इतना महान बनायेंगे।।

जिनशासन सेवानुरागी

श्री वर्धमान जैन मंडल

साहुकारपेट, चेन्नई-79.

पाठ्यक्रम के प्रकाशन में निम्न ग्रंथ एवं पुस्तकों का सहयोग :-

:: उपयुक्त ग्रंथ की सूची ::

1) धर्मबिंदु
2) योगबिंदु
3) जीव विचार
4) नवतत्त्व
5) लघुसंग्रहणी
6) चैत्यवंदन भाष्य
7) गुरुवंदन भाष्य
8) श्राद्धविधि प्रकरण
9) प्रथम कर्मग्रंथ

:: उपयुक्त पुस्तक की सूची ::

1)	गृहस्थ धर्म	पू. आचार्य श्रीमद् विजय केसरसूरीश्वरजी म.सा.
2)	बाल पोथी	पू. आचार्य श्रीमद् विजय भुवनभानूसूरीश्वरजी म.सा.
3)	तत्त्वज्ञान प्रवेशिका	पू. आचार्य श्रीमद् विजय कलापूर्णसूरीश्वरजी म.सा.
4)	बच्चों की सुवास/व्रत कथा	पू. आचार्य श्रीमद् विजय भद्रगुप्तसूरीश्वरजी म.सा.
5)	कहीं मुरझा न जाए	पू. आचार्य श्रीमद् विजय गुणरत्नसूरीश्वरजी म.सा.
6)	रात्रि भोजन महापाप	पू. आचार्य श्रीमद् विजय राजयशसूरीश्वरजी म.सा.
7)	पाप की मजा-नरक की सजा	पू. आचार्य श्रीमद् विजय रत्नाकरसूरीश्वरजी म.सा.
8)	चलो जिनालय चले	पू. आचार्य श्रीमद् विजय हेमरत्नसूरीश्वरजी म.सा.
9)	रीसर्च ऑफ डाईनिंग टेबल	पू. आचार्य श्रीमद् विजय हेमरत्नसूरीश्वरजी म.सा.
10)	सुशील सद्बोध शतक	पू. आचार्य श्रीमद् विजय सुशीलसूरीश्वरजी म.सा.
11)	जैन तत्त्वज्ञान चित्रावली प्रकाश	पू. आचार्य श्रीमद् विजय जयसुंदरसूरीश्वरजी म.सा.
12)	अपनी सच्ची भूगोल	पू. पंन्यास श्री अभयसागरजी म.सा.
13)	सूत्रोना रहस्यो	पू. पंन्यास श्री मेघदर्शन विजयजी म.सा.
14)	गुड बॉय/पंच प्रतिक्रमण सूत्र	पू. पंन्यास श्री वैराग्यरत्न विजयजी म.सा.
15)	हेम संस्कार सौरभ/जैन तत्त्व ज्ञान	पू. पंन्यास श्री उदयप्रभ विजयजी म.सा.
16)	आवश्यक क्रिया साधना	पू. मुनिराज श्री रम्यदर्शन विजयजी म.सा.
17)	गुरु राजेन्द्र विद्या संस्कार वाटिका	पू. साध्वीजी श्री मणिप्रभाश्रीजी म.सा.
18)	पच्चीस बोल	पू. महाश्रमणी श्री विजयश्री *आर्या*

नम्र विनंती :-

समस्त आचार्य भगवंत, मुनि भगवंतों, पाठशाला के अध्यापक-अध्यापिकाओं एवं श्रुत ज्ञान पिपासुओं से नम्र विनंती है कि इन पाठ्यक्रमों के उत्थान हेतु कोई भी विषय या सुझाव अगर आपके पास हो तो हमें अवश्य लिखकर भेजें ताकि हम इसे और भी सुंदर बना सकें।

अनुक्रमणिका

1) तीर्थंकर परिचय
A. श्री 20 वीहरमान तीर्थंकर के परिचय 7

2) काव्य संग्रह
A. प्रार्थना 8
B. प्रभु सन्मुख बोलने की स्तुति 8
C. (अ) श्री नेमिनाथ भगवान का चैत्यवंदन 9
(आ) श्री पार्श्वनाथ जिन चैत्यवंदन 9
D. (अ) श्री नेमिनाथ जिन स्तवन 10
(आ) श्री पार्श्वनाथ जिन स्तवन 10
E. (अ) श्री नेमिनाथ जिन स्तुति 11
(आ) श्री पार्श्वनाथ जिन स्तुति 11

3) जिन पूजा विधि 12

4) पांच ज्ञान
A. होली इज पाप की झोली 22
B. दिवाली को होली बना दी... 23
C. लक्ष्मी सरस्वती का अपमान 26

5) नवपद 28

6) नाद - घोष 33

7) मेरे गुरू
A. गोचरी के लिए ले जाना 33
B. गोचरी बहराने की रीति 33
C. गोचरी बहराते समय रखने योग्य सावधानी 35
D. गोचरी बहराने से लाभ 36

8) दिनचर्या
चातुर्मास के नव अलंकार 37

9) भोजन विवेक
A. टूथपेस्ट से सावधान 40
B. चॉकलेट 40
C. बिस्कुट 41
D. शीत पेय - कोल्ड ड्रिंक्स 42
E. जंक फूड 46
F. उबला हुआ पानी पीएँ 47

10) माता-पिता का उपकार 49

11) जीवदया-जयणा
जीव विचार 51

12) विनय - विवेक
देवद्रव्य विष्यक सूचना 60

13) सम्यग् ज्ञान
A. आठ कर्म 62
B. नव तत्त्व 69
C. श्रावक जीवन के बारह व्रत 76
D. मार्गानुसारी के 35 गुण 77

14) जैन भूगोल 81
A. सत्य का परदा खुल रहा है - द्रयात्रा षड्यंत्र 85
B. चन्द्रमा स्व-प्रकाशित है या पर प्रकाशित 85
C. समुद्र में आने वाले ज्वार-भाट का कारण 87
D. सूर्य-चन्द्र कैसे प्रकाशित होते 88
E. मेरु पर्वत और गतिशील ज्योतिषचक्र 89

15) सूत्र एवं विधि
A. सूत्र 90
B. अर्थ 90
C. विधि 90

16) कहानी
A. सूर्य एवं चन्द्र 90
B. राजा हंस 95
C. भावी तीर्थंकर ग्वाले देवपाल की कथा 101
D. महणसिंह की कथा 106

17) प्रश्नोत्तरी 109

18) सामान्य ज्ञान
A. GAME सूर्य एवं चन्द्र 112
B. रंगीन चित्र
नवतत्त्व 113
जीव के भेद - 1 (पांच स्थावर) 114
जीव के भेद - 2 (बेइंद्रिय से पंचेंद्रिय) 115
जीव के लक्षण तथा पर्याप्तियाँ 116

1. तीर्थंकर परिचय

A. श्री बीस विहरमान तीर्थंकर का परिचय

नाम	लंछन	नाम	लंछन
1. **श्री सीमंधरस्वामीजी**	वृषभ	11. **श्री वज्रधरस्वामी**	शंख
2. **श्री युगमंधरस्वामी**	गज	12. **श्री चन्द्राननस्वामी**	वृषभ
3. **श्री बाहुस्वामी**	मृग (हिरण)	13. **श्री चन्द्रबाहुस्वामी**	पद्म (कमल)
4. **श्री सुबाहुस्वामी**	मर्कट (कपि)	14. **श्री भुजंगदेवस्वामी**	पद्म (कमल)
5. **श्री सुजातस्वामी**	सूर्य	15. **श्री इश्वरस्वामी**	चंद्र
6. **श्री स्वयंप्रभस्वामी**	चंद्र	16. **श्री नेमिप्रभस्वामी**	सूर्य
7. **श्री ऋषभनानस्वामी**	सिंह	17. **श्री वीरसेनस्वामी**	वृषभ
8. **श्री अनन्तवीर्यस्वामी**	गज	18. **श्री महाभद्रस्वामी**	गज
9. **श्री सुरप्रभस्वामी**	चंद्र	19. **श्री देवयशास्वामी**	चंद्र
10. **श्री विशालस्वामी**	सूर्य	20. **श्री अजीतवीर्यस्वामी**	स्वस्तिक

शरीर प्रमाण	–	500 धनुष
वर्ण	–	कंचन
आयुष्य	–	84 लाख पूर्व
गृहस्थपना	–	83 लाख पूर्व
गणधर	–	84
केवली	–	10 लाख
साधु	–	100 करोड
साध्वी	–	100 करोड

2. काव्य संग्रह

A. प्रार्थना

मैत्री भावनुं पवित्र झरणुं मुज हैयामां वह्या करे
शुभ थाओ आ सकल विश्वनुं एवी भावना नित्य रहे ॥ 1 ॥

गुण थी भरेला गुणीजन देखी हैयुं मारू नृत्य करे
ए संतोना चरण कमलमां मुज जीवननु अर्घ्य रहे
दीन हीन ने धर्म विहोणा देखी दिलमा दर्द रहे
करूणा भीनी आंखोंमाथी अश्रुनो शुभ स्रोत वहे ॥ 2 ॥

मार्ग भुलेला जीवन पथिकने मार्ग चींधवा उभो रहु
करे उपेक्षा ए मारगनी तो ये समता चित्त धरू
वीर प्रभुनी धर्म भावना हैये सहु मानव लावे
वेरझेरना ताप शमावी, मंगल गीतो ए गावे ॥ 3 ॥

B. प्रभु स्तुतियाँ

राग द्वेष के आप विजेता, हमको विजयी बनाना,
भवसागर को तैर चुके हो, हमको पार लगाना,
केवलज्ञानी आप बने हो, हमको ज्ञानी बनाना,
सब कर्मों से मुक्त बने हो, हमको मुक्ति दिलाना ॥

आव्यो शरणे तमारे जिनवर करजो, आश पूरी अमारी
नाव्यो भवपार मारो तुम विण जगमां, सार ले कोण मारी?
गायो जिनराज आजे हर्ष अधिकथी, परम आनंदकारी,
पायो तुम दर्श नासे भव भय भ्रमणा, नाथ सर्वे अमारी ॥

शत कोटि–कोटि वार वंदन नाथ मारा हे तने
हे तरणतारण नाथ तु स्वीकार मारा नमन ने ।
हे नाथ शु जादु भर्यु अरिहंत शब्दोच्चार मा
आफत बधी आशीष बनी तुज नाम लेता वार मा ॥

आव्यो दादा ने दरबार, करो भवोदधि पार
मारो तुं छे आधार, मोहे तार तार तार... आव्यो ॥1॥

आत्मगुणनो भंडार, तारा महिमानो नहीं पार
देख्यो सुंदर देदार, करो पार पार पार... आव्यो ॥2॥

तारी मूर्ति मनोहार, हरे मनना विकार
मारा हैयानो हार, वंदु वार वार वार... आव्यो ॥3॥

आव्यो देहरासर मोझार, कर्यो जिनवर जुहार
प्रभु चरण आधार, खरो सार सार सार... आव्यो ॥4॥

आत्म कमल सुधार, तारी लब्धि छे अपार
एनी खुबी नो नहिं पार, विनंति धार धार धार... आव्यो ॥5॥

C. चैत्यवंदन

अ) श्री नेमिनाथ जिन चैत्यवंदन

नेमिनाथ बावीसमा, शिवादेवी माय,
समुद्रविजय पृथ्वीपति, जे प्रभुना ताय ॥ 1 ॥

दश धनुषनी देहडी, आयु वरस हजार,
शंख लंछनधर स्वामीजी, तजी राजुल नार. ॥ 2 ॥

शौरीपुरी नयरी भली अे, ब्रह्मचारी भगवान,
जिन उत्तम पद पद्मने, नमतां अविचल ठाण. ॥ 3 ॥

आ) श्री पार्श्वनाथ जिन चैत्यवंदन

ॐ नमः पार्श्वनाथाय, विश्व चिन्तामणीयते,
ह्रीँ धरणेन्द्र वैरुट्या -पद्मादेवी युतायते ॥ 1 ॥

शान्ति तुष्टि महापुष्टि, धृति कीर्ति विधायिने,
ॐ ह्रीँ द्विड व्याल वैताल, सर्वाधि व्याधि नाशिने ॥ 2 ॥

जयाजिताख्य विजयाख्या पराजितयान्वितः,
दिशां पालैर्ग्रहैर्यक्षै, र्विद्यादेवी भिरन्वितः ॥ 3 ॥

ॐ असिआउसाय नमस्तत्र त्रैलोक्यनाथताम् ,
चतुः षष्टि सुरेन्द्रास्ते, भासन्ते छत्रचामरैः ॥ 4 ॥

श्री शंखेश्वर मंडण ! पार्श्व जिन प्रणत कल्पतरु कल्प !
चूरय दुष्ट व्रातं, पूरय मे वांछितं नाथ ! ॥ 5 ॥

D. स्तवन

अ) श्री नेमिनाथ जिन स्तवन

निरख्यो नेमिजिणंद ने अरिहंताजी
राजीमती कर्यो त्याग भगवंताजी,
ब्रह्मचारी संयम ग्रह्यो, अरि... अनुक्रमे थया वीतराग रे भग... ॥ 1 ॥

चामर चक्र सिंहासन, अरि... पादपीठ संयुत रे भग...
छत्र चाले आकाश मां, अरि... देवदुंदुभि वर युत रे भग... ॥ 2 ॥

सहस जोयण ध्वज शोभतो, अरि... प्रभु आगल चालंत रे भग...
कनक कमल नव उपरे,अरि... विचरे पाय ठवंत रे भग... ॥ 3 ॥

चार मुखे दीये देशना, अरि... त्रण गढ झाकझमाल रे भग...
केश रोम श्मश्रु नखा, अरि... वाधे नही कोई काल रे भग... ॥ 4 ॥

कांटा पण उंधा होय, अरि... पंच विषय अनुकूल रे भग...
षट् ऋतु समकाले फले, अरि... वायु नहि प्रतिकूल रे भग... ॥ 5 ॥

पाणी सुगंध सुर कुसुम नी, अरि... वृष्टि होये सुरसाल रे भग...
पंखी दीये सुप्रदक्षिणा, अरि... वृक्ष नमे असराल रे भग... ॥ 6 ॥

जिन उत्तम पद पद्मनी, अरि... सेवा करे सुर कोडी रे, भग....
चार निकाय ना जघन्य थी, अरि....चैत्यवृक्ष तेम जोडी रे भग... ॥ 7 ॥

आ) श्री पार्श्वनाथ जिन स्तवन

जय! जय! जय! जय! पास जिणंदा
अंतरिक्ष प्रभु! त्रिभुवन तारण,भविक कमल उल्लास दिणंदा जय 1

तेरे चरण शरण में कीनो, तुम बिन कुन तोडे भव फंदा
परम पुरुष परमारथ दर्शी, तु दीये भविक कु परमानंदा जय 2

तु नायक तु शिवसुखदायक, तु हितचिंतक, तु सुखकंदा
तु जनरंजन तु भवभंजन, तु केवल-कमला-गोविंदा जय 3

कोडि देव मिलके कर न सके, एक अंगुष्ठ रूप प्रतिछंदा
ऐसो अद्‌भुत रूप तिहारो, मानो बरसंत अमृत के बुंदा जय 4

मेरे मन मधुकर के मोहन, तुम हो विमल सदल अरविंदा
नयन चकोर विलास करत है, देखत तुम मुख पूनमचंदा जय 5

दूर जावे प्रभु! तुम दरिशन से, दुःख दोहग दारिद्र अघ–दंदा
'वाचकजस' कहे सहज फलत है, जे बोले तुम गुण के वृंदा जय 6

E. स्तुति

अ) श्री नेमिनाथ जिन स्तुति

राजुल वर नारी, रुपथी रति हारी,
तेहना परिहारी, बालथी ब्रह्मचारी
पशुआं उगारी, हुआ चारित्रधारी,
केवलश्री सारी, पामीआ धाति वारी ॥ 1 ॥

आ) श्री पार्श्वनाथ जिन स्तुति

शंखेश्वर पासजी पूजीए, नरभवनो लाहो लीजिए,
मनवांछित पूरण सुरतरु, जय वामा सुत अलवेसरु ॥ 1 ॥

दोया राता जिनवर अतिभला, दोय धोला जिनवर गुणनीला,
दोय नीला दोय शामल कह्या, सोले जिन कंचनवर्ण लह्या ॥ 2 ॥

आगम ते जिनवर भाखियो, गणधर ते हैडे राखीयो,
तेहनो रस जाणे चाखीओ, ते हुओ शिव सुख साखीओ ॥ 3 ॥

धरणीधर राय पद्मावती, प्रभु पार्श्वतणा गुण गावती,
सहु संघनां संकट चूरती, नयविमलनां वांछित पूरती ॥ 4 ॥

३. जिन पूजा विधि

स्नान करने की विधि

* पूर्व दिशा की तरफ मुख रखकर थोड़े पानी से स्नान करें । यदि साबुन बिना न चले तो जिसमें चरबी न हो, ऐसे साबुन से स्नान करना चाहिये ।
* गीजर के पानी का उपयोग नहीं करना (अनछाना होने से) । यदि गरम पानी से स्नान करना हो तो पानी उतना ही गरम करना चाहिये, जिससे गरम पानी में ठंडा पानी मिलाना नहीं पड़े ।
* पानी 48 मिनट में सूख जाए ऐसी जगह पर बैठकर स्नान करना अथवा परात में बैठकर स्नान करें, फिर पानी को सूखी जगह पर परठ देना ।
* उसके बाद उत्तर दिशा में मुख रखकर पूजा के वस्त्र पहनना ।
* घर में एम.सी. (अंतराय) का पालन चुस्त रूप से करना चाहिये ।

पूजा के वस्त्र पहनने की विधि

* पुरुष खेस इस रीति से पहने जिससे दाहिना कंधा खुला रहें ।
* धोती और खेस के अतिरिक्त अधिक कपड़ों का उपयोग न करें । स्त्रियाँ मर्यादा युक्त वस्त्रों का (यथोचित) उपयोग करें ।
* पुरुष मुखाग्र बांधने के लिये रूमाल का उपयोग न करें । खेस से ही नासिका सहित मुखकोश बांधे।
* स्त्रियाँ रूमाल से मुखाग्र को बांधे । रूमाल, स्कार्फ जितना बड़ा और चौरस होना चाहिये ।
* पूजा के वस्त्रों का उपयोग पसीना पोंछने या नाक पोंछने जैसे कार्यों में न करें ।
* पूजा के वस्त्रों को स्वच्छ रखें ।
* अगर घर दूर हो तो, पूजा के बाद व्याख्यान सुनने के लिए अन्य कपडे साथ में लेकर आना चाहिए । पूजा के वस्त्र बदल कर व्याख्यान सुनना चाहिए ।

* अन्य प्रसंगों में पूजा के वस्त्रों को नहीं पहने । सामायिक में पूजा के वस्त्रों का प्रयोग अयोग्य है।
* पूजा के वस्त्रों को पहनकर कुछ खा-पी नहीं सकते, यदि भूल से कुछ खाया-पीया हो तो फिर उस वस्त्रों का पूजा के लिये उपयोग न करें ।
* घर से स्कूटर या वाहनों पर बैठकर, चप्पल या जूते पहनकर मंदिर में पूजा करने जाना वह उचित नही है ।
* पूजा के वस्त्र उत्तम किस्म (रेशमी वगैरह) के हों । रेशमी कपडे गंदगी को जल्दी नहीं पकड़ते। साथ ही भाववर्धक होने से पूजा के लिये उत्तम गिने हैं । इसी हेतु अंजनशलाका के समय आचार्य भगवंत के लिये भी रेशमी वस्त्र परिधान का विधान है । घर में M.C. में बच्चों को भी रेशमी वस्त्र पहनाते थे ।
* घर, गाड़ी, तिजोरी वगैरह की चाबियों को साथ में रखकर पूजा नहीं करनी चाहिये । पूजा करते समय घड़ी नहीं पहननी चाहिये ।
* पूजा के वस्त्रों में कोई छिद्र अथवा फटे हुए नहीं होने चाहिये ।

पैरे धोने की विधि

* छाने हुए पानी से, भरी बाल्टी में से, ग्लास से आवश्यकतानुसार पानी लेकर पाँव धोंवे । नल से सीधे पाँव नहीं धोंवे ।

प्रथम निसीहि बोलने की विधि

* मंदिर के मुख्य द्वार पर (एक या) तीन बार **निसीहि** बोलकर प्रवेश करें । निसीहि अर्थात् निषेध यानि संसार से संबंधित समस्त बातों को पूरी तरह छोड़ देना ।

मंदिरजी में प्रवेश करने की विधि

* प्रभु पर दृष्टि पड़ते ही दोनों हाथ जोड़कर मस्तक से लगाकर सिर झुकाकर धीमी आवाज में **'नमो जिणाणं'** बोलते हुए **अंजलिबद्ध प्रणाम** करना ।
* विद्यार्थी अपना बस्ता तथा अन्य व्यक्तिगत खाने-पीने की चीजें बाहर रखकर फिर मंदिरजी में प्रवेश करे ।
* जिनमंदिर में और गंभारे में जिमना (दाहिना) पैर रखते हुए प्रवेश करें ।
* जूते के साथ-साथ पैर के **मौजे** भी उतार कर प्रवेश करें ।

प्रदक्षिणा देने की विधि

* हाथ में पूजा की सामग्री लेकर नीचे देखकर जयणापूर्वक धीमी गति से प्रदक्षिणा लगाएँ ।
* मधुर स्वर में प्रदक्षिणा के दोहे बोलते हुए प्रदक्षिणा दें ।
* दोनो हाथ जोडकर प्रदक्षिणा दें ।
* प्रदक्षिणा नहीं देना या एक ही प्रदक्षिणा देनी या पूजा करने के बाद प्रदक्षिणा देनी, यह अविधि है।

निम्न चार भावना से प्रदक्षिणा करें

* प्रभु को प्रदक्षिणा देने से मेरे भव भ्रमण मिट जायें ।
* ज्ञान–दर्शन–चारित्र रूप रत्नत्रयी की प्राप्ति हो ।
* मंगलमूर्ति के दर्शन होते ही समवसरण में स्थित चतुर्मुखी प्रभु याद करें ।
* इलि–भमरी न्याय से मैं भी प्रभु तुल्य बन जाऊँ । विशेष : प्रदक्षिणा देते समय मंदिर संबंधि शुद्धि का ध्यान रख सकते हैं । कभी जरुरत लगे, तो योग्य व्यवस्था भी कर सकते हैं ।
* प्रदक्षिणा के समय केन्द्र में भगवान होते है। अतः ऐसी भावना करें–''प्रभु मेरे जीवन के केन्द्र में भी आप पधारे'' ।

स्तुति बोलने की विधि

* प्रदक्षिणा के बाद किसी को प्रभु दर्शन में अंतराय न पड़े, इसलिये पुरुष प्रभु के दाहिनी तरफ (जिमनी) एवं स्त्री बांयी तरफ (डाबी) खड़े होकर स्तुति करें ।
* हाथ जोड़कर कमर से नीचे तक झुककर प्रभुजी को प्रणाम करें, ऐसा करने से **अर्धावनत प्रणाम** की विधि पूर्ण हो जाती है ।

मुख कोश बांधने की विधि

* अष्टपड वाला मुखकोश बांधे ।

दुपट्टे की आठ तहें करके मुखकोश बांधें।

चंदन घिसने की विधि

- चंदन अपने स्वयं के हाथ से ही घिसना चाहिये ।
- मुखकोश बांधकर ही चंदन घिसना चाहिये ।
- घीसे हुए चंदन से थोडा भाग हाथ में लेकर अपनी ललाट पर तिलक करें।

तिलक करने की विधि

- पुरुष ज्योति आकार में एवं स्त्रियाँ गोल तिलक करें ।
- प्रभु की दृष्टि नहीं पडे ऐसे स्थान पर पद्मासन में बैठकर तिलक करें ।
- प्रभु आज्ञा का पालना के कारण से ही कही कही पर प्रभु के समक्ष भी तिलक करना देखा जाता है।
- दर्पण का उपयोग तैयार होने के लिये नहीं करें ।
- ''मैं भगवान की आज्ञा शिरोधार्य करता हूँ'' इस भावना के साथ तिलक करें।

पक्षाल तैयार करने की विधि

- दूध पर्याप्त मात्रा में मिलायें ।
- पक्षाल पंचामृत – पानी, शक्कर, दही, दूध, घी को मिलाकर बनायें ।
- पक्षाल से भरे बर्तन को ढक कर रखें ।

प्रश्न : पूजा की सामग्री तैयार करते समय किस बात का ध्यान रखना चाहिए?

उत्तरः * खाली थाली, कटोरी, अपने दोनों हाथ, पूजा का रुमाल वगैरह उपकरण धूपाना चाहिए। लेकिन केसर या फूल को धूपाने की जरुरत नहीं है ।

- सर्व प्रथम मंदिर में, प्रदक्षिणा में, केसर आदि घिसने के स्थान पर, वगैरह सर्व स्थान पर खूब जयणा से वासी काजा निकालें, बाल्टी वगैरह को पूंजणी से पूंजकर उसमें पक्षाल का पानी वगैरह भरें ।
- पानी भी बरसात का या कूएँ का, छानकर भरें एवँ जीवाणी का जतन करें ।
- केसर घिसते समय केसर की डिब्बी को गीले हाथ से स्पर्श न करे । गीलेपन से केसर में उसी वर्णवाले सूक्ष्म जीव उत्पन्न हो जाते है एवं उपयोग न रहने पर केसर के साथ उन जीवों का भी कच्चरघाण हो जाता है ।

* मंदिर में चींटी वगैरह जीव उत्पन्न न हों इसलिए पूरी सावधानी रखें । विधि के बाद फल, नैवेद्य, चावल, पाटला आदि अपने हाथ से ही व्यवस्थित स्थान पर रख दें । यानि यहाँ–वहाँ न गिरे इसका ध्यान रखें ।
* अभिषेक का पानी वगैरह भी पैर में न आवे और गटर में न जाये, इस तरह परठने की व्यवस्था रखें । साफ–सफाई भी पूरी रखें ।

गंभारे में प्रवेश करने की विधि

* दूसरी बार (एक या) **तीन निसीहि** बोल कर, मौन धारण करके, मुख कोश बांधकर गर्भगृह में प्रवेश करें ।
* गर्भगृह में मौन धारण करके पूजा करें। मुखकोश बांधने के बाद हाथ धोए और गर्भगृह में प्रवेश करते वक्त दहलीज पर स्पर्श न करें।

प्रभु के उपर का निर्माल्य दूर करने की विधि

* सर्व प्रथम निर्माल्य (प्रभुजी के अंग पर के बासी फूल चंदन वगैरह) थाली में लेकर चींटी जैसे सूक्ष्म जीवों का निरीक्षण कर मोरपंखी से दूर कर दीजिए ।
* एक शुद्ध वस्त्र को पानी में भिगोकर उससे बरक, बादला, वगैरह दूर करें, अत्यन्त आवश्यक हो तो ही वालाकूंची का उपयोग करें सावधानी के साथ चंदन वगैरह दूर करें ।

जल पूजा (अभिषेक) करने की विधि

* मुख कोश से नाक और मुख दोनो ढंकना चाहिए ।
* सर्व प्रथम पंचामृत से अभिषेक करके उसके बाद ही शुद्ध जल से अभिषेक करें ।
* दोनों हाथों से कलश धारण करके प्रभुजी के मस्तक पर अभिषेक करें, पर नवांगी पूजा की तरह – हरेक अंग पर अभिषेक न करें ।
* प्रभु को कलश का स्पर्श न हो एवं कलश हाथ से न गिर जाय उसका खास ध्यान रखें ।
* अभिषेक का जल नीचे नहीं गिरे तथा पैरों में नहीं आवे, इसका खास ध्यान रखें ।
* पूजा करते समय अपने वस्त्र प्रभुजी को स्पर्श न करें, उसका खास ध्यान रखें ।

अंग लूंछन की विधि

* मलमल के कपड़े के उचित प्रमाण के तीन अंग लूछणे रखें ।
* मंदिर में हर महीने अंगलूंछन बदलने की व्यवस्था करें ।
* मौन धारण करके अंगलूछणा करें एवं प्रतिदिन अंगलूछणे को साफ करें ।
* देवी–देवताओं के उपयोग में लिये गये अंगलूछणाओं का प्रभुजी के लिये उपयोग न करें ।
* पाट पोंछने तथा अंग पोंछने के लिये अलग–अलग कपड़े रखे । उनको साथ में ना धोये एवं अंगूलछने जमीन पर न रखे ।

प्रभुजी को विलेपन करने की विधि

- ❊ बरास जैसे उत्तम द्रव्यों से विलेपन करें । विलेपन करके कपड़े से पोंछना नहीं ।
- ❊ दाहिने हाथ की पाँचों ऊँगलियों का उपयोग करते हुए पूरे शरीर पर विलेपन करें ।
- ❊ प्रभुजी को नाखून का स्पर्श न हो, इसका ध्यान रखें ।
- ❊ प्रभुजी के सभी अंग जैसे हृदय, छाती, पैर, हाथ आदि पर विलेपन करें ।

प्रभु की केशरपूजा करने की विधि

- ❊ पूजा करने की ऊँगली के अलावा किसी भी अंग का प्रभुजी को स्पर्श न हो, इसका विशेष ध्यान रखना ।
- ❊ टाइपिस्ट की तरह धड़ाधड़, फटाफट पूजा नहीं करनी चाहिये ।
- ❊ लंछन, हथेली एवं श्रीवत्स की पूजा नहीं करना ।
- ❊ प्रभु के नव अंग की तेरह या नव तिलक से पूजा की जाती है । प्रत्येक तिलक के समय अंगुली में केसर लेकर पूजा करना उचित है । तेरह बार अंगुली में केसर लेकर तिलक करने से अंग 9 के 13 नहीं हो जाते । अंग तो 9 ही गिने जायेंगे । अंग पूजा करते समय दोहे मन में बोलें । गंभारे के बाहर खड़े रहने वाले जोर से भी दोहे बोल सकते हैं ।

प्रश्न: फणा की पूजा कैसे करनी चाहिये ?

उत्तर: फणा की पूजा अलग से करनी योग्य नहीं है । फणा प्रभु की शोभा रूप होने से प्रभु का अंग समझकर शिखा का तिलक करते समय अनामिका से ही फणा के ऊपर (अग्रभाग में नहीं) तिलक कर सकते हैं । परंतु नव अंग की पूजा पूरी होने के बाद धरणेन्द्र देव मानकर अंगूठे से फणा की पूजा करना अनुचित है । (नोंट : फणा की पूजा आवश्यक नहीं है ।)

प्रश्न: लंछन क्या है? उसकी पूजा करनी चाहिये या नहीं ?

उत्तर: जीवंत भगवान की दाहिनी जंघा पर रोमराजी अथवा रेखाओं से लंछन का आकार बना होता है। **यह किस प्रभुजी की प्रतिमा है?**, यह जानने के लिये प्रतिमा के नीचे उन प्रभु का लंछन बनाया जाता है । इसीलिये इसकी पूजा नहीं होती । (पूजा करने से लंछन अस्पष्ट हो जाता है।)

प्रश्न: केशर पूजा करते हुए अष्ट मंगल की पाटली की पूजा कर सकते है या नहीं ?

उत्तर: अष्ट मंगल की पाटली प्रभु के आगे मंगल रूप में रखी जाती है, उसकी पूजा नहीं करना । लेकिन चंदन या चावल से आलेखन करना (प्रभु के सामने धरना) चाहिये । (आलेखन यानि ड्रा (Draw) करना, लीपना, पोतना आदि)

प्रश्न: सिद्धचक्रजी की पूजा के बाद प्रभु की पूजा कर सकते हैं?

उत्तर: सिद्धचक्रजी की पूजा के बाद प्रभु पूजा कर सकते हैं । क्योंकि नवपदजी में आचार्यजी,

उपाध्यायजी एवं साधु महात्मा जो बताये गये हैं वे कोई व्यक्ति विशेष न होकर गुण रूप में है। अत: कोई बाधा नहीं है।

प्रश्न: गौतमस्वामीजी वगैरह गणधर की प्रतिमा की पूजा करने के बाद प्रभु पूजा कर सकते हैं?

उत्तर: गौतमस्वामी एवं पुण्डरिक गणधर वगैरह की प्रतिमा यदि पर्यंकासन (सिद्ध मुद्रा) में हो तो उसकी पूजा करने के बाद प्रभुजी की पूजा कर सकते हैं, परंतु यदि गुरु मुद्रा (केवलज्ञानी की अपेक्षा से) में हो तो उनकी पूजा प्रभु पूजा करने के बाद में ही करनी चाहिये।

प्रश्न: शासन के देवी-देवता की पूजा कैसे करनी चाहिये ?

उत्तर: शासन के देवी-देवता सम्यकत्वधारी एवं प्रभु के पुजारी होने से अपने साधर्मिक हैं। अत: अंगूठे से मस्तक पर तिलक करना चाहिये तथा **प्रणाम** कहना चाहिये। परन्तु उनके सामने अक्षत आदि से साथीया या त्रिशूल नहीं बनाना चाहिये एवं खमासमण भी नहीं देना चाहिए।

प्रश्न: केसर कितनी कटोरी में लेना चाहिये? एवं उसका उपयोग कैसे करना चाहिये?

उत्तर: केसर अलग-अलग कटोरियों में लेने की कोई विशेष जरूरत नहीं है। एक ही कटोरी से क्रमश: परमात्मा, सिद्धचक्रजी, गणधर भगवंत, गुरु भगवंत एवं अंत में शासन देवी-देवता की पूजा कर सकते हैं। यदि मूलनायक भगवान की जल पूजा बाकी हो, तो अन्य भगवान की पूजा पहले कर सकते हैं। यदि मूलनायक भगवान की जल पूजा बाकी हो एवं अन्य भगवान की पूजा पहले कर लेनी हो तो बहुमानार्थ अलग से थोड़ा केसर रख सकते हैं। पहले से ही केसर इतना ही ले कि अंत में संघ का माल वेस्ट न हो। तथा केसर की कटोरी, थाली अपने हाथ से साफ धोकर व्यवस्थित स्थान पर रखनी चाहिये। क्योंकि प्रभु मंदिर कोई संघ अथवा पुजारी का हीं नहीं अपना भी है। हाथ एकदम साफ धोएँ, ताकि उसमें केसर रह न पाए। अन्यथा केसर रह जाने पर खाते समय पेट में जाने से देव-द्रव्य भक्षण का दोष लगता है।

पुष्पपूजा करने की विधि

* सुगंधित, अच्छे, अखंड तथा ताजे फूल ही प्रभुजी को चढावें, जैसे गुलाब, चंपा, मोगरा आदि।
* नीचे गिरे हुए या पाँव तले आये हुए या पिछले दिन चढाये हुए पुष्प प्रभुजी को नहीं चढावे।
* पुष्पों की पंखुडियों को नहीं तोड़े अथवा टूटी हुई पंखुडियों को प्रभुजी को नही चढावे।
* हाथ से गुंथी पुष्पों की माला चढाईये (सूई धागे से गुंथी माला नहीं)।

प्रश्न: पुष्प तो वनस्पतिकाय का प्राणी है। उसमे हमारे जैसा ही जीव है – आत्मा है। वृक्ष पर से उसे चुनने पर पुष्प के जीवन को अवश्य किलामणा (पीड़ा) होती है – पहुँचती है। तो फिर पूजा की प्रवृत्ति में ऐसी हिंसामय पद्धति क्यों अपनाई गयी ? अहिंसा प्रधान शासन में ऐसी हिंसा का विधान क्यों ?

उत्तर: इस प्रश्न को गंभीरतापूर्वक सोचे और सोचने से सुंदर व तार्किक उत्तर प्राप्त होगा ।

प्रथम बात तो यह है कि पुष्प को परमात्मा के चरणों में समर्पित करने के लिये नहीं चुने तो, क्या पुष्प को कोई नहीं चुनता ?

नहीं, पुष्प तो माली की आजीविका का साधन है, अत: अपनी आजीविका को निभाने के लिये फूलों को अवश्य चुनेगा ही । अब चुने हुए उन फूलों को माली दूसरों को बेचेगा ही, उसमें भी यदि किसी कामी व्यक्ति ने खरीदा तो उसे वह अपनी पत्नी या प्रेमिका को अर्पित करेगा और वह स्त्री की वेणी या बालों में गूंथा जायेगा, जिससे उस पुष्प को पीड़ा ज्यादा होगी ही..

मान लो कि, माली ने फूल को चुना नहीं और वह वृक्ष पर ही रहा, तो भी पुष्प का जीवन कितने क्षणों का? कितना सुरक्षित? किसी पक्षी, प्राणी या पशु की नजर में आने पर उसकी हालत क्या होगी? फूल उस जानवर के जबड़े में चबा ही जायेगा । उससे फूल को कम पीड़ा होगी क्या?

ना, नहीं... नहीं.. इस प्रकार फूल को बेचे तो भी किलामणा होगी, चुने नहीं तो भी किलामणा बनी रहेगी । उसके बजाय परमात्मा के चरणों में समर्पित करने से वह पुष्प अवश्य सुरक्षित बना रहता है। परमात्मा के चरणों में पुष्प समर्पित होने पर उसका जीवन सुरक्षित हो जाता है ।

जो पुष्प, प्रभु की पूजा में उपयुक्त होते हैं, वे अवश्य 'भव्य' होते हैं, अत: ऐसे पुष्पों को परमात्मा की प्रतिमा पर चढे हुए देखकर, ऐसी भावना भावित करें कि 'अहो!, एकेन्द्रियता में रही यह आत्मा कितनी सुयोग्य है, कितनी भाग्यशाली है कि उसे परमात्मा के चरणों में स्थान प्राप्त हुआ । अर्थात् पुष्प पूजा में हिंसा या पुष्प के आत्मा को किलामणा होने की बात या तर्क तो सरासर व्यर्थ है क्योंकि फूल का जीव फूल में रह जाता है और वृक्ष का जीव वृक्ष में रह जाता है ।

धूप पूजा करने की विधि

* मंदिर की धूपदानी में अगरबत्तियाँ चालू हों तो नई अगरबत्ती नहीं लगावें । (स्वयं के घर से लाई गयी अगरबत्ती प्रकट कर सकते हैं)
* अंग पूजा के कार्य पूर्ण होने के बाद धूप पूजा करें । धूप को हाथ में रखकर प्रदक्षिणा नहीं देना। स्तुति आदि न बोलें ।
* प्रभुजी की बांयी तरफ खड़े होकर धूप पूजा करना।

धूप में से निकलने वाला धुआँ जैसे उर्ध्व दिशा की ओर प्रवाहित रहता है, उसी प्रकार परमात्मा के प्रति मेरी भक्तिभावना दिन–ब–दिन बढ़ती रहे और ऊँचाई पर पहुँचे । मेरी आत्मा का स्वभाव भी उर्ध्वगामी है.. ऐसे मेरे स्वभाव को मैं यथाशीघ्र प्राप्त करूँ ।

दीपक द्वारा पूजन की विधि

* दीपक को थाली में रखकर दोनों हाथों से घड़ी के कांटों की दिशा की तरह फिराना तथा दीपक पूजा का दुहा बोलना ।
* स्वयं के घर से दीपक लावें ।
* परमात्मा के दांयी ओर खड़े रहकर दीपक पूजा करना ।

दीपक को परमात्मा की दाहिनी ओर स्थापित करें । दीपक को कभी भी खुला न रखें । उसे फानस में रखे या छिद्रवाले ढक्कन से ढक दें, जिससे उसके प्रकाश से आकर्षित होकर क्षुद्र जीव जन्तु दीपक की ज्योत में गिरकर मरे नहीं ।

दर्पण दर्शन की विधि

हृदय स्थान पर दर्पण रखकर, उसमें प्रभु के प्रतिबिंब को देखकर मानो कि अपने हृदय में परमात्मा है ऐसी भावना से अपने स्वयं को सिद्धस्वरूपी महसूस करें ।

दर्पण दर्शन का दोहा : **प्रभु दर्शन करवा भणी, दर्पण पूजा विशाल ।**
आत्मा दर्पणथी जुअे, दर्शन होय तत्काल ।।

परमात्मा के सन्मुख दर्पण धरते हुए यह विचार करना है कि– हे स्वच्छदर्शन ! जब भी देखता हुँ, तब जैसा हुँ, वैसा दिखायी देता हुँ । प्रभु आप भी एकदम निर्मल व स्वच्छ दर्पण जैसे है । जब मैं आपके सामने देखता हुँ तब मैं भीतर से जैसा हुँ, वैसा दिखता हुँ । आदर्श ! आपको देखने के बाद मुझे ऐसा लगता है कि मेरी आत्मा चारों ओर से कर्म के कीचड़ से गंदी बनी हुई है । हे विमलदर्शन ! कृपा का ऐसा स्रोत बरसाईए कि जिसमें मेरे कर्म का कीचड़ धुल जाय व मेरी आत्मा स्वच्छ बन जाय। प्रभु ! आप इस दर्पण में जैसे दिखते है, वैसे ही सदा मेरे दिल के दर्पण में दिखते रहियेगा । प्रभु आपके आगे दर्पण धरकर मैं अपना दर्प–अभिलाषा भी आपको अर्पण करता हुँ ।

पंखा पूजा करने की विधि

पंखा पूजा का दोहा : **अग्निकोणे एक यौवना रे, रयणमय पंखो हाथ ।**
चलत शिबिका गावती रे, सर्व साहेली साथ ।।

हे परमात्मन् ! जब आप सर्वविरति जीवन स्वीकारने के लिये शिबिका में बैठकर वरघोड़े में जा रहे थे, तब आपके इस प्रव्रज्या–दीक्षा की अनुमोदना करती नवयौवना शिबिका में ईशान कोने में बैठकर आपको पंखा डाल रही थी, उस प्रसंग को देखने का या अनुमोदना करने का अवसर तो मुझे नहीं मिला, परंतु आज यह पंखा डालते समय आपकी उस दीक्षा यात्रा की अनुमोदना करते हुए आपसे यह विनंति करता हूँ कि मेरे जीवन में भी दीक्षा का योग प्राप्त हो ।

* सेवक भाव से प्रभुजी को पंखा डालना चाहिये ।

चामर नृत्य करने की विधि

- ✲ प्रभु भवित में लीन होकर, प्रभु के सेवक के रूप में प्रसन्नता व्यक्त करने हेतु चामर वींजना एक श्रेष्ठ उपाय है । ऐसा समझकर शरम रखे बिना अवश्य ही चामर नृत्य करना चाहिये ।
- ✲ स्त्रियों को मर्यादा में रहकर नृत्य करना चाहिये ।

चामर पूजा का दोहा: **बे बाजु चामर ढाले, एक आगल वज्र उछाले ।**
जई मेरु धरी उत्संगे, इन्द्र चोसठ मलिया रंगे ।।

अक्षत पूजा की विधि

- ✲ कंकर, चीटी तथा जीवाणु रहित दोनों तरफ धार वाले उत्तम प्रकार के अखंडित चावलों का उपयोग करना चाहिये ।
- ✲ अक्षत पूजा करते समय इरियावहि शुरु न करें । क्योंकि अक्षत–नैवेद्य एवं फल ये तीनों द्रव्य पूजा है... इरियावहि... चैत्यवंदन आदि भाव–पूजा है । अत: दोनों एक साथ करना अविधि है।
- ✲ सर्व प्रथम स्वस्तिक, तीन ढगली और बाद में सिद्धशिला इस क्रम बद्ध रीति से पूजा करें ।
- ✲ मन्दिर में से निकलने से पहले अक्षत्, फल, नेवैद्य तथा पाटला योग्य स्थान पर रख देवें ।

नैवेद्य पूजा की विधि :

- ✲ श्रेष्ठ द्रव्यो द्वारा घर में बनाई गयी रसोई, मिठाई या खड़ी शक्कर से नैवेद्य पूजा करें ।
- ✲ बाजार की मिठाई, पिपरमेंट, चॉकलेट जैसी अभक्ष्य वस्तुओं का उपयोग नहीं करें ।
- ✲ नैवेद्य स्वस्तिक के उपर चढाइये ।

प्रश्न: नैवेद्य पूजा क्यों करते हैं?

उत्तर: आहार संज्ञा एवं रस लालसा को तोड़ने के लिये प्रभु के सामने मिठाई से भरा आहार का थाल धरकर नैवेद्य पूजा करते हैं ।

फल पूजा करने की विधि :

- ✲ उत्तम तथा ऋतु के अनुसार श्रेष्ठ फल चढावें ।
- ✲ श्रीफल को फल के रूप में चढाया जा सकता है ।
- ✲ सड़े, गले, उतरे हुए फल, बोर, जामुन, जामफल (पेरु), सीताफल जैसे तुच्छ फल चढाने लायक नहीं है ।
- ✲ फलों को सिद्ध शिला के ऊपर चढाइये ।

4. ज्ञान

A. होली इज पाप की झोली

होली पर्व अपने जैनों का पर्व नहीं है । अत: अपने समझदार अच्छे बच्चों को होली नहीं खेलनी चाहिये, फिर भी खेलते हैं तो भयंकर जीवहिंसा का पाप लगता है ।

होली में आग जलाने में कई सूक्ष्म जीव मर जाते हैं जिनकी हिंसा का पाप अपने को लगता है और नरक में वेदना सहन करनी पडती है ।

धूलेटी में पानी छिडकने, रंग उडाने-रंग डालने में 50 उपवास की आलोचना (दंड) आती है। इस पर से अनुमान लगा दें कि होली जलाने व खेलने में कितना भारी दोष लगता है ।

गाली गोली जैसा कार्य करती है

गाली देने में भी भयंकर पाप लगता है, **अश्लीलभाषणेन हि दुर्गन्धिनी मुखानि भवन्ति पापहेतुत्वात्** अर्थात् अश्लील-वासनामय गंदी गालियाँ बोलने से या ऐसी बातें करने से अपना मुख दुर्गंध वाला होता है, क्योंकि उसमें से पाप की प्रेरणा मिलती है, जब कि पवित्र बातों से अपना मुख सुगंधित हो जाता है, क्योंकि उनसे धर्म के लिए प्रेरणा मिलती है, मुँह सुगंधित करने के लिए सुगंधित वस्तु की आवश्यकता पडती है, जब की गाली दुर्गंधमयी वस्तु है तो आप ही कहो कि गाली बोलने से मुख दुर्गंध वाला होगा या सुगंध वाला ?

हितोपदेश में एक सुन्दर बात लिखी हुई है:- **गाली देने वाले को गाली देना**-इस बात को भले ही न्याय मानते हो, परन्तु मेरी मान्यता है कि गाली सुनकर शांति (धैर्य) रखने वाला व्यक्ति न्यायाधीश (जज) की अपेक्षा से भी अधिक सुंदर रीति से दंड देने वाला होता है, क्योंकि गाली देने वाला उससे अधिक लज्जित होकर पश्चाताप करता है । क्रोध के सामने क्रोध, गाली का उत्तर गाली देने में दोनों ही पक्ष की समान कीमत होती है । दुर्जन अपनी दुर्जनता बताए, तब सज्जन अपनी सज्जनता क्यो नहीं बताए? अत: आप कभी भी गाली आदि अपशब्द न बोलें । शास्त्र में भी वर्णन है कि आप किसी को एक गाली देते हो तो 15 उपवास की आलोचना आती है।

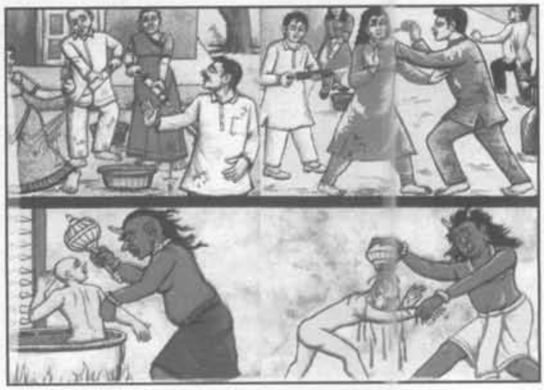

होली का व्रत भी नहीं करना चाहिए। होली में किस दोष से कितना दंड और कितना प्रायश्चित आता है उसका शास्त्र में निम्न प्रकार से वर्णन है:-

होली में गुलाल उडाने से – 10 उपवास जितना प्रायश्चित्त आता है।
पानी का एक घडा डालने से– 10 उपवास जितना प्रायश्चित्त आता है।
होली में कंडा डालें तो – 25 उपवास जितना प्रायश्चित्त आता है।
होली में गाली बोले तो – 15 उपवास जितना प्रायश्चित्त आता है।
असभ्य गीत गाँए तो – 150 उपवास जितना प्रायश्चित्त आता है।
वाद्ययंत्र–नगारे बजाएँ तो – 70 उपवास जितना प्रायश्चित्त आता है।
लकडे डालें तो – 20 उपवास जितना प्रायश्चित्त आता है।
हार डालें तो – 100 बार उसे जलकर मरना पडता है।
श्रीफल डालें तो – 1000 बार उसे जलकर मरना पडता है।
सुपारी डालें तो – 50 बार उसे जलकर मरना पडता है।
धूल डालें तो – 25 बार उसे जलकर मरना पडता है।
खड्डा खोदें तो – 100 बार उसे जलकर मरना पडता है।
होली सुलगाएँ तो – 1000 बार उसे चांडाल के कुल में जन्म लेना पडता है।
होली का व्रत करें तो – 1000 बार म्लेच्छ कुल में जन्म लेना पडता है (होली पर्व कथा में से)

इसे पढकर बच्चों आप लोग दृढ निश्चय कर लेना कि, अब होली जलाने का, धूलेटी खेलने (रंग डालना) आदि का कार्य कभी भी नहीं करेंगे। किसी को गाली भी नहीं देंगे। बराबर है न?

B. दिवाली को होली बना दी...

यह कैसी दिवाली? पटाखों के पाप से होती है जीवों की होली! पटाखों से होती हुई हिंसा, अनर्थ दंड अर्थात् बिना कारण बँधने वाला महापाप है। एक कवि ने कहा है कि–

दिवाली आई, दिवाली आई, करने कर्म की होली,
उसमें पटाखे फोडकर, न भरो पाप की झोली

मम्मी ! मेरे लिये दिवाली पर पटाखे मत लाना ! क्यों ? पटाखों के पैसे मैं अपने पडोसी के पुत्र मोन्टू को देना चाहता हूँ। ऐसा क्यों बेटा ? मोन्टू कहता था कि उसके पापा को व्यापार–धंधा–नौकरी आदि नहीं है तो फिर वह नए वस्त्र कैसे खरीद पाएगा ? अत: पटाखों के पैसे उसे दूँगा तो वह उनसे नए वस्त्र ला देगा । मम्मी ने कहा – यह बात तो अति सुंदर है बेटा ।

बच्चों ! ऐसे बेटे तो दुनिया में कितने होंगे ? आपको भी ऐसे बेटे बनना है। दिवाली पर्व, आराधना का पर्व है, न कि विराधना का ! तो दिवाली और शादी जैसे प्रसंगों पर आतिशबाजी, पटाखे फोडना बंद रखना ।

पटाखें क्यों न फोडे जाएँ ? क्योंकि पटाखे फोडने से छ:काय के जीवों की हिंसा होती है । पटाखों में गंधक (पृथ्वीकाय) का उपयोग होता है । उसे कागज में भरा जाता है । कागज वनस्पति को पानी में भिगोकर बनाया जाता है ।

पटाखे बनाने और फोडने पर उनकी दुर्गन्ध, प्रकाश और आवाज से अग्नि, वायु, छोटे मच्छर आदि जीवों का नाश होता है ।

कबूतर, चिडियाओं के अंडे फूट जाते है, पटाखों की अचानक आवाज होने से पक्षी उड जाते हैं,अंधेरे में इधर उधर टकराते है, दु:खी होते है और इलेक्ट्रिक वायर पर बैठने पर शौक लगते ही गंभीर रुप से घायल होकर मर जाते है ।

बीमार, वृद्ध, छोटे बच्चों को घबराहट होती है, नींद नहीं आती, हृदय गले आदि के रोग होते है।

सुलगता हुआ पटाखा, रुई की जीन अथवा लकडी के गोदाम या गरीबों की झोंपडियों पर गिर पडे, तो आग लग जाती है, लाखों की हानि होती है । हजारों लाखों जीव झूर–झूर कर अकाल मृत्यु के शिकार हो जाते है ।

पटाखे बनाने के कारखानों और फैक्ट्रीयों में कई बार आग लग जाती है जिसमें कई लोग जल मरते है, जिसका पाप पटाखे फोडने वाले को लगता है । कई बार हम स्वयं भी झुलसकर या जलकर मर जाते है । जलने से कभी अपनी आँखे चली जाती है, हाथ–पाँव को हानि पहुँचे तो हम लूले–लंगडे हो जाते है । अपने धन का अपव्यय होता है । अहमदाबाद की एक महिला के पेट में रोकेट घुस गया था और वह महिला बेहोश हो गई थी ।

अमेरिका के केलिफोर्निया राज्य के सांताक्रुज विस्तार के नागरिकों ने अपने विस्तार क्षेत्र को **हेट फ्री जोन** (घृणा विहीन क्षेत्र) बनाने का आन्दोलन शुरु किया । स्थान–स्थान पर बेनर लगाए गए कि घृणा हो ऐसी बेकार वस्तुएँ इस क्षेत्र में लाना प्रतिबन्धित है । हम अंधानुकरण करते हैं, तो ऐसा अनुकरण क्यों नहीं करते ?

जैसा बोएँगे वैसा पाएँगे, जैसी करनी वैसी भरनी, अनाज का एक दाना बोने पर सामान्यत: दस गुने मिलते हैं, उसी प्रकार एक जीव को दु:ख देने पर न्यूनतम दस गुना दु:ख सहन करना पडता है।

जैनेत्तर ग्रंथ में तो ऐसी कथा है कि – मार्तंड ऋषि को एक खटमल ने डंक मारा तो, ऋषि ने क्रुद्ध

होकर उस खटमल को मार डाला, जिसके परिणाम में उन ऋषि को जिस प्रकार खटमल को उन्होंने मारा था, वैसी सजा ऋषि को 23 भव तक भुगतनी पडी थी, तो एक जीव की हिंसा से इतनी बडी सजा? तो पटाखे से अनेक जीवों की हिंसा होती है तो पटाखे फोडने वाले को कितनी सजा मिलेगी? इसकी कल्पना करो ।

बच्चों ! आप पटाखे फोडकर प्रसन्न होंगे, परन्तु ज्ञानी भगवंत कहते है कि हँसते हँसते बाँधे हुए कर्म खून के आँसू गिराते हुए रोते-रोते भी नहीं छूटते । ठीक ही कहा है कि **हंसता ते बांध्या करम, रोते नवि छूटे प्राणिया रे ।** उनकी सजा हमें भुगतनी ही पडेगी, क्योंकि कर्म को किसी की शर्म नहीं होती ।

आठ प्रकार के कर्मबंधन:-

पटाखे फोड़ने से नरक में पड़ते दुःख...

आतिशबाजी करने, पटाखे फोडने से आठ प्रकार के अशुभ कर्म बँधते है।

1. पटाखे फूटने पर कागज जलता है, उसके टूकडे पाँवो में आते है, मल-मूत्र में गिरते है, गटर में गिरते है जिसके कारण ज्ञानावरणीय कर्म बँधता है ।
2. हम सर्वज्ञ वीतराग प्रभु की आज्ञा सभी जीवों को दुःख से बचाने की है । पटाखे फोडने से उन जीवों के अंगोपांग टूट जाते है अतः दर्शनावरणीय कर्म का बंध होता है ।
3. जीवों को वेदना होती है, भय लगता है, अतः उससे अशाता वेदनीय कर्म बँधता है ।
4. पटाखे की आवाज से गभराये जीवों को दुःखी देखकर हम नाचते-कूदते और आमोद-प्रमोद करते है जिससे मोहनीय कर्म का बंधन होता है ।
5. जीव पटाखों से जल मरते है, झुलसने-जलने से आग लगती है, जिससे अशुभ नाम कर्म बँधता है ।
6. मैंने कितने सारे और कैसे सुंदर पटाखे फोडे ? ऐसा अभिमान करने से नीचगोत्र बँधता है ।
7. पटाखों की आवाज करके जीवों को सोने, खाने-पीने आदि में उन्हें बाधा पहुँचाने से अंतराय कर्म बँधता है ।
8. पटाखे फोडने पर जीवों के अचानक जल मरने से वे जीव अशुभ ध्यान करके प्रायः दुर्गति में जाते है, जिसके हम निमित्त बनते है, अतः उस समय अपना आयुष्य बंधन हो जाए तो दुर्गति का बँधता है ।

पटाखे फोडने से अथवा पटाखे फोडते लोगों को देखकर अनुमोदना प्रशंसा करने से अर्थात् खुश होने से भी अपने कर्म बाँधते है ।

अपने सुख से अन्य को दु:ख हो, अपने आनंद से अन्य को शोक हो, अपने मजे से अन्य की मौत हो।

ऐसा सुख, आनंद, मजा अपने लिये सजा बन जायेगी । अल्पकालीन आनंद दीर्घकालीन दु:खदाता बन जाएगा ।

अत: बच्चों ! दिवाली के पर्व को दया के दीपक से मनाना, आतिशबाजी के खिलवाड से दूर रहना व दूसरों को भी दूर रहने की प्रेरणा करना, क्योंकि पटाखों से उत्सव मनाने से दिवाली अन्य जीवों के लिए होली बनती हो तो ऐसी दिवाली किस काम की? अत: ऐसे हिंसक अनर्थ दंड के पाप अर्थात् अकारण बँधते हुए पाप से दूर ही रहने में फायदा है ।

दिल को प्रकाशित करे, उसका नाम दिवाली
और दिल को जलाए, उसका नाम है होली ।

दिवाली दयापूर्वक मनाओ:-

जहाँ दया वहाँ दिवाली, जहाँ हिंसा वहाँ होली ।

पटाखे न फोडने से बचाये हुए पैसों से देवगुरु की भक्ति के अतिरिक्त दया आदि के कार्य किये जा सकते है, साधर्मिक की सेवा हो सकती है, रोगी जनों को दवाई दिलवा सकते है, पांजरापोल-पशुशाला में सहायता की जा सकती है, क्योंकि जीव दया भी एक महान् धर्म है । अभयदान महालाभकारी है, जबकि पटाखे फोडना महापाप है ।

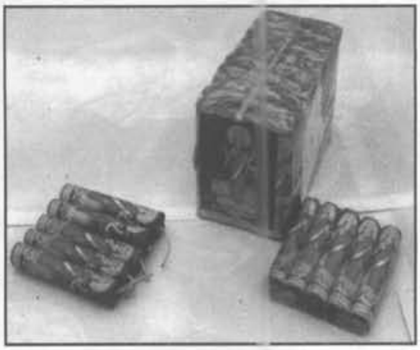

सारे भारत देश में कितने करोडो-अरबों रुपयों के पटाखे फूटते होंगे? शादी-ब्याह प्रसंगों पर भी कितने रुपये पटाखे फोडने में व्यर्थ खर्च होते है, उसके बजाय यदि यही अरबों रुपये सन्मार्ग पर खर्च करके सदुपयोग किये जाए तो कई लोग लाभान्वित हो सकते है । पटाखों का पैसा आग में राख हो गया और जीवों के लिए त्रास रुप बना । इसीलिए एक कवि ने कहा है कि - **छोटे बडे बालकों, पटाखे मत फोडना, पटाखों में पाप है, जीव जंतु को त्रास है ।।**

C. लक्ष्मी-सरस्वती का अपमान

जैसे हमें जीना पंसद है, उसी प्रकार अन्य जीवों को भी जीना पसंद है, मरना किसी को भी पसंद नहीं है । जैसे हमें दु:ख अच्छा नहीं लगता, सुख प्रिय लगता है, वैसे ही अन्य जीवों को भी दु:ख प्रिय नहीं लगता, उन्हें भी सुख ही प्रिय लगता है ।

मान लो कि आपकी पिटाई करके अथवा आपको दु:खी करके अन्य बालक हँसे, आनंद प्राप्त करें तो आपको अच्छा लगेगा क्या ? बिल्कुल ही नहीं, तो फिर अन्य अनेक जीव मरें, तडपें, दु:खी हो अथवा व्यथित हों, उसमें आप आनंदित हों यह आप जैसे जैन कुल में उत्पन्न और दया प्रेमी को कैसे

पसंद आ सकता है? कदापि पसंद न आना चाहिए । बच्चों !

याद रखो कि अन्य जीवों को सुख देने से ही हमें सुख मिलता है और दूसरों को दुख देने से हमें भी दु:ख मिलता है और अनेक बार मरना पडता है ।

अपने छोटे भाई की रक्षा करना जैसे हमारा कर्तव्य है, वैसे ही चींटी मकोडे आदि अपने से छोटे, निर्बल जीवों की रक्षा करना भी अपना कर्तव्य है ।

लक्ष्मी छाप पटाखें:– कई पटाखों पर लक्ष्मी देवी के फोटो छपे हुए आते हैं । वह पटाखा फोडते समय लक्ष्मीदेवी का फोटो जलता है, उसके फुरचे उडते है, जिससे लक्ष्मीदेवी का भयंकर अपमान होता है । इस अपमान से कदाचित् इसी भव में निर्धनता, रोडपतित्व–भिखारीपन मिलता है । एक तरफ दुकान में तो लक्ष्मी देवी की पूजा करते है और दूसरी ओर पूजा करके बाहर आकर उसी लक्ष्मी देवी का दहन करते है... यह कैसी पूजा ?

दूसरी बात यह है, कि कागज – अक्षर जलाने से सरस्वती देवी का भी अपमान होता है, उससे इस भव में अपनी बुद्धि मंद हो जाती है अथवा कोई मानसिक रोग हो सकता है, साथ ही अनेक जीवों की हिंसा भी होती है । अत: आतिशबाजी करना, पटाखे फोडना अर्थात् लक्ष्मीदेवी और सरस्वती देवी का घोर अपमान है, तथा यह घर घर में चलता हुआ जीव हिंसा का कत्लखाना है ।

पटाखों से प्रदूषण बहुत होता है । उसके विषाक्त धुएँ से फेंफडे बिगडते है, लोगों को दमा, खांसी, पेट के रोग आदि होते है । एक बार दिल्ली के मुख्यमंत्री ने पटाखे न फोडने की अपील की थी, क्योंकि उसके धुएँ से भारी प्रदूषण होता है ।

बच्चों ! पटाखे मत फोडो, क्योंकि **पटाखों में आग है, जीवों की हिंसा और धन का विनाश है, पटाखों के त्याग में जीवदया का लाभ है, अभयदान है, पैसों का बचाव है ।**

दयालु बालकों ! इसीलिये अपने भगवान, अपने गुरु म.सा. और अपने माता–पिता हमारे स्वयं के हितार्थ ही हमें पटाखें फोडने का निषेध करते है । तो अब आप भी अपना हित चाहते हों तो गुरु भगवंत अथवा पाठशाला के शिक्षक के पास **पटाखे न फोडने** की प्रतिज्ञा आज ही ले लेना और लेने के बाद उसका अच्छी तरह से पालन करना तथा अभयदान का लाभ लेना ।

5. नवपद

प्रश्न: नवकार मंत्र के पाँच पद से पाँच परमेष्ठियों को वंदन होता है। अब छट्ठे पद में किसे नमस्कार किया जाता है ?

उत्तर : जैन शासन में तत्त्वत्रयी और रत्नत्रयी का बहुत महत्व है। तत्वत्रयी में 1. सुदेव 2. सुगुरु 3. सुधर्म का समावेश होता है। रत्नत्रयी में 1. सम्यग्दर्शन 2. सम्यग्ज्ञान 3. सम्यग्चारित्र का समावेश होता है। नवकार के प्रथम दो पदों में अरिहंत और सिद्ध भगवंतों को नमस्कार किया गया है। जो सुदेव कहलाते है। तीसरे, चौथे और पाँचमें पद में आचार्य, उपाध्याय और साधु भगवंत को नमस्कार किया गया है जो सुगुरु कहलाते है। छट्ठे पद में सुधर्म को नमस्कार किया गया है।

प्रश्न: सुधर्म को नमस्कार करने की बात क्यों कही गई है ?

उत्तर: ललित विस्तरा ग्रंथ में पूज्यपाद सूरि पुरन्दर, 1444 ग्रंथों के रचयिता हरिभद्रसूरीजी बताते है की **धर्मं प्रति मूलभूत वन्दना** अर्थात् धर्म रुपी वृक्ष का मूल है वंदना याने नमस्कार। इस विश्व में सर्वोत्कृष्ट धर्म यदि कोई हो तो वह है विनय धर्म याने नमस्कार, प्रणाम वंदना। जिसके जीवन में नमस्कार रुप धर्म आ गया हो उसके जीवन में अन्य सभी प्रकारके धर्म सहज रुप से आने लगते है। वहीं जिसके जीवन में नमस्कार धर्म नहीं आता उसके जीवन में आए हुए अन्य सभी धर्म निकल जाते है।

हमारी आत्मा के विकास में कोई दोष बाधक है। तो वह है अहंकार। अहंकार सभी दोषों का राजा है। अहंकार अपने साथ अनेक दोषों को लेकर आता है। जिसके जीवन में अहंकार होता है उसके जीवन में क्रोध, ईर्ष्या, निंदा आदि दोष जरुर होंगे। और ये दोष उसकी आत्मा को पतन की ओर ले जाते है।

आदिनाथ प्रभु के पुत्र बाहुबलीजी जो एक वर्ष तक वृक्ष की तरह खडे रहे। ध्यान में लीन रहे। फिर भी केवलज्ञान नहीं मिला। उन्होंने यह विचार किया कि **मैं बडा हूँ और छोटे भाईयों को वंदन कैसे करूं ?** यही अभिमान उनके केवलज्ञान को रोक रहा था। जब उन्होंने अहंकार का त्याग कर छोटे भाईयों को वंदन करने का निश्चय किया और जैसे ही कदम उठाया वैसे ही उन्हें तत्काल केवलज्ञान हो गया। कल्पना कीजिए कि एक छोटे से अहंकार में कितनी शक्ति होगी जिसने केवलज्ञान को प्रगट होने से रोक रखा।

अहंकार, हमारे किसी भी धर्म को सच्चा धर्म बनने नहीं देता। यदि हमें वास्तविक धर्म करना है तो सर्वप्रथम अहंकार का त्याग कर देना चाहिए। यह मैंने किया, मैने इतना दान किया, मैंने इतना तप किया, मैंने इतना पुण्य-सुकृत किया आदि में छिपा अंहकार हमारे तप-जप और दान पर पानी फेर देता है।

इस अहंकार को नाश करता है नमस्कार भाव। जो नमता है उसमें अहंकार टिक नहीं सकता। अत: अहंकार को दूर करने के लिए पंच परमेष्ठियों को बार बार नमस्कार करना चाहिए। यदि आत्मा को परमात्मा बनाने में अहंकार बाधक रुप दोष है तो वह भयंकर दोष माना जाएगा। इस भयंकर दोष को दूर

करने में सहायक ऐसा नमस्कार महान धर्म गिना जाएगा । ऐसे महान नमस्कार धर्म की बात नवकार के छट्ठे पद में आती है ।

प्रश्न: नमस्कार करने से क्या लाभ होता है ?

उत्तर: पंच परमेष्ठि भगवंतों को नमस्कार करने से सभी पापों का नाश हो जाता है । जिस तरह पाप की क्रिया पाप है उसी तरह पाप की क्रिया कराने वाले राग–द्वेष आदि दुर्गुण भी पाप है । मनपसंद वस्तुओं के प्रति राग करना वह पाप है । नापंसद वस्तुओं के प्रति द्वेष भाव या गुस्सा करना वह भी पाप है । इस संसार में सारी समस्याएँ राग–द्वेष के कारण है । यदि राग–द्वेष पूर्णरुप से मिट जाएं तो कहीं भी किसी को भी किसी प्रकार का दु:ख नही रहेगा । सभी वास्तविक अर्थ में सुखी बन जाएंगे ।

यह राग और द्वेष हमें भी सताता है । पंच परमेष्ठि भगवंतों को किया जाने वाला नमस्कार राग–द्वेष को मिटाने का सामर्थ्य रखता है । अत: राग–द्वेष के जंजाल से मुक्त बनने के लिए हमें रोज भावपूर्वक पंच परमेष्ठियों को नमस्कार करना चाहिए ।

पंच परमेष्ठियों को नमस्कार करने से पुण्यानुबंधी पुण्य का बंध होता है । वह पुण्य जब उदय में आता है तो सुख की भरपूर सामग्री तो मिलती ही है लेकिन उस सुख को पचाने की ताकत भी मिलती है । चाहे जैसा सुख हो उसमें आत्मा पागल (लीन) न बने बल्कि विरक्त रहे–यह सामर्थ्य भी यह पुण्य देता है । अहंकारी बनने के बजाए नम्र बनाता है यह पुण्य ।

नमस्कार करने से हमारे पाप और दोष दूर होते है । इससे आत्मा शुद्ध बनती है । और आत्मा मोक्ष की तरफ प्रयाण करती है । नमस्कार धर्म से भावित भक्त के जीवन में यदि पूर्वभव के कोई पापकर्म उदय में आ जाए तो भी वह दु:खों के बीच हताश नहीं होगा । समता और समाधि से वह दु:खों को सहन करने की शक्ति जगाएगा ।

पंच परमेष्ठि भगवंत को यदि व्यक्ति सच्चे हृदय से नमस्कार करता है तो वह व्यक्ति स्वयं परमेष्ठि बन सकता है । हमें परमेष्ठि बनाने वाले इस महामंत्र को प्रथम मंगल कहा गया है ।

प्रश्न: मंगल याने क्या ?

उत्तर: जिसके द्वारा हमारी मुश्किले, तकलीफें और आपत्तियां दूर हो, हमें सुख–सुविधा, शांति, समाधि, सामग्री, आदि अनुकूलता मिले, उसे मंगल कहते है ।

किसी घर या दुकान के उद्घाटन के अवसर पर गुड–धाणा वितरित किया जाता है । अच्छे काम के लिए जब घर में से कोई जाता है तब उसे दही या गुड खिलाया जाता है । ये सब मंगल कहलाते है । कोई विशेष काम के लिए जब बाहर जाते हो और सामने से कोई कुँवारी युवती सिर पर मटका लिए आती हो तो उसे शगुन या मंगल कहा जाता है । ये सब द्रव्य मंगल है । इससे अनेक गुना प्रभाव नवकारमंत्र में है । अमंगल कार्यों को भी मंगलकार्यों में परिवर्तित करने का सामर्थ्य नवकार महामंत्र में है । वह भाव मंगल है । सभी प्रकार के मंगलों में सर्वप्रथम और सर्वश्रेष्ठ कोई मंगल हो तो वह है नवकार महामंत्र । क्योंकि इस जगत के मंगल कुछ दु:खों को कुछ समय के लिए अटका सकते है लेकिन कायम के लिए नहीं ।

सांसारिक सुख भी कुछ समय के लिए मिल सकता है लेकिन कायम के लिए नहीं ।

जबकि नमस्कार महामंत्र तो ऐसा अद्‌भुत और अलौकिक मंगल है कि जिसके प्रभाव से सिर्फ दुःख ही नहीं बल्कि दुःखों को लानेवाले पाप भी मिट जाते है । यहां तक कि पाप जिन कारणों से बंधते है, ऐसे राग–द्वेष– कामवासना–क्रोध, निंदा, ईर्ष्या, अहंकार आदि दोषों को भी मिटाने की ताकत नमस्कार महामंत्र में है ।

संसार की वासनाओं को, संसार के प्रति रहे हुए राग को ही नष्ट करने की ताकत, नवकार मंत्र में है । इसलिए यह सर्वप्रथम और सर्वश्रेष्ठ मंगल है । इस मंत्र का जाप जितना ज्यादा करेंगे उतने हमारे दोष भी दूर होते जाएंगे । जीवन में सद्‌गुणों का विकास होगा । आत्मा का कल्याण होगा ।

प्रश्नः नवकार मंत्र गिनने से किसे किसे कितना लाभ हुआ ?

उत्तरः नवकार मंत्र का प्रभाव अचिंत्य है । इसके प्रभाव से शिवकुमार को मृत्य के बदले सुवर्ण पुरुष मिला। अमरकुमार को जीवनदान मिला । सुदर्शन राजा की शूली सिंहासन में बदल गई ।

नवकार के प्रभाव से श्रीमती श्राविका के सामने सांप फूलों की माला में बदल गया । नवकार सुनते सुनते समडी (चील) मरकर राजकुमारी सुदर्शना बनी । ऐसे अनेक दृष्टांत शास्त्रो में है ।

प्रश्नः नवकार मंत्र की रचना किसने की ?

उत्तरः यह मंत्र शाश्वत है । अनादि काल से है । शब्द या अर्थ से इसकी रचना किसी ने नहीं की ।

प्रश्नः नवकार में कितने पद है ? संपदा कितनी और अक्षर कितने ?

उत्तरः नवकार में नौ पद है । आठ संपदाएँ है और 68 अक्षर है ।

प्रश्नः यदि पद नौ है तो संपदा सिर्फ आठ कैसे ?

उत्तरः पद याने, पंक्ति (वाक्य) नवकार में नौ पंक्तियाँ होने से इसके पद नौ हुए । जिन वाक्य रचनाओं से अर्थ जानने को मिलता है उसे संपदा कहते है । नवकार के अंतिम दो पदों का एक साथ अर्थ करते है तो एक वाक्य समझ में आता है । पहले सात पदों की सात संपदा और अंत में दो पदों की एक संपदा । इस तरह कुल आठ संपदाएँ होती है ।

प्रश्नः नवकार के अंतिम चार पदों को क्या कहते है ?

उत्तरः नवकार के अंतिम चार पदों को चूलिका कहते है ।

प्रश्नः चूलिका कितने अक्षरों की है ?

उत्तरः चूलिका 33 अक्षरों की है ।

प्रश्नः पंच परमेष्ठियों के पहले पहले अक्षरों से कौनसा बीज मंत्र बनता है ? और कैसे ?

उत्तरः पंच परमेष्ठियों के पहले पहले अक्षरों से ॐ मंत्र बनता है ।

अरिहंत का **अ** और अशरीरी (याने सिद्ध) का **अ** मिलकर **आ** बनता है ।

आ + आचार्य का आ = आ

आ + उपाध्याय का उ = ओ

ओ + मुनि (मुनि = म् + उ + न् + इ) (साधु) का म् = ओम् = ॐ (ॐ)

प्रश्न: पंच परमेष्ठि से पंचतीर्थ को किस प्रकार नमस्कार होता है ?

उत्तर: 1. अरिहंत के **अ** से **अष्टापदजी तीर्थ**

2. सिद्ध के **सि** से **सिद्धाचलजी तीर्थ**

3. आचार्य के **आ** से **आबु तीर्थ**

4. उपाध्याय के **उ** से **उज्जयंतगिरि (गिरनारजी) तीर्थ**

5. साधु के **स** से **सम्मेतशिखरजी तीर्थ**

उपरोक्त इस प्रकार से पाँच तीर्थों को भी नमस्कार होता है ।

प्रश्न: नवकार मंत्र पढने या गिनने का अधिकार कब मिलता है ?

उत्तर: उपधान तप के प्रथम अढारिया (18 दिन) करने से नवकार मंत्र पढने या गिनने का अधिकार मिलता है ।

प्रश्न: तो फिर कई लोग छोटे बच्चों से लेकर वृद्ध तक बिना अढारिया किए ही नवकार मंत्र क्यों गिनते है ?

उत्तर: शक्ति या अनुकूलता नहीं होने के कारण अढारिया नही करने से हालांकि उन्हें अभी तक नवकार मंत्र पढने या गिनने का अधिकार हासिल नहीं हुआ है लेकिन भविष्य में वे अढारिया (उपधान) करके नवकार मंत्र गिनने का अधिकार प्राप्त कर लेंगे ऐसी आशा से, आराधना से वंचित न रह जाएं इसलिए, उन्हें नवकार मंत्र पढने और गिनने की छूट **जित-आचार** से दी जाती है । अतः शक्ति अनुकूलता होने पर शीघ्र ही उपधान (शक्ति हो तो पूरा 47 दिन का और न हो तो कम से कम अढारिया) अवश्य कर लेना चाहिए ।

प्रश्न: नवकार के प्रत्येक अक्षर पर कितनी विद्याएँ है ?

उत्तर: नवकार के प्रत्येक अक्षर पर 1008 विद्याएँ रही हुई है ।

प्रश्न: नवकार का एक अक्षर, एक पद, एक नवकार या 108 नवकार गिनने से कितना पाप नाश होता है ?

उत्तर: नवकार का एक अक्षर गिनने से सात सागरोपम, नवकार का एक पद गिनने से 50 सागरोपम, एक नवकार गिनने से 500 सागरोपम और 108 नवकार गिनने से 54000 सागरोपम नरक में रहकर जितना दुःख सहन करे उतने पाप कर्मों का नाश होता है । इसलिए रोज कम से कम 108 नवकार अवश्य गिनने चाहिए ।

प्रश्न: 108 नवकारमंत्र का जाप किस प्रकार करना चाहिए ?

उत्तर: पूर्व या उत्तर दिशा की तरफ सफेद ऊन के कटासणे (आसन) पर पद्मासन में बैठकर, आँखे बंद करके अपने नाक की ऊँचाई तक सुतर की सफेद नवकारवाली हाथ में लेकर 108 नवकार मंत्र का जाप रोज नियमित रुप से करना चाहिए ।

प्रश्न: नवकार मंत्र कब कब गिनना चाहिए ?

उत्तर: खाते–पीते, उठते–बैठते, सोते–जागते आदि कोई भी काम करते करते कभी भी नवकार मंत्र गिन सकते है । यदि वस्त्र अशुद्ध हो तो भी होंठो को हिलाए बिना पल–पल, हमेशा नवकार मंत्र का स्मरण सतत् करते रहना चाहिए ।

तीन या एक नवकार गिनकर ही कोई नया काम शुरु करुँगा यह नियम तो कम से कम प्रत्येक व्यक्ति को लेना चाहिए । रात को सोते समय सात प्रकार के भय को दूर करने के लिए सात नवकार गिनने चाहिए । सुबह उठते समय आठ कर्मों का नाश करने के लिए आठ नवकार गिनने चाहिए।

अरिहंत के 12 गुण होते है । अत: तीनों समय 12–12 नवकार गिन सकते है । नवकार के 68 अक्षर 68 तीर्थों के सार है । इसके नौ पद नौ निधि प्रदान करते है । आठ संपदा से आठ सिद्धियाँ प्राप्त होती है । नवकार मंत्र 14 पूर्व का सार है । मृत्यु समय गिना हुआ नवकार सद्‌गति प्रदान करता है ।

चौदह पूर्वी भी अंत समय में नवकार मंत्र का स्मरण करते है । अत: हमें तो नवकार मंत्र का सतत् स्मरण अवश्य रुप से करना चाहिए ।

समरो मंत्र भलो नवकार

समरो मंत्र भलो नवकार, ए छे चौद पुरवनो सार
एना महिमा नो नही पार, ऐनो अर्थ अनंत अपार (1)
सुखमां समरो, दु:खमां समरो, समरो दिवस ने रात,
जीवता समरो, मरता समरो, समरो सौ संगाथ (2)
जोगी समरे भोगी समरे, समरे राजा रंक
देवो समरे दानव समरे, समरे सौ नि:शंक (3)
अडसठ अक्षर ओना जाणो, अडसठ तीरथ सार,
आठ संपदाथी परमाणो, अड सिद्धि दातार (4)
नवपद ओना नवनिधि आपे, भवोभवना दु:ख कापे,
वीरवचनथी हृदये स्थापे, परमातम पद आपे (5)

6. नाद - घोष

1. वीर प्रभु का है संदेश, **जीने दो** और जीओ
2. मानव जीवन का एक ही सार, संयम बिना नहीं उद्धार
3. जैन धर्म छे तारणहार, शरणुं एनुं सो सो वार
4. हरा बगीचा प्यारा है, जैन धर्म हमारा है
5. हम सब की एक आवाज, झगमग चमके जैन समाज
6. आसमान के तारे है, जिनेश्वर हमारे है
7. गुरूजी पधारे हांजी, वाणी में जादु हांजी, लाखों में साधु हांजी, धुमधाम से पधारे हांजी, गुरूजी हमारे हांजी, बडे त्यागी तपस्वी हांजी, बाल ब्रह्मचारी हांजी
8. गुरूजी अमारो पकडो हाथ, भव सागर मा देजो साथ
9. संसार कालो नाग छे, संयम लीलो बाग छे
10. बोल हृदयना जोडी तार, जैन धर्म नो जय जयकार
11. रात्रि भोजन छोडेंगे, प्रभु से नाता जोडेंगे
12. टी.वी. विडीयो ने क्या किया, सब (संस्कारो) का सत्यानाश किया ।

7. मेरे गुरू

गोचरी के लिए ले जाना

पच्चक्खाण लेने के पश्चात गुरु भगवंत को गोचरी हेतु पधारने की विनंती करना कि **साहेबजी गोचरी बहोरने मेरे घर पधारो ।** अंग्रेजी कल्चर में पढने वाले बालक समझते नहीं, अत: वे महाराज साहब को कहते हैं कि **अंकल ! खाना लेने के लिए मेरे घर आओ न !** ऐसा बोलना उचित नहीं है । यदि गोचरी का समय हो गया हो, तो स्वयं ही गुरु महाराज को साथ लेकर घर दिखायें और यदि समय नहीं हुआ हो तो वापिस बुलाने के लिए आना चाहिए । साथ न ले जाकर मात्र अपना पता : **बी–404/डी–404** नंबर, साहुकारपेट आदि बता देना ही उचित नहीं है । अपना और पडोस के अन्य घर भी बताने चाहिए । बाद में गुरु महाराज को वापिस उपाश्रय तक पहुँचाने हेतु साथ में जाना चाहिए ।

गोचरी बहराने की रीति

1. गुरु भगवंत घर पधारने पर **धर्मलाभ** बोलें, तब तुरंत अन्य कार्य छोडकर गुरु महाराज के सामने जाए । विनयपूर्वक हाथ जोडकर **पधारो–लाभ दीजिए** इत्यादि शब्द बोलकर आदर दें, बहुमानपूर्वक अंदर ले जाकर भक्तिपूर्वक गोचरी बहरानी एवं गुरु भगवंत बेहरकर जावे तब **फिर पधारना जी–लाभ देना जी** बोलना चाहिए ।
2. गोचरी बहराते समय **क्या लूं ? क्या लूं ?** ऐसा पूछ पूछ कर नहीं किंतु **लीजिए – लाभ दीजिए**

चारित्र ग्रहण कर और फिर अनशन करके सौधर्म देवलोक में देवता बने, वहाँ अवधिज्ञान से अपने पुत्र को देखकर अत्यंत स्नेहातुर होकर, वहाँ आएँ, उसको दर्शन दिया और भद्रा को कहा कि **शालिभद्र को सभी प्रकार की भोग साम्रगी मैं दूंगा** इतना कहकर वह देव चला गया। बाद में गोभद्र का जीव (देवता) उसको मनवांच्छित वस्तुएँ देने लगा। प्रतिदिन 32 स्त्रियों के साथ शालिभद्र को मिलाकर 33 व्यक्तिओं के लिए 33 पेटी वस्त्रों की, 33 पेटी आभूषणों की तथा 33 पेटी भोजन आदि पदार्थों की कुल मिलाकर 99 पेटी भेजने लगा।

एक बार श्रेणिकराजा शालिभद्र और उसकी संपत्ति को देखने के लिए उसके घर आए। शालिभद्र की समृद्धि को देखकर श्रेणिकराजा ने भी निम्न प्रकार विचार किया कि **मेरे राज्य में ऐसे समृद्धिशाली सेठ रहते हैं ?**

शालिभद्र सातवीं मंजिल पर बैठे हुए थे। उनकी माता ने श्रेणिक को देखने के लिए नीचे बुलाया तो उन्होंने कहा कि जिस गोदाम में श्रेणिक रूपी माल रखना हो उसमें रखवा दो, ऐसे समाचार माता को भेजे। माता ने खुद ऊपर जाकर कहा कि यह माल नहीं किंतु अपने राजा है। तु नीचे चल। नीचे आकर शालिभद्र ने भी अपने घर आए हुए श्रेणिक राजा को अपने स्वामी जानकर सोचा कि **क्या मेरा भी दूसरा स्वामी है ?** इस मेरी पराधीन लक्ष्मी को धिक्कार हो, तथा हम दोनों एक ही जाति के मनुष्य है, फिर भी एक राजा और एक प्रजा ! मैंने पूर्वभव में कुछ साधना कम की होगी जिससे ऐसा भेदभाव हुआ है। इस प्रकार वैराग्य परायण बनकर प्रतिदिन अपनी एक-एक स्त्री को छोडने लगा। यह बात सुनकर धन्ना नाम के उसके बहनोई ने आकर एक साथ सर्व स्त्रियों को त्याग कर दीक्षा लेने की उसको प्रेरणा दी। इस प्रकार की प्रेरणा से उत्साहित होकर शालिभद्र ने श्री महावीर भगवान के पास जाकर चारित्र ग्रहण किया एवं मृत्यु पाकर सर्वार्थ सिद्ध विमान में तेंतीस सागरोपम आयुष्य वाले अहमिन्द्र देव के रूप में उत्पन्न हुए। फिर मोक्ष में जाएंगे।

देवताओ में श्रेष्ठ ऐसे गोभद्र ने जिनको आभूषण आदि दिए, रत्न कंबल जिनकी स्त्रियों के पैरों को पोंछने के लिए उपयोग में लिए, जिसके लिए राजा (श्रेणिक) अन्न रुप (मामूली किराना) बना एवं जिसने अंत में सर्वार्थ सिद्धविमान प्राप्त किया, ऐसे शालिभद्र को इस प्रकार दान का सर्वप्रकार का अद्भुत फल प्राप्त हुआ।

बालको यह सब किसके प्रभाव से हुआ ? मात्र मुनि को शुद्ध भाव से गोचरी बहराने से ऐसी रिद्धि सिद्धि को एक ग्वाले के पुत्र ने प्राप्त की। तो आप भी इस प्रकार गुरु महाराज को गोचरी भाव से बहराकर संपत्ति-स्वर्ग-मोक्ष प्राप्त कर सकते हो।

गोचरी बहराते समय रखने योग्य सावधानी

1. साधु महात्मा घर पर पधारें तब कोई भी इलेक्ट्रीक स्वीच चालू या बंध नहीं करना, चालू या बंद करने पर साधु महाराज को दोष लगता है।
2. रसोईघर में भी बिजली की रोशनी नहीं करें। बिजली का पंखा, गैस, टी.वी., टेप इत्यादि चालू या

ऐसा कहकर गोचरी बहरानी चाहिए ।

3. गोचरी बहराने के लिए सर्वप्रथम पाटला रखें, उस पर थाली रखकर उसमें गुरु भगवंत पात्रा रखें तब उन पात्रों को भी हाथ जोडे और उसके पश्चात भोजन की वस्तुएँ बहरानी चाहिए ।
4. घर के छोटे बडे सभी व्यक्तियों को बहराने का लाभ लेना चाहिए ।
5. सुपात्रदान श्रद्धापूर्वक, भक्तिपूर्वक एवं स्वार्थ रहित करना चाहिए जैसे कि शालिभद्र के जीव संगम ग्वाले ने भक्तिभाव पूर्वक साधु महाराज को खीर बहराकर शालीभद्र की रिद्धि सिद्धि पाई और वह अंत में मोक्ष जाएगा । उसकी कथा संक्षेप में इस प्रकार है :-

पूर्वभव में शालीग्राम में रहने वाली **धन्या** नाम की एक दरिद्र स्त्री थी । वह उदर पूर्ति हेतु संगम नाम के अपने पुत्र को लेकर राजगृह नगर में आकर बसी और दूसरों का कामकाज करने लगी । संगम भी गाँव के ढोरों को चराने लगा । एक दिन कोई पर्व आया तब प्रत्येक घर में खीर बनती हुई देखकर खाने की इच्छा होने पर, संगम ने भी अपनी माता से खीर का भोजन मांगा । माता ने पडोसन द्वारा दिए गए दूध इत्यादि से खीर बनाकर संगम को थाली में परोस कर कहीं बाहर गइ । इतने में मासक्षमण के पारने वाले एक साधु वहाँ गोचरी वहरने के लिए पधारें । उनको देखकर अत्यंत हर्षित होने से उस संगम ने अत्यंत भावपूर्वक सारी खीर मुनि को वहरा दी । बाद में यह विचार करने लगा कि **आज साधु रूपी सत्पात्र मुझे प्राप्त होने से मैं अत्यंत धन्य हूँ ।** इस प्रकार अपने सत्कार्य की मन में अत्यंत अनुमोदना प्रशंसा करने लगा । इस प्रकार अनुमोदना सहित दान बहुत फल देने वाला होता है ।

संगम ने दान देकर बहुत पुण्य उपार्जन किया, क्योंकि ब्याज से धन दुगुना होता है । व्यापार से चौगुना होता है । खेत में सौगुना होता है तथा सुपात्र में देने से तो अनंत गुना होता है । तथा संगम ने जो दान दिया वह अत्यंत दुष्कर है क्योंकि दरिद्र होने पर भी दान देना, सामर्थ्य होने पर भी क्षमा रखना, सुख का उदय होने पर भी इच्छाओं को काबू में रखना तथा तरुणावस्था में इंद्रियों का निग्रह करना ये चार अत्यंत कठिन है ।

साधु भगवंत जाने के बाद संगम की माता आई । उसने थाली खाली देखकर बाकी की खीर भी परोसी । फिर वह विचार करने लगी कि **इतनी सारी भूख वाला मेरा पुत्र प्रतिदिन भूखा ही सोता है, ऐसा लगता है । अत: मुझे धिक्कार है ।** इस प्रकार के स्नेहदृष्टि के दोष से, उसी रात को शुभ ध्यान से मृत्यु पाकर संगम का जीव उसी शहर में गोभद्र सेठ के घर में उसकी स्त्री भद्रा की कुक्षि में परिपूर्ण पकी हुई शालि (डांगर) से भरपुर क्षेत्र के स्वप्न से सूचित पुत्र के रुप में उत्पन्न हुआ । पिता ने उसका नाम शालिकुमार रखा ।

युवावस्था प्राप्त होने पर उसका विवाह 32 कन्याओं के साथ किया । उसके पश्चात गोभद्र सेठ

बंध जैसी स्थिति में हो वैसी स्थिति में रखें।

3. बहराने वाला व्यक्ति कच्चा पानी, बिजली की रोशनी, हरी वनस्पति, गैस एवं मिर्च–इत्यादि मसालों का डिब्बा (क्योंकि उसमें राई, जीरा, कच्चा नमक इत्यादि सचित वस्तुएँ होती है।) इत्यादि स्पर्श न करें।
4. कोई वस्तु नीचे न गिरे, उसकी बूँद भी बाहर न गिरे या पात्र बिगडे नहीं इस प्रकार बहराना चाहिए।
5. गोचरी के समय घर के दरवाजे खुले रखें।
6. घर का दरवाजा बंद हो तो, खोलने के लिए साथ में आया हुआ श्रावक घंटी नहीं बजाए।
7. घर में जो भोजन तैयार हो, वह पहले से ही इस प्रकार रखा हुआ होना चाहिए, कि उसे कच्चा पानी, हरी, वनस्पति, फ्रिज, कच्चे पानी का मटका, अग्नि इत्यादि कुछ भी स्पर्श करता हुआ न हो।
8. रसोई में जो जो वस्तुएँ बनी हुई हो, वे सभी याद करके बहराने के लिए विनंती करे। उनके सिवाय औषधि रुप सूंठ, शक्कर, पीपरीमूल, बलवन (भट्टे में पकाया हुआ नमक) इत्यादि की भी विनंती करे।
9. गोचरी बहराने में कभी भी गच्छ का, पक्ष का, साधु या साध्वी का भेद न रखें। सबको एक भाव से–उमंग से बहराना चाहिए।
10. गोचरी के अतिरिक्त वस्त्र, पात्र–दवाई इत्यादि भी विनंती करके आवश्यकता के अनुसार बहराना चाहिए।

गोचरी बहराने से लाभ

1. पूर्वभव में साधुओं को उत्तम वस्त्र बहराने से श्रीधर नाम का व्यक्ति राजा बना। 500 गायों का वह स्वामी बना। गुरु से अपने पूर्वभव सुनकर साधुओं को दान देकर देवलोक में गया। वहाँ से च्यवन कर राजा बनकर मोक्ष गमन करेगा।

2. चंद्र नामक पुत्र ने पूर्वभव में साधुओं को पाँच लड्डू वहोराए थे। इससे दूसरे भव में पाँच करोड का स्वामी बना जो धन सेठ के नाम से प्रसिद्ध हुआ। यह सेठ पाँचवे भव में मोक्ष जाएगा।

3. **गोचरी :–** सुपात्रदान समकित प्राप्ति का कारण है। जिस प्रकार ऋषभदेव भगवान के जीव ने धन्नासार्थवाह के भव में मुनि को गोचरी बहराकर समकित प्राप्त किया था, इसी प्रकार महावीर स्वामी के जीव ने नयसार के भव में जैन नहीं होने पर भी जंगल में दान देने की भावना रखते हुए मुनि को देखकर अत्यंत हर्ष व्यक्त किया। मुनि को गोचरी बहराकर ही स्वयं ने भोजन किया, जिससे उसने समकित प्राप्त किया।

४. दिनचर्या

चातुर्मास के नव अलंकार

धर्म आराधना की दृष्टि से ज्ञानी पुरुषों ने वर्ष के तीन विभाग किये है – 1. कार्तिकी चातुर्मास 2.फाल्गुणी चातुर्मास, 3.आषाढी चातुर्मास

जैन शासन में आषाढी चातुर्मास का अत्यधिक महत्त्व है। यह आषाढ शुक्ला चतुर्दशी से प्रारंभ होता है और कार्तिक पूनम को समाप्त होता है। वर्षावास का यह काल धर्माराधना के लिए सर्वोत्तम माना गया है। भारत वर्ष में जहाँ–जहाँ भी जैन साधु–साध्वी होते है, वे इस दिन से एक गाँव /नगर में एक स्थान पर स्थिर हो जाते है और चार महिने तक तपोमय जीवन जीते हुए संयम आराधना में निमग्न रहते है। आषाढी चातुर्मास में वर्षाकाल होने से चारों ओर जीवोत्पति भी अत्यधिक बढ जाती है, इस काल में विहार करने से जीव हिंसा होती है। अत: जीवदया, प्राणी रक्षा की दृष्टि से इन दिनों विहार निषिद्ध माना गया है। साधु–साध्वी की भाँति श्रावक–श्राविकाओं को भी वर्षाकाल में एक ही नगर में रहना चाहिए। कहा है–दयार्थ सर्वजीवानां वर्षाष्वेकत्र संवसेत्' गुर्जरेश्वर कुमारपाल ने कलिकालसर्वज्ञ हेमचंद्राचार्य के पास चातुर्मास दरम्यान पाटण के बाहर नहीं जाने की प्रतिज्ञा की थी।

शास्त्रों मे चातुर्मास काल में मुख्य रुप से नव प्रकार की धर्म आराधना करने का विधान किया गया है। यह चातुर्मास के नव अलंकार कहलाते है। प्रत्येक जैन श्रावक को इन अलंकारों से अपने जीवन को विभूषित करना चाहिए।

1.सामायिक : समता भाव में स्थिर होने के लिए एक मुहूर्त तक सावद्य योगों के त्याग की प्रतिज्ञा करके एक स्थान पर बैठना सामायिक कहलाता है। सामायिक के समय राग –द्वेषों से मुक्त रहना चाहिए और नमस्कार महामंत्र का जाप अथवा शास्त्र स्वाध्याय करना चाहिए। सामायिक में मन, वचन और काया के 32 दोषों का परित्याग करना चाहिए। स्वच्छ एकांत स्थान पर बैठकर सामायिक करनी चाहिए।

2. प्रतिक्रमण : अनजाने में अथवा जानबूझकर हुए पापों से पीछे हटने की प्रक्रिया का नाम ही प्रतिक्रमण है। श्रावक अपने जीवन में व्रत ग्रहण करता है। इन व्रतों में अतिचार लगाने से व्रत मलिन हो जाते है, उन अतिचारों की आलोचना प्रतिक्रमण द्वारा की जाती है। प्रतिदिन सुबह–शाम प्रतिक्रमण अवश्य करना चाहिए। प्रतिक्रमण हमेशा गुरु सान्निध्य में ही करना चाहिए। गुरु का साक्षात् योग न हो तो उनकी स्थापना की जा सकती है।

3.पौषध : यह व्रत निवृत्ति रुप है। यह साधु जीवन के आस्वाद रुप भी है। इसमें भोजन, शरीर सेवा, व्यापार, मैथुन से निवृत्ति होती है। पर्व दिनों में पौषध कम से कम एक साथ चार अथवा आठ प्रहर का

चातुर्मास के नव अलंकार

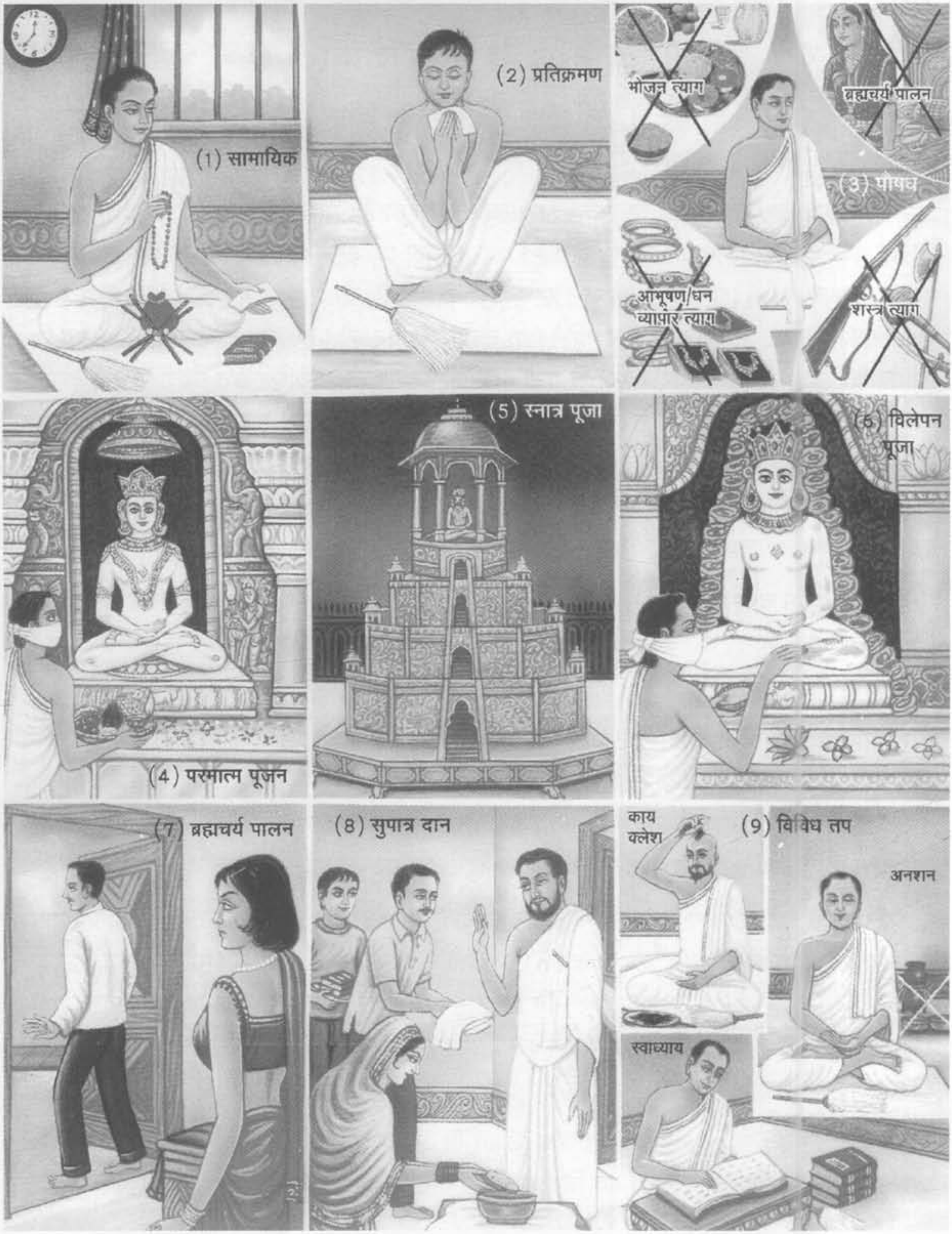

लिया जाता है। पौषध तो आत्मा का औषध है, पौषध दरम्यान समस्त सांसारिक प्रवृत्तियों का त्याग होने से आत्मा अपने स्वभाव में स्थिर बनती है।

4. परमात्मा पूजन : श्रावक–श्राविका को नित्य ही जिनेश्वर परमात्मा की अष्टप्रकारी पूजा अवश्य करनी चाहिए। स्वद्रव्य से उत्तम सामग्री पूर्वक परमात्मा की अष्टप्रकारी पूजा अवश्य करनी चाहिए। स्वद्रव्य से उत्तम सामग्री पूर्वक परमात्मा की भावपूर्वक भक्ति करने से चारित्रमोहनीय कर्म क्षीण हो जाता है, पूजा संबंधी सभी कार्य अपने हाथों से ही करना चाहिए। प्रभु पूजा में विधि का पालन अवश्य करना चाहिए और आशातनाओं से बचने का पूरा पूरा प्रयत्न करना चाहिए।

5. स्नात्र पूजा : गीत–गान पूर्वक परमात्मा की स्नात्र पूजा अवश्य करनी चाहिए। परमात्मा के जन्म समय इन्द्र महाराजा प्रभु को मेरु पर्वत पर ले जाकर जो स्नात्र महोत्सव करते है, उसी महोत्सव का वर्णन स्नात्र पूजा में आता है।

6. विलेपन पूजा : भगवान की प्रतिमा पर उत्तम द्रव्यों का विलेपन करना विलेपन पूजा कहलाता है। बरास–चंदन आदि उत्तम द्रव्यों का विलेपन करते समय यह भावना करनी चाहिए कि 'हे प्रभो! इस चंदन पूजा के फलस्वरुप मेरी आत्मा में रही कषायों की आग शांत हो ।

7. ब्रह्मचर्य पालन : चातुर्मास काल में ब्रह्मचर्य पालन का विशिष्ट महत्व है। ब्रह्मचर्य का स्थूल अर्थ–मैथुन का त्याग और सूक्ष्म दृष्टि से ब्रह्म अर्थात् आत्मा चर अथवा रमणता अर्थात् आत्मरमणता। ब्रह्मचर्य के पालन से मन पवित्र बनता है, अशुभ विचार दूर हो जाते है, अशुभ कर्मों का नाश होता है और आत्मा विशुद्ध बनती जाती है। इस व्रत की सुरक्षा के लिए नौ वाडों का पालन अवश्य करना चाहिए।

8. दान : दान पाँच प्रकार के होते है। चातुर्मास काल के दौरान अपनी शक्ति के अनुसार श्रावक को प्रतिदिन सुपात्रदान अवश्य करना चाहिए। दीन, दुःखी अनाथ व मूक प्राणी पर अनुकंपा करने से भी पुण्यानुबंधी पुण्य का बंध होता है।

9. तपश्चर्या : कर्मों की निर्जरा के लिए तप एक अमोघ उपाय है। तीर्थंकर परमात्मा ने स्वयं तप किया और तप धर्म की विशेष आराधना करनी चाहिए। अनशन, उणोदरी, वृत्तिसंक्षेप, रसत्याग, कायक्लेश और संलीनता रुप बाह्यतप की साधना अभ्यंतर तप की पुष्टि के लिए करनी चाहिए। बाह्य तप के साथ साथ अपने जीवन में सरलता, नम्रता, वैयावच्च, स्वाध्याय, सहनशीलता आदि गुणों का विकास होना चाहिए।

उपर्युक्त नव अलंकारो के साथ ही अन्य व्रत पच्चक्खाण आदि कर अपने जीवन को आराधना मय बनाने का प्रयत्न करना चाहिए।

9. भोजन विवेक

A. टूथपेस्ट से सावधान

आजकल कोलगेट, पेप्सोडेन्ट, मिस्वाक, बबूल, क्लोजअप इत्यादि कई प्रकार के टूथपेस्टों में अंडों का रस, हड्डियों का चूरा, प्राणीज ग्लिसरीन इत्यादि आते हैं, इन टूथपेस्टों में मांसाहारी वस्तु होने के साथ जहर जैसी वस्तुएँ भी होती हैं । अमेरिका के मुख्य दैनिक **वॉशिंगटन पोस्ट** एवं **लॉस एन्जल्स टाइम्स** में टूथ पेस्ट के विरुद्ध चेतावनी दी है कि तुम गलती से दाँत साफ करते हुए अधिक परिणाम में पेस्ट गले में उतार लो तो तुरंत पोइजन (जहर) के कंट्रोल का संपर्क करें । इस बात से सिद्ध होता है कि पेस्ट पानी की तरह सुरक्षित नहीं है । उनमें तीन तत्व फ्लोराइड, सोर्बियल लिक्विड और सोडियम लोरिल सल्फर होते है । फ्लोराइड अत्यंत जहरीला पदार्थ है । इससे बालक की मृत्यु भी हो सकती है। सोर्बियल से बालक को दस्तें आदि भी हो सकती है, जिसके द्वारा पेस्ट में फेन होते है, इस सोडियम से भयंकर बीमारी होती है । अत: टूथपेस्ट का त्याग हितकारी है । टूथपेस्ट में अभक्ष्य वस्तुएँ मिलाई हुई नहीं है ऐसा पूरा भरोसा होने पर भी मंजन, नमक इत्यादि का उपयोग करें , क्योंकि पेस्ट बनने और हमारे उसे उपयोग में लेने के बीच काफी समय बीत जाता है और उसकी नमी से भी वह अभक्ष्य हो जाता है।

B. चॉकलेट

बच्चों ! आपको चोकलेट भी बहुत भाती है न ? परंतु उनमें क्या क्या डाला जाता है, यह तो आप जब इस वर्णन को पढेंगे तभी पता चलेगा और आप स्वयं ही कहेंगे कि नहीं, अब से चॉकलेट का त्याग ! तो पढो... फिर आप स्वयं को ही लगेगा कि यह हल्का और कुरकुरा मंच है या भारी मंच है । फिर मत कहना कि यह इंडिया का टेस्ट है या नरक का ? (क्योंकि अभक्ष्य भक्षण से नरक की सजा मिलती है।)

च्युइंगम में बीफटेलो, बोन पाउडर, जिलेटिन डालते हैं और मेलोडी, डेरीमिल्क, मंच, रेलीश, वेफर्स, इकलेर, जेम्स, फ्रूट एंड नट, जोंकर्स, अमूल, फाइवस्टार, किटकैट, झेली, मिल्कीबार, कोकोनट, कोफीबाईट, बारवन, केमिले ब्लोक, टोरिनो, रेगुसा व कोग्रेक आदि अनेक प्रकार की चॉकलेटों में अंडे का रस आदि आता है । च्युइंगम में अंडे का रस, फ्रुटेला में गाय का माँस, पोलो में हड्डियों का पाउडर और इस प्रकार जिन चॉकलेटों का यहाँ उल्लेख किया गया है, उन सभी में अंडों का रस आता है । साथ ही इनमें निकल नाम का जहर भी आता है, जिसके कारण लम्बे समय के बाद मस्तिष्क पर कुप्रभाव पडता है । चॉकलेट में 1% से 4% तक चपडे (वंदा–**Cockroach**) के शरीर के भागों का उपयोग किया हुआ होता है । चॉकलेट खाने से दाँतों को भी नुकसान होता है ।

जब चूहों पर इन चॉकलेटों का प्रयोग किया गया तो उसमें से जानने को मिला कि चॉकलेट में रहे हुए "**Caffeine**" तथा "**Phenyl Thyamine**" नामक रसायन चूहों के लिए भी बडे हानिकारक सिद्ध हुए थे ।

मुख्य बात : Dr. Coco अपनी पुस्तक में लिखते है कि तुम जो चॉकलेट खाते हो वे कितनी लाभपद्र है ? यह जानने के लिए चॉकलेट खाने से पूर्व और खाने के पश्चात् अपने हृदय की धडकन अवश्य गिन लेना। यदि चॉकलेट खाने के पश्चात् तुम्हारे हृदय की धडकने 84 के बदले प्रति मिनिट 60 हो जाए तो समझ लेना कि चॉकलेट का तुम्हारे शरीर के साथ मेल नहीं बैठता अर्थात "**It does n't suit you.**"

"**Nestle Limited**" की "**Kitkat**" नामक चॉकलेट आजकल बच्चों में बहुत ही प्रिय है परंतु यह चॉकलेट गाय के छोटे बछडों को मारकर उनके शरीर में से उपलब्ध रेनेट में से बनाई जाती है (यह बात गुजरात समाचार नाम के पेपर में आई हुई है।) रेनेट अर्थात् कोमल बछडे का माँस।

मानसिक, धार्मिक, शारीरिक लाभ के खातिर बच्चों को चॉकलेट के सेवन से दूर रहना ही हितकारी है।

1. मानसिक असर : केलिफोर्निया में बाल अपराधियों तथा किशोर वय के अपराधियों पर 900 प्रयोगों के पश्चात् बालकों के लिए चॉकलेट के उपयोग पर संपूर्ण प्रतिबंध लगाया गया, खाने में मीठी वस्तुएँ भी कम करवाई गई जिसके परिणाम स्वरुप बालकों में हिंसक तथा समाज विरोधी प्रवृत्तियाँ आधी कम हो गयी।

2. धार्मिक असर : चॉकलेट में शहद-मक्खन आदि अभक्ष्य पदार्थ मिलाये जाते है। अत: इन्हें खाने से हमें अभक्ष्य भक्षण का दोष लगता है।

3. शारीरिक असर : चॉकलेट में अधिक मात्रा में निकल नाम की धातु होने से बालकों को कैंसर होने का भी भय रहता है। उससे यकृत पर विपरीत प्रभाव, चर्म रोग, श्वेत केश, दाँतों में पीडा आदि होते हैं, स्वाद के खातिर अधिक चॉकलेट खाने से आहार भी घट जाता है।

सावधान : खिलौने के आकार वाली चॉकलेट-पीपरमेंट नहीं खानी चाहिए, कोई कोई पीपरमिंट शायद अभक्ष्य न भी हो परंतु बताशे (पतासा) के बजाय सिंह, घोडा, हाथी, मछली आदि के आकार वाली पीपरमिंट की गोलियाँ बच्चों को खाने के लिए देते है, यह माता-पिता की भयंकर भूल हो रही है, क्योंकि उससे हिंसक संस्कार पडते हैं। नई पीढी के संतानों को माँसाहारी बनाने की यह चाल है। मैंने सिंह खाया, मैंने मछली खाई, आदि बच्चे बोलते हैं। इससे नहीं मारने पर भी जीव हिंसा को दोष तो लगता ही है। मछली आदि के आकार वाली पीपरमिंट की गोलियाँ छोटी-बडी चोकलेट आदि हड्डी, माँस, चर्बी से भी निर्मित होती है। इसी तरह स्कूल में दिये जाते अभक्ष्य नाश्ते से भी बच्चों को सावधान करना आवश्यक है।

C. बिस्कुट

बिस्कुट खाना तो बचपन से ही चालू है, अत: उसको छोडने में कुछ कष्ट होगा, परंतु यह पढोगे तब आपको लगेगा कि पार्ले, मेरीगोल्ड, क्रैकजैक, मोनेको, फिफ्टी-फिफ्टी, चेम्पियन, गुड डे, टाइगर, कुकीस, ऑरेंज, हाइड एंड सीक, क्रीमरोल, जिम जैम, बोरबॉन, टाइमपास आदि इन सभी प्रकार के बाजारु बिस्कुटों में अंडों का रस, गाय की चरबी, बकरों की आँतों का रस व हलकी कोटि का मेंदा

मिलाया जाता है, साथ ही ये कई दिनों के बने हुए होने से अभक्ष्य है अत: नहीं खाने चाहिए । क्रीम वाले बिस्कुट तो मक्खन की वजह से अत्यंत अभक्ष्य है ।

अभी एक ताजी घटना बनी कि मुंबई में शिवसेना के अध्यक्ष उद्धव ठाकरे के, दि.27.7.2006 के दिन, बर्थ डे में, बच्चों को बिस्किट व चोकलेट वितरित किए गए । उसे खाने से 60 लडकों को जहर का असर हुआ, हॉस्पिटल में भर्ती कराना पडा ।

क्रीम बिस्कुट और क्रीम वेफर में अंडों के अंश का उपयोग होता है । यह उन पर स्पष्ट छपा हुआ होता है परंतु उनकी पैकिंग ऐसी होती है कि शाकाहारी ग्राहक को पता नहीं चलता । पैकिंग कवर के अंदर छोटे अक्षरों में लिखा हुआ होता है कि –

INGREDIENTS :- Edible Vegetable Oils, Sugar, Wheat flour, Milk and Milk Products, Eggs, Cornflour, Leavening Agents, Emulsifiers, Salt and Anti Oxidents

मुंबई में खाद्य प्रशासन द्वारा शोध हुई है कि बिस्कुट में स्वास्थ्य के लिए गंभीर रूप से हानिप्रद यूरिया और सल्फर पाया गया है ।

D. शीत पेय - कोल्डड्रिंक्स

... और ये शीत पेय पीकर तो बालकों आप चैन–संतोष का अनुभव करते होंगे ? परंतु शीतपेय की कंपनी वाले स्वयं ही ऐड विज्ञापन में रहस्यभरी बातों को शॉर्ट में कह देते हैं, कि **जोर का झटका धीरे से लगे** अर्थात् आप लोग कोल्ड ड्रिंक्स को जोर से पी जाते हैं, परंतु बाद में धीरे–धीरे उसका झटका आपके शरीर में लगेगा, कि आप अपने पाँवों पर खडे भी न हो सकेंगे । बराबर है न ? समझ गए न ? **यह पढों, पढकर दिखावा छोडो और अपनी बुद्धि लगाकर सोच विचार कर त्याग के मार्ग पर आगे बढो, तो आप जो चाहोगे वह बन जाओगे ।**

पेप्सी, कोका कोला, थम्स अप, फैंटा, गोल्ड स्पॉट, मिरिंडा, लेमन, मसाला सोडा, स्लाईस, सिट्रा, माझा, सेवनअप, स्प्राईट, ड्यूक्स, माउन्टेन ड्यू आदि विविध प्रकार के कोल्ड ड्रिंक्सों में संडास–शौचालय साफ करने के फिनाइल जैसा एसिड आता है जो शरीर के लिए हानीकारक है तथा बासी होने से अभक्ष्य भी है, फिर भी इस रंगीन जहरी पानी को आप लोग अमृत मानते है ।

बोतलबंद काले–पीले कोल्डड्रिंक्स से प्यास बुझने का भ्रम तो अवश्य होता है, परंतु वास्तव में गले की प्यास मिटती नहीं, बल्कि शरीर में से पानी की मात्रा कम हो जाती है । अमेरिकी वैज्ञानिक और लेखक मार्क पेंडर ग्रास्टे ने स्वयं शोध करके कोल्ड ड्रिंक्स के **ट्रेड सिक्रेट** नामक पुस्तक में लिखा है कि उनमें साईट्रेट, कैफिन, साइट्रिक एसिड आदि के साथ थोडी सी शराब मिलाई जाती है । दूसरी भी विधि लिखी है कि कैफिन एसिड और नींबू के रस को उबलते पानी में मिला कर ठंडा होने के बाद वेनिला फ्लेवर का मिश्रण किया जाता है । फिर उसमें आल्कोहोल मिलाकर 24 घंटों के लिए रखा जाता है । तत्पश्चात् वह तैयार होता है । तो सावधान ! ऐसे कोका कोलादि कोल्ड ड्रिंक्स से, जिसमें शराब आती है ।

हड्डियों के लिए कोल्ड ड्रिंक्स हानिकारक : डेनमार्क की एक अनुसंधान संस्थान ने बताया है कि सोडा

और अन्य प्रकार के कोल्ड ड्रिंक्स पीने से शरीर में केल्शियम की कमी पैदा होती है, जिससे हड्डियों का विकास अवरुद्ध हो जाता है ।

ब्रिटिश अखबार संडे टाइम्स में प्रकाशित अध्ययन में ये शीतपेय पीने वालों की हड्डियों की संरचना पर अध्ययन किया गया, उसमें 10 दिन तक नित्य ढाई लीटर कोल्ड ड्रिंक्स पीने के लिए कहा एवं अन्य व्यक्तियों को दस दिन तक नित्य ढाई लीटर दूध पीने के लिए कहा गया, तो जिन लोगों ने 10 दिन में कोल्ड ड्रिंक्स का उपयोग किया था, उनके शरीर में केल्शियम की कमी पाई गई ।

एक विश्लेषण के अनुसार 300 मि.ली. की कोल्ड ड्रिंक्स की एक बोतल में न तो प्रोटीन होता है औन न विटामिन ए, अनेकों देशों में तो इन विषैले रसायनों के कारण कोल्ड ड्रिंक्स की बोतलों पर '' बालकों के लिए नहीं '' ऐसी चेतावनी लिखी हुई होती है । इसी प्रकार मेक्सिको में भी '' गर्भवती महिलाओं और बच्चों के लिए नहीं '' ऐसा लिखा हुआ है । दूसरी एक चौका देने वाली बात यह है कि इन में ग्लिसरॉल भी मिश्रित होता है, यह पदार्थ पशुओं के माँस से प्राप्त किया जाता है ।

डॉ. चार्ल्स बेस्ट ने अपने अध्ययन से पता लगाया है कि इन शीत पेय पदार्थों के अत्यधिक सेवन से लडकों के लीवर में सिरोसिस नामक रोग पाया गया । इन्हें पीने से भले ही क्षणिक स्फूर्ति का अनुभव होता है । परंतु अनिद्रा, पेट में जलन, उदरशूल, हृदय की अनियमित धडकन, दाँत गिरना, चिडचिडापन आदि की पीडा सहन करनी पडती है । इसका तुरंत पता नहीं चलता, परंतु कुछ वर्ष व्यतीत होने के पश्चात् इसका असर होता है, तब इन रोगों का शिकार बनना पडता है, क्योंकि यह **''Slow Poison''** (सुषुप्त – मंद गति का विष) है, जिससे जीवन शक्ति क्षीण होने लगती है तथा प्राणघातक बीमारी होने का खतरा रहता है । इसके विषय में कॉलेज की एक सत्य घटना इस प्रकार से है:–

सत्य घटना :– एक बार कॉलेज में पेप्सी पीने की स्पर्धा रखी गई । स्पर्धा के फाईनल में पहुँचे दो विद्यार्थियों के बीच पेप्सी पीने का तीव्र मुकाबला हुआ । पराक्रम दिखाते हुए एक विद्यार्थी ने एक घंटे में पेप्सी की नौ बोतल और दूसरे ने आठ बोतले पी ली । परिणाम यह हुआ कि कुछ ही घंटों के बाद दोनों ही विद्यार्थी काल के मुँह में चल बसे (मर गये) । पेप्सी में रहे हुए कार्बन डायोक्साईड के कारण दोनों की मृत्यु हुई है, ऐसा डॉक्टरों का निष्कर्ष था । तत्पश्चात् उस कॉलेज की केन्टीन में यह जहर बेचने पर प्रतिबंध लग गया ।

यूरोप–अमेरिका मे दाँतों के जल्दी गिरने का कारण ये कोल्डड्रींक्स है, अब लोग धीरे–धीरे समझने लगे है और अपने देश में भी कुछ समयपूर्व समाचार पत्रों में दो–तीन बार स्पष्ट रुप से प्रकट हो गया है कि इन शीतपेय पदार्थों में जंतुनाशक द्रव्य 40 से 200 गुना है । मिनरल वॉटर का भी लोग अब विरोध कर रहे हैं ।

एक लेखक ने लिखा है इन शीतपेय पदार्थों में **''pH Value''** 2.5 प्रतिशत है । **''pH Value''** अर्थात् फिनाइल का उपयोग कर रहे है वह, जिसमें एसिड होता है । इस प्रकार आप इससे फिनाइल पेट में डालते हैं । ये हानिकारक पदार्थ होने से बेल्जियम में कई बच्चे बीमार हुए थे । अत: फ्रांस तथा

बेल्जियम में इन कोल्डड्रिंक्स शीतपेयों को बेचने व पीने पर प्रतिबंध लगाया गया है ।

एक आघातजनक बात यह है कि मानव अस्थियों को जमीन में पिघलने में एकाध वर्ष लगता है परंतु शीतपेय में एकाध हड्डी डुबोकर रखो तो 10 दिन के पश्चात् ही चमत्कार देखोगे कि हड्डी गलकर प्रवाही स्वरूप परिवर्तित हो जाएगी ।

1. पश्चिमी संस्कृति से सीखने योग्य :– स्वीडन की स्कूलों में 3–4 वर्ष के बच्चों को आहार से संबंधित पुस्तक दी जाती है । इस पुस्तक में अमुक प्रकार के आहार ही बालकों को खाने चाहिए–ऐसे चित्र दिये है । चरबी युक्त, तले हुए, चॉकलेट, कोकाकोला, हेन्झनी ब्रांड के टिन पेक फल, केम्पबेल कंपनी के टिन के सूप आदि बच्चों को नहीं खाने चाहिए ऐसी सलाह दी जाती है, जबकी इससे विपरीत भारत में टी.वी. वाले विज्ञापन में भी ऑफिस से पप्पा घर आए तब जेब में से चॉकलेट निकाल कर बताते है, लेकिन ऐसे विज्ञापन स्वीडन देश में टी.वी. पर बताना प्रतिबंधित है । भारत में अंडे, ब्रेड, शक्कर युक्त पदार्थ, बर्फ के गोले आदि लोग खाने लगे ऐसे विज्ञापन टी.वी. पर प्रसारित होते है ? है न आश्चर्य !

अन्य एक बात और भी है कि **आन्ध्रप्रदेश के किसान अपने खेतों में कीटनाशक दवा के रुप में** कोकाकोला, पेप्सी और थम्सअप का उपयोग करते हैं । किसान कहते है कि बाजार में उपलब्ध **पेस्टिसाइड्स की तुलना में ये सोफ्ट ड्रिंक्स सस्ते पडते हैं** और परिणाम भी अच्छा मिलता है । इस पानी के छिडकाव से जंतु नष्ट हो जाते हैं । **(यह बात पेपर में प्रकट हो चुकी है ।)**

इतने प्रस्तुत प्रमाणों, सच्चाईयों व आधारों पर अब निर्णय आपके ही हाथ में है कि आईस्क्रीम, चॉकलेट, बिस्कुट, शीतपेय आदि का त्याग करना चाहिए या नहीं ?

2. मन चाहे जगह पर खाना नहीं : आजकल मानव मन में जो पसंद आए, वह खाने लगा है । जो देखा, प्रिय लगा, भाया उसे पेट में डाला । आधुनिक होटलों, रेस्टोरेंटों, फास्ट फूड (सेन्डविच, पीझा आदि वस्तुओं) के सेन्टरों ने मानव की रसनेन्द्रिय को बहका दी है । एक गोपीचंद ऐसा मिला, कि दुनिया में खाने की जितनी वस्तुएँ बनती है, उन सभी का स्वाद तो चखना चाहिए ? जीभ मिली है, तो उसका उपयोग क्यों न किया जाए ? ऐसे मूर्ख को कौन समझाए, कि यह जीभ का उपयोग नहीं, बल्कि दुरुपयोग है । **Home to Hotel and Hotel to Hospital.** घर से आप भोजन करने के लिए होटल में जाते हो और होटल से हॉस्पिटल में भर्ती हो जाते है, ऐसा होटल का खाना होता है । डॉक्टर ने कहा है, कि ये होटल वाले तो हम पर उपकार करते है । इन लोगों का धंधा धडल्ले से चलें, तो हमारी हॉस्पिटल भी धडल्ले से चलती ही रहेगी, जरा भी चिंता की बात नहीं ।

3. कौन बढकर है – पशु या मानव ? : यह मानव ही ऐसा है जो खाने के सभी टेस्ट के लिए उधम करता है । शेष सभी प्राणी सदैव के लिए अस्वादी हैं । आज तक किसी भैंस ने थम्सअप या कोकाकोला नहीं पीया, किसी गधे ने पनीर, पकोडे या पीझा का स्वाद तक न चखा तो खाने का तो प्रश्न ही नहीं । सभी प्रकार के नखरे मानव करता है । बेचारे पशु हरा–सूखा घास खाकर शाम तक 5–7 लीटर दूध देते हैं । यही दूध मानव को पिलाओगे तो वह मल मूत्र के सिवाय दुनिया को कुछ नहीं देता, तो बोलो कौन बढकर

है मानव या पशु ?

4. होटल में क्यों नहीं खाना चाहिए ?: होटल में खाने से भक्ष्याभक्ष्य, पेय–अपेय अर्थात् **खाने–पीने योग्य क्या** और **न खाने–पीने योग्य क्या है ?** इसका विवेक नहीं कर सकते । अनेक शारीरिक हानियाँ होती हैं, धन का दुरुपयोग होता है, शरीर और मन का स्वास्थ्य बिगडता है । होटल में तुच्छ व्यक्तियों की बातें सुनने और देखने से मन विकृत होता है । अन्य व्यसनों के शिकार बनना सरल हो जाता है । अभक्ष्य वस्तु, बासी, तुच्छ, अपवित्र वस्तुएँ खाने–पीने से बुद्धि भ्रष्ट हो जाती है । विचारों में विकृति आती है । समाज का पैसा निरर्थक खान–पान के पीछे खर्च होता है । समाज की उन्नति के लिए धन की बचत भी नहीं हो सकती ।

व्यक्ति जैसा आहार करता है, तदनुसार उसके विचारों का निर्माण होता है । केवल कमाई करने की दृष्टि से निर्मित होटल आपके स्वास्थ्य और पवित्र जीवन को नष्ट कर देंगी । अत: उनका मोह छोडकर आज ही संकल्प किजीए, कि हम इन गंदे अपवित्र आहार – पानी, चाय–नमकीन, मिठाई आदि परोसने वाली होटलों में न खाएँगे, न पीएँगे और न ही जाएँगे ।

5. होटल अर्थात् क्या ?: 1. घर की शुद्ध रसोई छोडकर अशुद्ध पदार्थों के भक्षण का फेशनेबल रसोईगृह 2. नीची जाति के लोगों की जीभ से चाटे हुए बर्तनों में खाने का आनंद? देनेवाला स्थल 3. सायन्स की दृष्टि से प्रत्येक रोग के कीटाणु अपने शरीर में पधराने का गोडाउन । 4. अनेक पैसों का अपव्यय करके गंदगी को पेट में निमंत्रण देकर स्थापित करने का गटर ।

विदेश की एक मेकडोनल्ड नामक रेस्टोरेंट में से एक व्यक्ति सलाद खरीदकर लाया । उसे खाने से दो स्त्रियाँ गंभीर रोग ग्रस्त हुई । जाँच करने पर उस सलाद में से मरा हुआ चुहा निकला । उनके पति ने उस मेकडोनल्ड होटल पर 17 लाख डॉलर का जुर्माना किया । विदेश से भारत में भी यह रेस्टोरेंट आ चुकी है, सावधान बन जाना । *(गुजरात समाचार 28/10/06)*

अभक्ष्य वस्तु के साथ जैन शब्द से सावधान : लॉरी वालों के पास भी लगभग सभी वस्तुएँ अभक्ष्य, बासी आदि होती हैं, अत: वहाँ से भी ये वस्तुएँ नहीं खानी चाहिए । वे शरीर के लिए भी हानिकारक होती हैं । ये लोग जैनों को आकर्षित करने के लिए बानगी के आगे जैन शब्द जोड देते है और धर्मी आत्माओं को भ्रम में डालते हैं । अत: बच्चों ! आप सावधान रहना, क्योंकि ये वस्तुएँ जैन शब्द लगाने मात्र से खाद्य नहीं बन जाती जैसे...

जैन पाऊभाजी: इसमें पाऊ की बनावट में काल बीत चुका हो ऐसा सडाँ हुआ बाजारु मेदा–खमीर बासी रहने से, उसमें असंख्य त्रस जीवों की उत्पत्ति होती है । ऐसे पाऊ का भक्षण करने में उन जीवों की हिंसा का दोष लगता है । पाऊ खुद भी रोटी के समान अगले दिन बासी हो जाने से अभक्ष्य ही है ।

जैन आईस्क्रीम : जो जिलेटिन, केक, बर्फ से बनती है वह अभक्ष्य है । इसी प्रकार जैन समोसा, जैन कचौरी, जैन खमण आदि में भी मेदे की बासी पट्टी, कालातीत मेदा और खमण के लिए रात–बासी कच्ची छाछ का बोला, फाल्गुन शुक्ला 14 चतुर्दशी के पश्चात् आठ माह तक हरे धनिये, पत्ता गोभी आदि

का उपयोग होता है जो कि आठ महिने अभक्ष्य है । अतः खाने से पूर्व सावधान होने जैसा है । अर्थात्, कहने का आशय यह है कि ऐसी अभक्ष्य वस्तुओं के आगे जैन शब्द लगा हुआ होने से वह वस्तु खाने योग्य नहीं बनती । ऊपर का लेबल बदलने मात्र से माल की गुणवत्ता नहीं बढ जाती । अंदर का माल तो डुप्लीकेट ही है, अतः सावधान होना चाहिए, शब्द जाल से भ्रमित न हों ।

E. जंक फूड

सत्य घटना : वडोदरा का कँपकँपी उठे ऐसा किस्सा है । वहाँ एक लडकी ने रात्रि में लॉरी वाले के पास से पानी पूरी खाई, खाकर घर लौटी, रात्रि में सो गई, दूसरे दिन तो उसके शरीर में ऐसा रोग फैला कि संपूर्ण शरीर में फोडे उठ गए और उनमें कीडे बुदबुदाने लगे । भयंकर वेदना होने लगी । वेदना असह्य थी, अतः अस्पताल में उसे भर्ती करवाया गया । डॉक्टरों ने उपचारों में कोई कमी न रखी, परंतु अंत में उन्होंने हाथ झटक दिये और कहा कि ऐसा केस पहला ही आया है । इसकी कोई दवाई नहीं है, मृत्यु ही निश्चित है । लडकी को प्रचंड वेदना सता रही है । छटपटा रही है, आँखों से अविरत अश्रु प्रवाहित हो रहे हैं । यह दृश्य जन्मदाता पिता से भी नहीं देखा जाता था, वह भी आँसू बहा रहा है । क्या उपाय करें ? कहाँ जाएँ ? डॉक्टरों ने कह दिया कि अब जहर का इंजेक्शन देकर लडकी की जीवन लीला समाप्त करने के सिवाय अन्य कोई चारा नहीं है । अनिच्छा से भी पिता को यही उपाय आखिरकार स्वीकार करना पडा, अन्यथा 17–18 वर्षीया कॉलेज में अध्ययनरत युवा पुत्री की मृत्यु की कामना कौन करें? उसने बाहर का खाया, रात्रि में खाया, जिससे उसमें कोई विषैली वस्तु या कोई विषैला जंतु खाने में आया होगा ? जिसके कारण उसकी ऐसी स्थिति हुई ।

भारत सरकार के आरोग्य मंत्रालय ने गत वर्ष 16 शहरों के होटलों में सर्वेक्षण करवाया, उसमें जानने मिला कि खुराक के संग्रह हेतु बर्तन व पेटियाँ खुल्ली एवं गंदी थी । उस पर मक्खियाँ और जीव–जंतु उड रहे थे और कर्मचारी हाथ व बर्तनों को साफ किए बिना ही खुराक की वस्तुओं का मिश्रण कर रहे थे । आरोग्य व स्वच्छता का कोई ध्यान देते नहीं थे ।

तो मित्रों ! आप भी ऐसी स्थिति के शिकार न बनें । इस बात के लिए सजग रहे ! और अपना स्वाद या शौक छोड दें ।

जंक फूड के विषय पर मुकुंद मेहता का एक लेख पढने में आया । उसके संक्षेप में कुछ शब्द यह है कि **अंग्रेजी शब्द जंक का अर्थ है निरर्थक वस्तुएँ या कचरा** । यह शब्द जब आहार के लिए प्रयुक्त हो तब जो लोक जंक फूड खाने के अभयस्त है, उन्हें इशारे में समझना चाहिए, कि वे जब जब जंक फूड खाते है, तब तब वे ज्ञात–अज्ञात वश अपने शरीर में कचरे जैसा आहार डालते हैं । शरीर को ऐसे आहार से पोषण प्राप्त होने की बात तो कोसो दूर रही, परंतु शरीर को प्रत्येक रीति से हानि पहुँचती है । क्योंकि उसमें मसाले, तेल के बजाय पामऑइल और अन्य भी पदार्थ जो उपयोग में लेते हैं, उनसे हार्ट अटेक, बी.पी., पेट में एसीडीटी, जलन आदि अनेक रोग होते है और आपको तो पता ही होगा कि इडली के आटे में खमीर (आथा) लाने के लिए पोटरी को गटर में लटकाया जाता है । बनाने की गंदी विधि है इतना ही

नहीं, परंतु उसमें लाईट के कारण उडते हुए छोटे छोटे जीव जंतु उत्पन्न होते है और दिखाई न दें ऐसे गंदे स्थान में बसे हुए अनेक प्रकार के वायरस, बेक्टेरिया, एलर्जी उत्पन्न करने वाले तत्व फफूंद और कैंसर उत्पन्न करने वाले पदार्थ जब आप जंकफूड खाते हो, तब आपके पेट में प्रवेश कर स्थायी हो जाते हैं। यह तथ्य जानते हो न ?

तो बच्चों ! इस प्रकार समझकर पीझा, बर्गर, मसाला ढोसा, सेंडविच, ग्रीन सेंडविच, दाबेली, पफ, चाइनीज, होट डॉग, मन्चूरीयन, पाऊभाजी, स्लाईस, हक्का नूडल्स, वडा पाऊ, डोमीनोस् पीझा आदि डिशीज् (Dishes = Disease = Decease = मृत्यु) जैसी अंडबंड खाने की वस्तुएँ पेट में डालकर शरीर को हानि न पहुँचाएँ, क्योंकि आकर्षक लेबल और सुंदर पेकिंग में बिकते सभी खाद्य पदार्थ स्वास्थ्य के लिए अनुकूल नहीं होते। इसके अलावा कंदमूल, बासी, द्विदल आदि खाने से नरकादि में दुःख सहन करने पडते है वह अलग ! अन्य भी अभक्ष्य पदार्थ जैसे अंडे–माँस–शराब आदि पर विचारणा, व्यसन के विवेचन में आगे की जाएगी।

3. मन चाहे उतनी बार खाना नहीं : अपने जैन शास्त्रों में लिखा है कि साधु और श्रावक को शक्ति हो तो कम से कम प्रतिदिन एक ही बार भोजन अर्थात् एकासना करना चाहिए और पाँच तिथियों (दो अष्टमी– दो चतुर्दशी व शुक्ल पक्ष की पंचमी) में यथाशक्ति उपवास अथवा आयंबिल करना चाहिए। एकासना करने की शक्ति न हो तो बियासना, वह भी न हो सके तो, पूर्व में बताए अनुसार प्रतिदिन नवकारशी पच्चक्खाण तो अवश्य करना चाहिए। नवकारशी का अर्थ यह नहीं है, कि आप चाहे जितनी बार चलते–फिरते खाओ परंतु तीन बार एक स्थान पर बैठकर भोजन करना चाहिए। हम पशु नहीं है कि उनकी तरह दिनभर में जो भी खाने को मिले उसे चरते रहें, परंतु हम, विवेकशील मानव हैं, तो समय के अनुसार खाने का रखना चाहिए।

दृष्टांत : राजस्थान के एक छोटे से गाँव में एक वृद्ध बुढिया वंदन करने के लिए आई और उन्होंने एकासणे का पच्चक्खाण मांगा। मैंने पच्चक्खाण दिया। बात ही बात में पता चला कि चौदह वर्षों से वे एकासना कर रही है और साथ ही प्रतिमाह छः आयंबिल (दो अष्टमी, दो चतुर्दशी, शुक्ल पक्ष की पंचमी और बैठते महिने की एकम) करती हैं। माजी का शरीर देखा हो तो कमर से झुक चुकी थी, लकडी के सहारे चलती थी। आयु उनकी 84 वर्ष की थी, फिर भी अभी तक एकासने सतत जारी हैं। ऐसी उनकी दृढता एवं श्रद्धा है, तो अपने अंदर ऐसी दृढता नहीं आ सकती क्या ?

F. उबाला हुआ पानी पीएँ

तो इस प्रकार भोजन संबंधी विचारणा में भोजन किस प्रकार किया जाए आदि बातें समझाने के बाद पानी कैसा पीएँ ? यह भी साथ में ही बता देते हैं।

पानी उबला हुआ पीना चाहिए, क्योंकि कच्चे पानी में असंख्य जीव होने से और प्रतिक्षण वे जीव उसमें पैदा होते हैं और मरते है और वह पानी पीने से उन जीवों की हिंसा का दोष लगता है। उस दोष से बचने के लिए उबाला हुआ पानी पीना चाहिए। एकासना–बियासना न हो, केवल नवकारशी पच्चक्खाण

हो तब भी उबाला हुआ पानी पी सकते हैं । उससे हमें इतने जीवों को बचाने का लाभ मिलता है ।

जिज्ञासा : पानी उबालने से तो जीव मर जाते हैं । तो जीव हिंसा होने से दोष लगता है । तब ज्ञानी पुरुषों ने उबाला हुआ पानी पीने का विधान क्यों किया है ?

समाधान : पानी को उबालने से वे जीव मर जाते है, परंतु उबालने के पश्चात् बाद अमुक समय (3, 4 या 5 प्रहर) तक न तो उसमें नये जीव उत्पन्न होते हैं, न मरते हैं, और वह पानी पीने से नए उत्पन्न होने वाले जीवों की हिंसा से बच जाते हैं । अनावश्यक एवं अधिक मात्रा में हिंसा से बचने के लिए उबाला हुआ पानी पीने का विधान है । अल्प हानि एवं अधिक लाभ का इसमें गणित है । (स्वास्थ्य की दृष्टि से भी उबाला हुआ पानी पीने का सतत प्रचार किया जाता है ।) इस प्रकार आराधना एवं आरोग्य की दृष्टि से उबाला हुआ पानी पीना आवश्यक है । बिना उबाले हुए कच्चे पानी में तो पल पल में असंख्य जीवों की सतत उत्पत्ति जारी ही रहती है और वह कच्चा पानी पूरे दिन में जितनी बार आप पीते हो, उतनी बार जीव हिंसा का दोष लगता ही रहता है । जबकि कच्चे पानी को उबाला तब ही दोष लगा, बाद में लगने का प्रश्न ही नहीं रहता । अत: इतने जीवों की रक्षा का लाभ जानकर ही ज्ञानी भगवंतों ने उबाला हुआ पानी पीने की बात कही हैं ।

मुंबई–अहमदाबाद जैसे शहरों में कई श्रावक ऐसे हैं कि जिनके घरों में कच्चे पानी का पनहारा (घडे रखने की जगह) ही नहीं है । घर के सभी सदस्य उबाला हुआ पानी ही पीते हैं । नवजात शिशु को भी जन्म से ही उबाला हुआ पानी पिलाया जाता है । मैं (लेखक श्री) भी स्कूल में पढता था, तब उबाला हुआ पानी साथ में लेकर जाता था ।

जापान में लोग पानी गर्म किया हुआ–उबाला हुआ पीते है । वहाँ कोई मोटे लोग दिखाई नहीं देते ।

जिज्ञासा : उबाला हुआ पानी पीने से शरीर में गर्मी नहीं होती क्या ?

समाधान : सर्वप्रथम बात यह है कि यह मार्ग बताने वाले केवलज्ञानी–सर्वज्ञ ऐसे जिनेश्वर भगवान है । उन्हें अपने ज्ञान में सब प्रत्यक्ष होता है, साथ ही भगवान दयालु–कृपालु–कृपानिधान है । अत: उबाला हुआ पानी पीने से शरीर में गर्मी होती तो भगवान कभी ऐसा गलत मार्ग नहीं बताते । यह तो अज्ञानी लोगों का मात्र भ्रम है, अत: आप ऐसी बात में भ्रमित न हो । शास्त्रों में एक रज्जा साध्वीजी का दृष्टांत आता है कि इन साध्वीजी ने आधुनिक लोगों की तरह बोल दिया कि गर्म पानी पीने से गर्मी होती है । अत: अन्य सभी साध्वियों ने भी उबाला हुआ पानी पीना छोड दिया, परंतु एक छोटी साध्वी ने भगवान की बात पर दृढ श्रद्धा रखी और उन्होंने रज्जा साध्वी का कथन न मानते हुए उबाला हुआ पानी पीना जारी रखा । स्वयं अन्य साध्वियों को न समझा सकने से, पश्चाताप करते करते उन्हें केवलज्ञान की प्राप्ति हुई, परंतु जो मुख्य साध्वीजी (रज्जा) थी, जिन्होंने मिथ्या (गलत) प्ररुपणा की कि उबाला हुआ पानी पीने से गर्मी होती है, उनका भव भ्रमण बढ गया । छोटी साध्वी के उपदेश से अन्य साध्वियों ने उबाला हुआ पानी पीना पुन: प्रारंभ कर दिया ।

10. माता-पिता का उपकार

जिस माँ ने नव मास तक गर्भ में रखकर पाल पोषकर, गीले में से सूखे में सुलाया। ठंडी में हमें अपने आंचल में सुलाया, गरमी में शीतल पवन बन गयी। जिस पिता ने हमे विविध प्रकार की शिक्षा, विविध कलाओं में निपुण बनाने के लिए दिन-रात भाग दौड़ की। ऐसे माता पिता का हर पल जो संतानों के भविष्य संवारने में ही होता है। हमारे व्यवहारिक जीवन को सुखमय बनाने के लिए संपूर्ण ध्यान रखते है। मनुष्यत्व के योग्य बनाकर तैयार करने वाले माता-पिता के उपकार का बदला ऐसा कौन कृतघ्नी निष्ठुर हृदय वाला होगा कि जो भूल जायेगा ?

बालकों को माता-पिता के वचनों का भी उल्लंघन नहीं करना चाहिए। उनके वचनों का मान रखकर पालन करना चाहिए। प्राय: आजकल देखने में आता है कि हर रोज माँ शाम 6.00 बजे हमें बुलाती है और खाना खाने को कहती है, ये बात हमारे दिमाग में जम जाती है। इसलिए फिर से जब माँ शाम को बुलाएगी तो हम तुरंत उनकी बात को काट देते है और कहते है कि ''हाँ माँ, मुझे पता है आप खाने के लिए ही बुला रही हो'', उनकी बात सुनी-अनसुनी कर देते हैं। जबकि उस वक्त माँ शायद कुछ ओर भी कहने आ सकती है।

बच्चे माता--पिता की बातों को सुनना भी पसंद नहीं करते हैं, चिड़ जाते है। और उनकी बात काटकर उन्हें चुप करा देते हैं। पर जिन माता-पिता ने ये जुबान दी, बोलना सीखाया, सोचने समझने की शक्ति दी, उन्हें कैसे नासमझ करार कर लेते हैं। बालको को अपने माता-पिता से सच्चा प्रेम रखना चाहिए। वे कैसे धर्मी एवं सुखी हो उसके लिए निरंतर ध्यान रखना। खाने-पीने, पहनने-ओढने, सोने-बैठने की व्यवस्था के साथ-साथ उनका जीवन धर्ममय बने वैसी उत्तम व्यवस्था करके देना।

बड़ी उम्र के माता-पिता को विश्रांति, समाधि मिले वैसे बालक को करना चाहिए। उनके हृदय को थोडा भी दु:ख न पहुंचे उसके लिए पूर्ण ध्यान रखना। उनकी सेवा में नौकर-चाकर तो भले ही रखना परन्तु खुद भी उनकी सेवा-चाकरी करना। वृद्ध, ग्लान और अशक्त माता-पिता की बारंबार संभाल लेना।

सुबह उठकर उनको नमस्कार करना। कोई भी कार्य का प्रारंभ करने से पहले उनकी सलाह लेना और योग्य रीत से उसको स्वीकार करना-अमल में लाना।

माता-पिता को तीर्थ यात्रा करने की इच्छा हो तो तीर्थयात्रा कराना। महापुरूषों का समागम कराना और जीवन धर्म परायण बने वैसी अनुकूलता करके देना। माता-पिता की भक्ति के लिए कुछ उदाहरण ध्यान में रखने जैसे है:-

1. गर्भ में आने के बाद श्री वीर प्रभु ने ''मेरे हलन-चलन से माता को पीडा न हो तो अच्छा है'', इस आशय से थोडे समय के लिए गर्भ में स्थिर रहे थे।

2. आदिनाथ भगवान ने केवलज्ञान प्राप्त करके सर्वप्रथम अपनी माता मरुदेवी को तारा था।

3. रामचन्द्रजी ने अपने पिताजी दशरथ राजा का वचन भंग न हो उस भावना से राज्य वैभव का त्याग करके वनवास स्वीकारा था ।

4. भीष्म पितामह ने अपने पिताजी की खुशी के लिए आजीवन ब्रह्मचर्य व्रत का स्वीकार किया था।

5. 14 विद्या के पारंगत आर्यरक्षितसूरि म.सा. ने अपने माताजी की खुशी के लिए समस्त संसार के भौतिक सुखों का त्याग करके 14 पूर्व का अध्ययन करने हेतु चारित्र अंगीकार किया था ।

6. राज गोपीचन्द्र ने अपनी माताजी की खुशी के लिए राज्य और रानियों का त्याग कर संन्यास स्वीकारा था ।

7. कलिकाल सर्वज्ञ हेमचन्द्राचार्य म.सा. अपने माता साध्वीजी म.सा. को अंतिम समय आराधना में सवा करोड़ नवकार गिनने का वचन दिया था ।

8. सुलस ने अभयकुमार की प्रेरणा पाकर पिताजी का हिंसामय कसाई का धंधा छोड़कर पिताजी को भी पापमय धंधा छुडवाने का और तप मय अंतिम समय में समाधि देने का भरचक प्रयत्न किया था ।

9. माता-पिता के वही सच्चे पुत्र है जो उनकी लोकविरूद्ध और धर्मविरूद्ध न हो ऐसी सभी अच्छी बातो को माने। अगर अपने माता-पिता कभी लोकविरूद्ध और धर्मविरूद्ध कोई बात/आचरण करे तो उनको समझाकर सुधारे वैसे पुत्र माता-पिता के सच्चे ही नहीं परन्तु महान पुत्र है । उनसे माता-पिता का गौरव और पुण्य दोनो बढ़ता है । हमें सच्चे ही नहीं परन्तु महान पुत्र बनना है । अतः कम से कम इतना मन में संकल्प करे की हम कभी हमारे माता-पिता को हमसे अलग नहीं करेंगे । हम माता-पिता को हमारे साथ रखेंगे और एक इससे भी श्रेष्ठ संकल्प यह करे –

1–माता–पिता से हम कभी भी अलग नहीं होंगे, हम हमेशा माता–पिता के साथ रहेंगे ।

2–उनकी बारी नहीं डालेंगे, हम ही क्रमशः उनके पास जाकर रहेंगे ।

3–उनको वृद्धाश्रम में कभी नहीं भेंजेंगे ।

4–हम उनकी मिल्कत का बंटवारा सामने से नहीं करवाऐंगे ।

5–वह सामने से जो देंगे उसको उन्हीं के हाथों से परोपकार आदि कार्यों में लगवा देंगे ।

6–हम रोज उनके पास 1 घंटा बैठेंगे और उनसे धर्म चर्चा करेंगे, धार्मिक नैतिक कथाए सुनेंगे ।

7–माता–पिता के परम उपकारी ऐसे हमारे दादा–दादी, नाना–नानी के पास भी हम उनका अनुभव ज्ञान ग्रहण करेंगे ।

8–उनकी भी सेवा–सुश्रुषा करेंगे, उनके साथ भी समय समय धार्मिक, नैतिक चर्चा–विमर्शना करेंगे ।

9–टी.वी. से ज्यादा समय माता–पिता, दादा–दादी के साथ बिताएंगे । और हाँ, उनकी सभी जरूरते पूरी कर देना ही काफी नहीं है, बल्कि रोज उनसे स्नेह से बात करना, टाइम देना यह भी जरूरी है, क्योंकि हर चीज में पैसे से ही पूर्ति नहीं की जा सकती है । प्रेम–स्नेह का काम स्नेह से ही होता है – पैसे से नही ।

11. जीवदया-जयणा

जीव विचार

सब धर्मों का मूल अहिंसा है । अहिंसा यानि जयणा-प्रयत्नपूर्वक जीवों की रक्षा करना । जयणा धर्म की जननी (माता) है । यदि माता ही न हो तो धर्म का जन्म कैसे हो सकता है ? हम जीव रक्षा तब ही कर सकते हैं, जब हमें जीवों के प्रकार और उनके उत्पन्न होने के स्थान का स्पष्ट ज्ञान हो । जीवन में धर्म की उन्नति और धर्म पालन जयणा से ही हो सकता है । जीवों को पहचानकर उन्हें अभयदान देने वाले को भी सदा अभयदान मिलता है । जीवों की रक्षा करने वालों के जीवन में रोगोत्पत्ति नहीं होती है एवं वे स्वस्थता पूर्वक लंबा जीवन जीते हैं ।

इस प्रकरण में संसारी जीवों का वर्णन है । जीवों के 563 भेद सिखने के पहले कितनी ही परिभाषाएँ सिखनी जरूरी है । वे इस प्रकार है -

1. **जीव** - प्राण को जो धारण करे, उसे जीव कहते हैं । प्राण 10 (दस) हैं । 5 इन्द्रिया + 3 योग + श्वासोच्छ्वास + आयुष्य = 10 प्राण एवं ज्ञान-दर्शन-चारित्र जिसके लक्षण है, जिसे सुख-दुःख का अनुभव होता है, वह जीव कहलाता है । जैसे पशु, पक्षी, जीवजंतु, पानी, अग्नि, वनस्पति मनुष्य वगैरह ।
2. **मुक्त** - आठ कर्मों का क्षय करके मोक्ष में जाने वाले, जिनके जन्म, जरा (वृद्धावस्था), मृत्यु, हमेशा के लिए बंद हो गये हैं, जो अनंत सुख का अनुभव करते हैं ।
3. **मरण** - जीव (आत्मा) का शरीर से वियोग ।
4. **त्रस** - सुख-दुःख में खुद की इच्छानुसार हलन-चलन करने वाले जीव । जैसे चींटी, मनुष्य वगैरह ।
5. **स्थावर** - सुख-दुःख में खुद की इच्छानुसार हलन-चलन नहीं करने वाले जीव । जैसे पृथ्वी, पानी वगैरह ।
6. **सूक्ष्म** - चर्मचक्षु से जो दिखाई नहीं देते एवं ऐसे जीव, जिन्हें छेदा-भेदा और जलाया नहीं जा सकता। उन्हें सूक्ष्म कहते हैं ।
7. **बादर** - चर्मचक्षु से जो देखे जा सके वैसे स्थूल शरीरधारी जीव ।
8. **पर्याप्ति** - आहारादि पुद्गल के समूह में से और पुद्गल के ग्रहण-परिणमन के कारण उत्पन्न होने वाली आत्मा की शक्ति । पर्याप्ति छः प्रकार की है - आहार, शरीर, इन्द्रिय, श्वासोच्छ्वास, भाषा एवं मन ।
9. **पर्याप्त** - जो जीव स्वयोग्य पर्याप्ति पूर्ण करके मरते हैं वे ।
10. **अपर्याप्त** - जो जीव स्वयोग्य पर्याप्ति पूर्ण किये बिना मरते हैं, वे ।

जीवों के 563 भेद का चार्ट

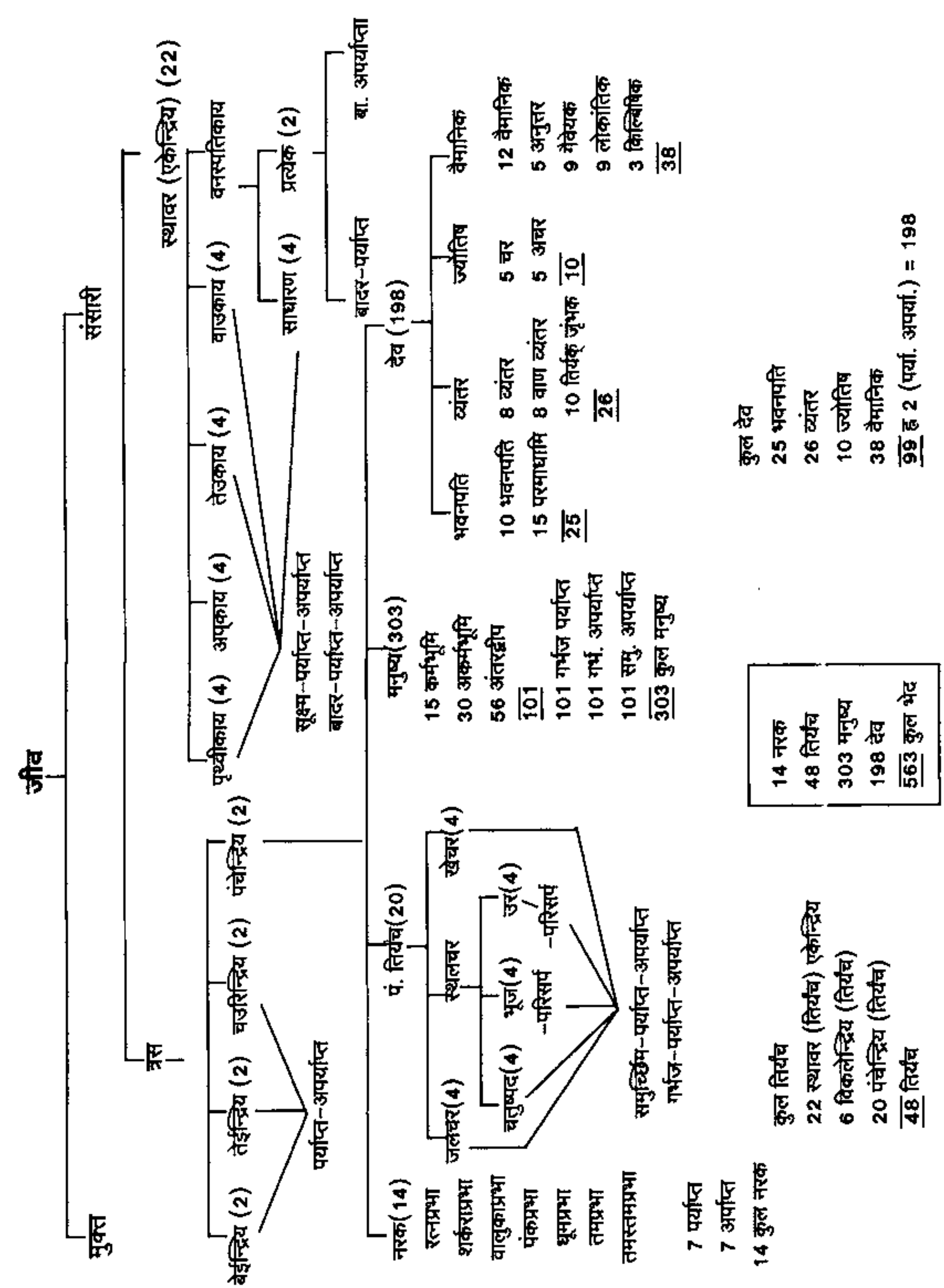

11. **साधारण** – यह वनस्पति का भेद है। इसके एक शरीर में अनंत जीव होते हैं। निगोद भी इसी में आता है लक्षण–जिस वनस्पति की नसें–सांधे गुप्त हो, तोड़ने से बराबर टुकड़े होते हो वगैरह, जैसे कि - आलु, गाजर, अदरक।

12. **प्रत्येक** – जिसके एक शरीर में एक जीव होता है। जैसे कि – फल–फूल, मिट्टी वगैरह।

13. **एकेंद्रिय** – एक इन्द्रिय–चमड़ीवाले जीव। जैसे पृथ्वी, पानी, अग्नि वगैरह।

14. **बेइन्द्रिय** – दो इन्द्रियाँ–चमड़ी और जीभ वाले जीव। जैसे – शंख, कोड़ी, कृमि वगैरह।

15. **तेइन्द्रिय** – तीन इन्द्रियाँ – चमड़ी, जीभ एवं नाकवाले जीव। जैसे – चींटी, मकोड़े वगैरह।

16. **चउरिन्द्रिय** – चार इन्द्रियाँ – चमड़ी, जीभ, नाक एवं आँखवाले जीव। जैसे भमरा (भौरां), मक्खी, बिच्छू वगैरह।

17. **पंचेन्द्रिय** – पाँच इन्द्रिय – चमड़ी, जीभ, नाक, आँख और कान वाले जीव। जैसे कि हाथी, सर्प, मछली, देव, नारक, मनुष्य वगैरह।

18. **समूर्च्छिम** – किसी निमित्त बिना अपने आप उत्पन्न होने वाले जीव। ये बिना मनवाले होते हैं। इन्हें असंज्ञि भी कहते हैं।

19. **गर्भज** – माता–पिता के संयोग से जन्म लेने वाले जीव।

20. **जलचर** – पानी में रहने वाले जीव मछली, मगरमच्छ वगैरह।

21. **स्थलचर–चतुष्पद** – भूमि पर चलते चार पैर वाले जीव। जैसे हाथी, घोड़ा, गाय वगैरह।

22. **स्थलचर–भुजपरिसर्प** – जिनके आगे के दो पैर, हाथ का भी काम करते हैं। जैसे बंदर, नकुल (Mangoose) वगैरह।

23. **स्थलचर–उरपरिसर्प** – पेट से चलनेवाले जीव। जैसे सर्प, अजगर वगैरह।

24. **खेचर** – आकाश में उड़नेवाले जीव। जैसे पोपट, कोयल, मोर।

25. **संज्ञि** – मनवाले जीव।

(1) **कर्मभूमि :** पांच भरत, पांच ऐरावत एवं पांच महाविदेह क्षेत्र के मानव। जहाँ असि (हथियार)– मसि (लेखनी) एवं कृषि (खेती) से जीवन व्यवहार चलता हो वह कर्मभूमि। मोक्षमार्ग के रहस्य को समझकर जहाँ से चारित्र ग्रहण कर मोक्ष में जा सकते हों, साथ ही जहाँ पर तीर्थंकर, चक्रवर्ती, वासुदेव, बलदेव आदि महान् नरपुंगवों का जन्म होता है और जिस भूमि में योगसाधना करके निर्वाण–पद प्राप्त कर सकते हैं वह कर्म भूमि।

(2) **अकर्मभूमि:** जहाँ असि, मषि, कृषि से कोई व्यवहार न होता हो, जहाँ के मानव कल्पवृक्षादि के फल खाते हों। युगलिक (जुडवा–पुरुष एवं स्त्री) रूप में एक ही साथ जन्म एवं मृत्यु होती है। जंबुद्वीप में 6, धातकी खंड में 12, पुष्करार्ध द्वीप में 12 इस तरह कुल मिलाकर इस के 30 भेद निम्नानुसार है।

जंबुद्वीप का 1 हिमवंत+1 हैरण्यवंत+1 हरिवर्ष+1 रम्यक्वर्ष+1देवकुरु+1 उत्तरकुरु ।

धातकी खंड के पूर्व एवं पश्चिम में स्थित 2 हिमवंत + 2 हैरण्यवंत + 2 हरिवर्ष + 2 रम्यक्वर्ष + 2 देवकुरु + 2 उत्तरकुरु एवं अर्धपुष्करवर द्वीप के भी धातकी खंड की भांति 2-2 अकर्मभूमियाँ, कुल 30 अकर्मभूमियाँ है। (6+12+12=30)

(3) अंतरद्वीप-अकर्मभूमि के सदृश ही यहाँ भी कार्यव्यवहार चलता है। ये कुल 56 क्षेत्र है। ये लवण समुद्र में रहे हिमवंत एवं शिखरी पर्वत के 8 सिरों पर प्रत्येक सिरे पर 7 क्षेत्र के अनुपात से 56 क्षेत्र है।

पर्याप्त-अपर्याप्त का विशेष स्वरूप

पर्याप्ति--पुद्गलों की सहायता से उत्पन्न हुई आत्मा की शक्ति विशेष। यह पर्याप्ति छः प्रकार की है।

1. **आहार पर्याप्ति** – आहार ग्रहण करके उसे रस और खल (कचरे) के रूप में परिवर्तित करने की शक्ति।
2. **शरीर पर्याप्ति** – रस रूप में रहे हुए आहार में से सात धातुमय शरीर बनाने की शक्ति।
3. **इन्द्रिय पर्याप्ति** – सात धातु में से जिस जीव को जितनी इन्द्रियाँ है उतनी इन्द्रियाँ बनाने की शक्ति।
4. **श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति** – श्वासोच्छ्वास वर्गणा के पुद्गलों को ग्रहण करके श्वासोच्छ्वास रूप में परिणमन करने की शक्ति।
5. **भाषा पर्याप्ति** – भाषा वर्गणा के पुद्गलों को ग्रहण करके भाषा रूप में परिणमन करने की शक्ति।
6. **मन पर्याप्ति** – मनो वर्गणा के पुद्गलों को ग्रहण करके मन के रूप में परिणमन करने की शक्ति।

स्वयोग्य पर्याप्तियाँ

एकेन्द्रिय – इन्हें आहार, शरीर, इन्द्रिय और श्वासोच्छ्वास ये चार पर्याप्तियाँ होती है।

विकलेन्द्रिय (बेई.-तेई.-चउ.) असंज्ञि पंचेन्द्रिय – इन्हें मन सिवाय की पाँच पर्याप्तियाँ होती है।

संज्ञि पंचेन्द्रिय (गर्भज मनुष्य, गर्भज तिर्यंच, देव, नारक) – इन्हें छः पर्याप्तियाँ होती है।

कोई भी जीव कम से कम तीन पर्याप्तियाँ पूरी किये बिना नहीं मरता है। परंतु आगे की स्वयोग्य पर्याप्तियाँ यदि पूर्ण करके मरें तो जीव पर्याप्त कहलाता है। यदि पूरी किये बिना मरे तो अपर्याप्त कहलाता है। जैसे कि पृथ्वी के जीव की स्वयोग्य पर्याप्ति चार है। यदि वह चारों पर्याप्तियाँ पूर्ण करके मरे तो पर्याप्त और चौथी अधूरी छोड़कर मरे तो अपर्याप्त कहलाता है।

मनुष्य से लेकर वनस्पति वगैरह एकेन्द्रिय में आत्मतत्त्व की सिद्धि

1. मनुष्य में से आत्मा के चले जाने के बाद, उसे ग्लूकोस के बोतल या ऑक्सीजन आदि नहीं चढ़ते । क्यों कि आत्मा हो तब तक ही (यदि शरीर कोमा में चला जाए तो भी) ब्लड सर्क्युलेशन होता है । इसलिए आत्मा है यह सिद्ध होता है ।
2. पशु, पक्षी, चींटी, मकोड़ा, मच्छर वगैरह में भी आत्मा है तब तक हलन-चलन, खाने या देखने वगैरह की क्रिया करते हुए देखे जाते हैं ।
3. **(अ) पृथ्वी** : पत्थर और धातुओं की खान में जो वृद्धि होती है, वह जीव बिना असंभवित है।

   (आ) पानी : कुआँ वगैरह में पानी ताजा रहता है और नया-नया आता रहता है जिससे पानी में जीव की सिद्धि होती है ।

   (इ) अग्नि : तेल, हवा (ओक्सीजन), लकड़े आदि आहार से अग्नि जीवंत रहती है... अन्यथा बुझ जाती है । इससे अग्नि में जीव की सिद्धि होती है ।

   (ई) वनस्पति – जीव हो तब तक सब्जी, फल वगैरह में ताजापन दिखता है ।

याद रखो : पृथ्वी, पानी वगैरह में जो जीव है वे तुम्हारे जैसे ही है और वे तुम्हारे माता-पिता, भाई-बहन, पति-पत्नी वगैरह बन चूके हैं । अब यदि तुम इन जीवों की जयणा नहीं पालोगे तो तुम्हें भी पृथ्वी, पानी वगैरह एकेन्द्रिय के भव में जाना पड़ेगा ।

प्रश्न: पृथ्वीकाय आदि जीवों को स्पर्श से वेदना होती है, वह क्यों नहीं दिखती ?

उत्तर: गौतम स्वामी, महावीर स्वामी को आचारांग सूत्र में यह प्रश्न पूछते हैं । प्रभु जवाब देते हैं –कि किसी मनुष्य के हाथ-पैर काट दिये जायें, आँख और मुँह पर पट्टा बांध दिया जायें । फिर उस व्यक्ति पर लकड़ी से खूब प्रहार किया जाय तो वह मनुष्य अत्यंत वेदना से पीड़ित होता है । लेकिन उसे व्यक्त नहीं कर सकता । उसी प्रकार पृथ्वी, पानी वगैरह के जीवों को उससे कई गुणी अधिक वेदना अपने स्पर्श मात्र से होती है । लेकिन व्यक्त करने का साधन न होने से वे उन्हें व्यक्त नहीं कर सकते ।

जीवन में आचरने योग्य जयणा की समझ

हम जैसे पैसों को संभालकर उपयोग में लेते हैं, जितने चाहिए उसी प्रमाण में व्यय करते हैं तो पैसों की संभाल या जयणा की गई कहलाती है । तो इस प्रकार हमें स्थावर जीवों की भी जयणा करनी चाहिए ।

चलते फिरते जीवों की रक्षा करने का तो सब धर्मों में कहा गया है परंतु जैन धर्म का जीव-विज्ञान अलौकिक है । इसके प्ररूपक केवलज्ञानी-वीतराग प्रभु हैं । उन्होंने मनुष्य में जैसी आत्मा है वैसी ही

आत्मा पशु, पक्षी, मक्खी, चींटी, मच्छर, पृथ्वी, पानी, अग्नि, वायु और वनस्पति वगैरह 563 जीव भेदों में बतायी है ।

जयणा का उद्देश्य

जैसे कपड़े का बड़ा व्यापारी सबको कपड़े पहुँचाता है, फिर भी सबको कपड़े पहुँचाने का अभिमान अथवा उपकार करने का गर्व नहीं करता, क्योंकि उसका उद्देश्य लोगों को कपड़े पहुँचाने का नहीं लेकिन पैसा कमाने का ही होता है । उसी प्रकार हम जीवों को बचाएँ, जीवों की जयणा का पालन करें तो हम जीवों पर उपकार नहीं करते बल्कि अपने ही अहिंसा गुण की सिद्धि के लिए करते हैं ।

जयणा का फल

जयणा का पालन करने से रोग वगैरह नहीं होते हैं । सुख मिलता है, शाता मिलती है, आरोग्य मिलता है, समृद्धि मिलती है । आत्मभूमि के कोमल बनने से गुणप्राप्ति की योग्यता आती है, जिससे क्रमशः आत्मा को मोक्ष की प्राप्ति सरलता से होती है ।

प्रश्न: स्थावर में जीव प्रत्यक्ष रूप से नहीं दिखते, इसलिए उन्हें बचाने का उत्साह हमें किस प्रकार जगाना चाहिए ?

उत्तर: जिस प्रकार जब हम क्रिकेट प्रत्यक्ष नहीं देखते हैं, फिर भी कॉमेन्ट्री सुनकर उसे सत्य मानकर आनंद लेते हैं, उसी प्रकार जिनेश्वर भगवंतों ने इन जीवों को एवं उनकी वेदना को साक्षात् देखी है और उसकी कॉमेन्ट्री दी है । संसार के चलते-फिरते मनुष्य पर विश्वास रखने वाले, हमें यदि परमात्मा पर विश्वास आ जाए तो हमारे जीवन में स्थावर जीवों की भी जयणा का वेग आ सकता है । जयणा को प्राधान्य देकर हम प्रत्येक कार्य कर सकते हैं । बाकी भगवान तो कहते हैं कि 'आत्मवत् सर्वभूतेषु' यदि तुम्हें दुःख पसंद नहीं है तो किसी को भी दुःख हो, वैसी प्रवृत्ति भी नहीं करनी चाहिए ।

जयणा के स्थान

1. **पृथ्वीकाय** : (माटी आदि) सभी प्रकार की मिट्टी, पत्थर, नमक, सोड़ा (खार), खान में से निकलने वाले कोयले, रत्न, चाँदी, सोना वगैरह सर्व धातु पृथ्वीकाय के प्रकार हैं ।

   नियम :-

   अ) ताजी खोदी हुई मिट्टी (सचित्त) पर नहीं चलना लेकिन पास में जगह हो वहाँ से चलना।

   आ) सोना, चाँदी, हीरा, मोती, रत्न वगैरह के आभूषण पृथ्वीकाय के शरीर (मुर्दे) हैं । इसलिए उनका जरूरत से ज्यादा संग्रह नहीं करना, मोह नहीं रखना, हो सके उतना त्याग करना।

2. **अप्काय (पानी):** सभी प्रकार के पानी, ओस, बादल का पानी, हरी वनस्पति पर रहा हुआ पानी, बर्फ, ओले वगैरह अप्काय (पानी के जीव) हैं ।

नियम : -

अ) फ्रिज का पानी नहीं पीना, बर्फ का पानी नहीं पीना एवं बर्फ नहीं वापरना ।

आ) पानी नल में से बाल्टी में सीधा ऊपर से गिरे तो इन जीवों को आघात होता है । इसलिए बाल्टी को नल से बहुत नीचे नहीं रखना । जिससे पानी फोर्स से नीचे न गिरे ।

इ) गीजर का पानी उपयोग में नहीं लेना ।

ई) कपड़े धोने की मशीन में सर्वत्र पानी छानने का और संखारे का विवेक रखना ।

उ) पाँच तिथि (महीने की) तथा वर्ष की छः अट्ठाई में कपड़े नहीं धोना । हमेशा नहाने वगैरह के लिए ज्यादा पानी नहीं वापरना और साबुन का उपयोग शक्य हो तो नहीं करना ।

ऊ) बार-बार हाथ, पैर, मुँह नहीं धोना ।

<u>जीवों की जयणा का उपकरण</u>

1. **गरणा :** पानी के छानने हेतु सुयोग्य कपड़ा ।
2. **सावरणी** : घर का कचरा निकालने के लिए मुलायम स्पर्श वाली सावरणी (झाड़ु) ।
3. **पूंजणी** : खास प्रकार की सुकोमल घास से बनायी हुई मुलायम स्पर्शवाली छोटी पींछी ।
4. **चरवला :** सामायिक प्रतिक्रमण में उठते बैठते पूंजने-प्रमार्जने के लिए जरूरी उपकरण ।
5. **मोरपींछी** : मोर के पंखों को बांधकर बनाया हुआ उपकरण, मूर्ति, पुस्तक, फोटो, वगैरह को पूंजने का उत्तम साधन ।
6. **छलनी :** अनाज, आटा, मसाला आदि छानने हेतु अलग-अलग छलनी ।
7. **चंदरवा :** बनती हुई रसोई में ऊपर से जीव जंतु न पड़े, उस हेतु से रसोई घर में ऊपर बांधने का कपड़ा ।

<u>जीवों की जयणा की जड़ी बूटियाँ</u>

1. **मोर के पंख :** मोर के पंख को रखने से या हिलाने से सांप तथा छिपकली भाग जाते हैं ।
2. **काली मिर्च :** केसर की डिब्बी में काली मिर्च के दाने डालने से गीलेपन के कारण उसमें होती जीवोत्पत्ति रुक जाती है ।
3. **डामर की गोली :** कपड़े, पुस्तकों की बेग, अलमारी वगैरह में डामर की गोली रखने से जीवों

की उत्पत्ति नहीं होती है ।

4. **पारा :** अनाज में पारा की गोली डालने से अनाज सड़ता नहीं तथा जीवोत्पत्ति होती नहीं ।

5. **ऐरंडी का तेल :** गेहूँ, चावल, मसाला, आदि को यह तेल लगाने से जीव नहीं होते तथा उसकी गंध से चींटियाँ दूर चली जाती हैं ।

6. **घोड़ावज :** पुस्तकों की अलमारी में घोड़ावज रखने से जीवोत्पत्ति नहीं होती है ।

7. **तंबाकू :** कपड़े अथवा पुस्तकों की अलमारी में तंबाकू के पत्ते रखने से जीवोत्पत्ति नहीं होती है ।

8. **चूना :** उबालकर ठंडे किये हुए पानी में चूना डालने से वह पानी 72 घंटे तक अचित्त रहता है । चूना पोतने से दीवारों पर जीव-जंतु जल्दी नहीं आते हैं ।

9. **डामर :** डामर के उपर निगोद की उत्पत्ति नहीं होती । इससे उदेहि की उत्पत्ति भी रुकती है।

10. **केरोसिन :** चमड़ी के उपर केरोसिन घिसने से मच्छर नहीं काटते । जमीन पर केरोसिन वाले पानी से पोछा करने से चींटी नहीं आती है ।

11. **राख :** चींटियों की लाइन के आस-पास राख डालने से वें चली जाती हैं । अनाज में राख मिलाकर डिब्बे में रखने से अनाज सड़ता नहीं ।

12. **कपूर :** कपूर की गोली की गंध से चूहे दूर भागते हैं तथा उनका आना-जाना-दौड़ना कम हो जाता है । कपूर का पाउडर आजु-बाजु डाल देने से चींटी चली जाती है ।

13. **गंधारोवण :** लकड़ी की अलमारी में यह रखने से जिंगुर (वांदा=कॉकरोच) की उत्पत्ति नहीं होती।

14. **कंकु :** कंकु डालने से चींटियाँ चली जाती हैं ।

15. **हल्दी :** हल्दी डालने से चींटियाँ चली जाती हैं ।

16. **गेरू :** लाल रंग का चूना (गेरु) दीवार पर पोतने से उदेहि नहीं होती है ।

17. **रंग-वार्निश-पालिश :** लकड़ी पर निगोद और जीवोत्पत्ति रोकने हेतु ।

निगोद को पहचानो

चौमासे की ऋतु में घर के कम्पाउन्ड में, पुरानी दीवारों पर अथवा कमान की छत पर (अगासी) हरी, काली, भूरी, आदि रंगों की (सेवाल-लील) जम जाती हैं । उसी को निगोद कहते हैं । आलु वगैरह कंदमूल के जैसे ही निगोद भी अनंतकाय हैं । उसके एक सूक्ष्म कण में भी अनंत जीव होते हैं ।

उसके ऊपर चलने से, सहारा लेकर बैठने से, उस पर वाहन चलाने से अथवा उस पर कोई वस्तु रखने से या पानी डालने से निगोद के अनंत जीवों की हिंसा होती है ।

आलु (बटाटा) आदि अनंतकाय है । जब उन्हें दांतों तले चबाना महापाप है तो अनंतकाय ऐसी निगोद को हम पैरों के नीचे कैसे कुचल दें ?

निगोद की रक्षा करो

1. जो जगह अधिक समय तक गीली रहती है, वहाँ निगोद की उत्पत्ति होती है । बाथरूम भी यदि पूरा दिन गीला रहे तो उसमें भी निगोद की उत्पत्ति होती है । इसलिए घर का कोई भी स्थान अधिक समय तक भीगा न रहे, इसकी सावधानी रखें ।
2. नीचे देखकर चलना, रास्ते में कहीं पर भी निगोद जमी हुई हो तो एक तरफ हटकर स्वच्छ जगह पर चलना चाहिये ।
3. मकान के कम्पाउन्ड में चलने के रास्ते पर निगोद उत्पन्न न हो, उस हेतु बारिश का मौसम शुरु होने से पहले ही निम्न उपाय कीजिए जैसे (1) निगोद न हो ऐसी मिट्टी को बिछा देना अथवा ऐसी फ्लोरिंग करा देना । (2) डामर अथवा सफेद रंग का पट्टा लगा देना ।
4. एक बार यदि निगोद हो जाय तो उस पर मिट्टी नहीं डालनी चाहिए, न साफ करना या न उखेड़नी चाहिए और न ही कलर या डामर का पट्टा लगाना चाहिए । स्वाभाविक तरीके से वह सूख न जाएं तब तक उस पर कुछ नहीं करना चाहिए ।
5. लकड़ी के ऊपर रंग, वार्निश, पॉलिश करने से निगोद की उत्पत्ति नहीं होती है ।

फूलन को पहचानो

बासी खाद्य पदार्थ आदि पर सफेद रंग की फुग (फूलन) दिखाई देती है । यह खास करके चौमासे में विशेष होती है । मिठाई, खाखरा, पापड़, वड़ी व अन्य खाद्य पदार्थ, दवाई की गोलिया, साबुन पर, चमड़े के पट्टे पर, पुस्तक के पुठे पर तथा अन्य वस्तु पर गीलेपन के कारण रातोरात सफेद फुग जम जाती है । फुग होने के बाद वह खाद्य पदार्थ अभक्ष्य बन जाता है । उस वस्तु का स्पर्श करना अथवा यहाँ-वहाँ रखना भी निषेध है ।

यह फुग अनंतकाय है । इसे निगोद भी कहते हैं । इसके एक सूक्ष्म कण में अनंत जीव होते हैं ।

फूलन की रक्षा करो

* खाद्य पदार्थों को टाईट ढक्कन वाले डिब्बे में रखे । डिब्बे में से वस्तु लेते समय हाथ थोड़ा भी गीला न हो, उसका ध्यान रखे । ढक्कन बराबर बंद करें ।
* जिस चीज पर फूग जमी हो उसे अलग ही रखें तथा उसे कोई स्पर्श न करें इसका ध्यान रखें।
* छुंदा, मुरब्बा आदि को धूप में रखने से या चूल्हे पर चढ़ाते समय चाशनी कच्ची रहने से फूग हो जाती है ।
* गरम-गरम मिठाई डिब्बे में रख देने से फूग उत्पन्न हो सकती है ।
* बूँदी में चासणी यदि कच्ची रह गयी हो तो भी फूग हो जाती है ।

12. विनय - विवेक

A. देवद्रव्य विषयक सूचना

देवद्रव्य अर्थात् जिन मंदिर संबंधित, जिन मूर्ति आदि भरवाने के लिए, चढावे के इत्यादि बोले गये रुपये = द्रव्य, वह देवद्रव्य है।

इस रकम का ब्याज व्यवहार आदि से उपभोग करना, निजी कार्य में या अन्य किसी धार्मिक कार्य में देवद्रव्य का उपयोग करने से देवद्रव्य के भक्षण का दोष लगता है।

मंदिरजी के निर्माण कार्य आदि के लिए लायी हुई ईंट-पत्थर, लकडियाँ आदि का भी अन्य कार्यो में उपभोग करने से देवद्रव्य के भक्षण का दोष लगता है।

''श्रावक दिनकृत्य'', **''दर्शन शुद्धि''** इत्यादि ग्रंथों में कहा है कि जो मूढमति श्रावक चैत्यद्रव्य (देवद्रव्य) का भक्षणादि करता है उसे धर्म का ज्ञान नहीं होता और वह नरक गति का आयुष्य बांधता है।

साधुओं को भी देवद्रव्य आदि के फैलाव के लिए श्रावक को उपदेश देने का अधिकार है। भद्रिक जीव ने धर्मादिक के निमित्त पूर्व में दिया हुआ द्रव्य अथवा दूसरा देव द्रव्य नष्ट होता हो तो, साधुओं को भी अपनी सर्व उपदेश आदि शक्ति लगाकर उसका रक्षण करना/करवाना चाहिए। ऐसा करने से जिनाज्ञा की सम्यग् रीति से आराधना होती हैं।

यदि कोई देवद्रव्य का हरण करता हो, गलत इस्तेमाल करता हो तो साधुओ को उसकी उपेक्षा (नजरअंदाज) नहीं करनी चाहिए, क्योंकि साधु सर्व सावद्य व्यापार से विमुक्त होकर भी यदि देवद्रव्य की उपेक्षा करें, तो वह अनंत संसारी बनता है, तो श्रावक की, जो सावद्य व्यापार से युक्त ही है उसकी तो, क्या बात करना? अर्थात्

1. देवद्रव्य खानेवाला
2. खानेवाले की उपेक्षा करने वाला
3. थोडे द्रव्य में होनेवाला कार्य अधिक द्रव्य में कराने वाला (खुद का बीच में कमीशन रखने वाला)
4. मतिमंदता आदि से देवद्रव्य का नाश करने वाला
5. विपरीत हिसाब लिखने वाला
6. देवद्रव्य की आवक में बाधा डालने वाला
7. बोली के रुपये न देनेवाला

.... ऐसे जीव संसार में परिभ्रमण करते हैं।

देवद्रव्य होने से ही जिन मंदिर की व्यवस्था सुन्दर रूप से चलती है और जिनमंदिर की व्यवस्था सुन्दर होने से ही हमेशा पूजा सत्कार होना संभव है। तथा जहां जिन मंदिर होता है वही मुनिराजों का भी विहार=विचरण होता रहता है एवं उनके विचरण से जिनवाणी के उपदेश श्रवण का अवसर मिलता है और उससे ज्ञान-दर्शन आदि गुणों में वृद्धि होती है।

जो केवलीप्ररुपित धर्म की रक्षा करता है, ज्ञान–दर्शन गुणों की वृद्धि करने वाले ऐसे देवद्रव्य की सुरक्षा करता है अर्थात् पूर्व संचित देवद्रव्य का सही स्थान में सदुपयोग तथा दानादि द्वारा नया संचित करके उसकी वृद्धि करता है वह धर्म की अतिशय भक्ति करने वाला होने से ''तीर्थंकर'' पद पाता है।

पंद्रह कर्मादान तथा अन्य निंदाजनक व्यापार जैसे कत्लखाना वगैरह चलाकर इत्यादि कार्यों से नहीं बल्कि न्याय मार्ग से ही देवद्रव्य की वृद्धि करनी चाहिए। कहा है कि मोहवश कोई – कोई अज्ञानी पुरुष जिनेश्वर भगवान की आज्ञा से विपरित मार्ग से देवद्रव्य की वृद्धि करे तो संसार समुद्र में डुबते हैं।

मूल में जो साधारण द्रव्य हो उसे देवद्रव्य ठहराना भी गलत है।

देवद्रव्य का उपयोग केवल जिनमंदिर के कार्यों में ही होता है।

साधारण द्रव्य का उपयोग सर्व क्षेत्र में कर सकते हैं।

इसलिए जिस समय जिस जिनमंदिर में जिस क्षेत्रों में धन की आवश्यकता हो उस क्षेत्र में उचित दान देना चाहिए।

गृहस्थ को अपनी न्यायोपार्जित मिलकत में से शक्ति के अनुसार धर्म मार्ग में खर्च करना चाहिए। जो वार्षिक कमाइ होती है, उसमें से सेंकडे पाँच, दस, बीस, पच्चीस, पचास टका जितना भाग धर्मादि खाते के लिए बाहर निकालना और जहाँ जितनी जरुरत हो वहाँ उसका उपयोग करना।

देवद्रव्य का रक्षण हो और सही उपयोगिता हो उसका विशेष ध्यान रखना चाहिए उसमें ईमानदारी और सच्चाई होना जरुरी है।

Honesty Is the Best Policy.

अन्य स्थाने कृतं पापं धर्मस्थाने विनश्यति
धर्म स्थाने कृतं पापं वज्रलेपो भविष्यति

यानि अन्य स्थान (संसार में, दुकानादि में) किये हुए (चोरी आदि) पापों का सफाया धर्मस्थान (मंदिर–उपाश्रयादि) में होता है। परन्तु धर्मस्थान (मंदिर/उपाश्रयादि) में किये हुए (देवद्रव्यादि की चोरी आदि) पापों का सफाया कहीं नहीं हो पाता। वह आत्मा पर ऐसे चिपकते है, जैसे कपडे पर डामर। कपड़े पर चिपका डामर कपड़ा फटने तक नहीं निकलता वैसे धर्मस्थानादि पर किए गए देवद्रव्यादि के गड़बड़ घोटाले के पाप नरक आदि भवों में अनेक दुःख भोगने पर भी नहीं छूटते... ऐसे वज्रलेप जैसे पाप आत्मा पर चिपक जाते हैं। सावधान!!!

हम भले अन्य स्थानों में सीधे नहीं रहते, परंतु धर्मस्थानों में तो सीधा रहना ही है। यहां अगर टेडे चलना–माया–कपटादि करना नहीं छोड़ा तो फिर भवों भव तक टेड़े चलने वाले ऐसे पशुआदि के अवतारों में जाना पडेगा, सीधे चलने वाले मानवों का अवतार कभी नहीं मिलेगा। अतः कम से कम धर्मक्षेत्र में सरल और सच्चे बनने का संकल्प करें।......

13. सम्यग् ज्ञान

A. आठ कर्म

कर्म बंधन के विविध हेतु

ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय कर्म बंध के कारण : 1. आचार्यादि गुरु भगवंतों का अविनय, 2.असमय में स्वाध्याय, 3.समय पर अध्ययन न करना, 4.अस्वाध्याय के समय में स्वाध्याय करना, 5.शास्त्र निषिद्ध (मनाही वाले) स्थान में बैठकर अध्ययन करना, 6.पुस्तक, स्लेट, कागज, कवर, टिकट पर थूंक लगाना, 7.जूठे मुँह बात करना, 8.अशुचि=अशुद्ध अवस्था में बोलना, 9.जहाँ तहाँ पुस्तक रखना, 10.तकिये के रूप में पुस्तक का उपयोग करना, 11.पीठ पीछे पुस्तक रखना, 12.नीचे ज़मीन पर पुस्तक रखना 13. पुस्तक पास में रखकर पेशाब/लेट्रीन करना, 14.स्त्री के ऋतु धर्म = अंतराय (24 प्रहर=72 घंटे) के समय तीन दिन पुस्तक पढना, लिखना-स्पर्श करना, पत्र-पत्रिकाएँ पढना । 15. अखबार या पुस्तक के पृष्ठ में खाना, बूट चप्पल बाँधना, मिठाई मसाले की पुडिया बांधना, 16.पटाखे फोड़ना, 17.सर्वत्र ज्ञानियों पर प्रत्याघात करना, उनका अपमान करना, निंदा करना, 18.दर्शनगुण इन्द्रियधारक जीवों का नाश एवं दर्शनगुण के साधनभूत आँख, कान, नाक आदि इंद्रियों का नाश करना आदि से ज्ञानावरणीय एवं दर्शनावरणीय कर्मों का बंध होता है।

शातावेदनीय कर्म बंध के कारण : 1.गुरु भक्ति, 2. मन से शुभ संकल्प, 3. हृदय से बहुमान, 4. वचन से स्तुति, 5. काया से सेवा, 6. क्षमा, 7. समभाव से सहन करना, 8. सभी जीवों पर करुणा, अणुव्रत/महाव्रतों का पालन, 9. साधु समाचारी रूप योग का पालन, 10. कषायविजय, 11. सुपात्र को भक्तिवश दान, 12. गरीबों को अनुकंपा दान, 13. डरपोक को अभयदान, 14. धर्मदृढता, 15. अकाम निर्जरा 16. व्रतादि में दोष लगने न देना, 17. बालतप, 18. दया 19. अज्ञान कष्ट सहन करना इत्यादि कारणों से शातावेदनीय कर्म का बंध होता है ।

अशाता वेदनीय कर्म बंध के कारण : सामान्य तौर पर यह शाता वेदनीय कर्म से सर्वथा विपरीत है । 1. गुरुओं की अवज्ञा करना, 2. क्रोधित होना, 3. कृपणता (कंजूसाइ), 4. निर्दयता, 5. धर्म कार्यों में प्रमाद, 6. पशुओं पर अधिक बोझ लादना, 7. उनके अवयवों को छेदना, 8. उन्हें पीटना, 9. खटमल, दीमक आदि का नाश करना, 10. जंतुनाशक दवाईयों का उपयोग करना, 11. स्वयं को या दूसरों को शोक, संताप, दुःख आक्रंदन करना-करवाना, 12. आर्त्तध्यान, रौद्रध्यान, दूषित मन-वचन-काय योग आदि अशुभ परिणामो से अशातावेदनीय का बंध होता है ।

दर्शन मोहनीय कर्म बंध के कारण :1. उन्मार्ग की देशना देना, 2. मार्ग का नाश करना, 3. देवद्रव्य का हरण करना, 4. तीर्थंकरों की निंदा, 5. सुसाधु-साध्वी की निंदा, 6. जिनमंदिर जिनबिंब की निंदा, 7. जिनशासन की अवहेलना, 8. निंदित कृत्य करना इत्यादि कारणों से दर्शन मोहनीय कर्म का बंध होता है।

चारित्र मोहनीय कर्म बंध के कारण :1. सुसाधुओं की निंदा, 2. धर्मकार्य में विघ्न डालना, 3. संयमी की थोड़ी भी निंदा करना, 4. दूसरों के कषाय–नोकषाय की उदीरणा हो ऐसा वातावरण पैदा करना आदि कार्यों से चारित्र मोहनीय कर्म का बंध होता है ।

नोकषाय मोहनीय बंध के कारण

(1) **हास्य मोहनीय** : मजाक, दिल्लगी, विदूषक जैसी चेष्टा, हंसना–हंसाना, इत्यादि ।

(2) **रति मोहनीय** : देश–परदेश परिभ्रमण की उत्कंठा, विचित्र काम क्रीड़ा, खेल खेलना, आमोद–प्रमोद करना, दूसरों पर वशीकरण मंत्र का प्रयोग करना इत्यादि ।

(3) **अरति मोहनीय कर्म :** ईर्ष्या, उद्वेग, हाय–वोय, पाप करने के स्वभाव वश दूसरों के सुख का नाश करना, अकुशल कार्यों को उत्तेजना देना आदि ।

(4) **शोक मोहनीय** : शोक करना–करवाना रुदन करना कल्पांत करना इत्यादि ।

(5) **भय मोहनीय :** भयभीत होना, दूसरों को भयभीत करना, त्रास देना, दया विरहित क्रूर बनना आदि।

(6) **जुगुप्सा मोहनीय :** चतुर्विध संघ की निंदा,घृणा, विभूषा की इच्छा, बाह्यमेल और दूसरों की भूल के प्रति धृणा, दुगंछा इत्यादि ।

(7) **स्त्रीवेद :** ईर्ष्या, खेद, विषय में आसक्ति, अतिशय वक्रता, कामलंपटता इत्यादि ।

(8) **पुरुषवेद** : स्वदारा संतोष, ईर्ष्या विरहित,अल्पकषायत्व, सरल स्वभाव इत्यादि ।

(9) **नपुंसकवेद** : स्त्री पुरुष संबंधी कामसेवन, तीव्र कषाय कामासक्ति इत्यादि ।

आयुष्य कर्म के बंध के कारण

(1) **नरकायु** : पंचेन्द्रिय का हनन, अधिकाधिक आरंभ और परिग्रह, गर्भपात कराना, मांसाहार, वैर–विरोध की स्थिरता, रौद्रध्यान, मिथ्यात्व, अनंतानुबंधी कषाय, कृष्ण, नील, कापोत लेश्या, असत्य कथन, पराये माल की चोरी, निरंतर मैथुन, इंद्रिय–पारतंत्र्य ।

(2) **तिर्यंचायु** : गूढ चित्तवृत्ति, आर्तध्यान, शल्य, व्रतादि के दोष, माया, आरम्भ–परिग्रह, ब्रह्मचर्य व्रत में अतिचार,नील–कापोत लेश्या, अप्रत्याख्यान कषाय ।

(3) **मनुष्यायु :** अल्प–परिग्रह, अल्प आरंभ, स्वाभाविक मृदुता एवं सरलता तेजो–पद्मलेश्या, धर्मध्यानादि का प्रेम, प्रत्याख्यान कषाय, दान, देव–गुरू–पूजा, प्रिय कथन, लोक व्यवहार में तटस्थ भाव ।

(4) **देवायु:** सराग संयम, देश संयम, अकाम निर्जरा, कल्याण–मित्रता, धर्म श्रवण की आदत, सुपात्र दान, तप, श्रद्धा, सम्यक्ज्ञान–दर्शन–चारित्र की अविराधना, मृत्यु के समय मे पद्म एवम् तेजोलेश्या के परिणाम, अज्ञान तप इत्यादि ।

नामकर्म के बंध के कारण

(1)अशुभ नामकर्म– मन, वचन, काया की वक्रता, दूसरों को ठगना, कपट, छल का प्रयोग, चिड़चिड़ा स्वभाव, मिथ्यात्व, वाचालता, अपशब्दों का प्रयोग, चित्त की अस्थिरता, माल में मिलावट करना, टोना–टोटका करना, परनिंदा, चापलूसी, हिंसादि व्रतों का सेवन, हिंसा, असत्य, असभ्य वचन, सुंदर वेशादिका गर्व करना, कौतुक हँसी मजाक, दूसरों को हैरान परेशान करना, वेश्यादि को अलंकार दानादि देना, आग लगाना, चैत्य, प्रतिमा, बगीचे–उद्यान का नाश करना, कोयले बनाने का व्यवसाय करना इत्यादि कारणों से अशुभ नाम कर्म का बंध होता है ।

(2) शुभ नामकर्म बंध का कारण : अशुभ नाम कर्म के विपरीत शुभ क्रिया करना, संसार भीरुता, पापभय, प्रमाद का त्याग, सद्‌भाव, क्षमादि गुण, धार्मिक जन संपर्क, दर्शन, स्वागत, परोपकार इत्यादि कारणों से शुभनामकर्म बंध होता है । नामकर्म चितारे के जैसा है । जिस प्रकार चित्रकार मनुष्य, देव हाथी आदि के चित्र बनाता है, वैसे ही नामकर्म अरूपी ऐसी आत्मा को गति, जाति सदृश अनेक रूपों में तैयार करता है ।

अंतराय कर्म बंध के कारण

जिनपूजा में विघ्न डालनेवाला, दानादि चार प्रकार के धर्म में विघ्न पैदा करनेवाला, हिंसादि में (18 पापस्थानों में) मग्न, सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्रादि में दूषण दिखाकर अकारण ही विघ्न उपस्थित करने वाला, वध–बंधन से प्राणियों को निश्चेतन करने वाला, छेदन–भेदन से इन्द्रियों का नाश करनेवाला, धर्मयोग में प्रमादी बनाकर शक्ति का उपयोग नहीं करनेवाला वगैरह ।

उपसंहार : कर्म को खींचकर लानेवाले आश्रवों का सेवन बंध हो और प्रतिपक्षी सम्यक्त्वादि संवर का सेवन होता हो तो नये कर्मों का अनुबन्ध–बन्ध रुक जाता है । ठीक वैसे ही पुराने कर्मों का निर्मूलन बारह प्रकार के तप से होता है । फलतः सर्व कर्मों से विरहित आत्मा मोक्ष अवस्था की प्राप्ति करता है और अनंत ज्ञानादि मूलस्वरूप में प्रकट होता है । अतः कर्म के अभाव से राग द्वेष रूपी आश्रव न होने के कारण कभी भी कर्म बंधन नहीं होता ।

प.पू. धर्मदास गणि भवगंत उपदेश माला में कहते हैं कि जीव जिस जिस समय जैसे जैसे शुभ–अशुभ परिणाम को प्राप्त होता है, उस उस समय में शुभ–अशुभ कर्म बंध करता रहता है । परिणाम स्वरूप वह सुख दुःख का अनुभव करता है । सुख के समय यदि राग बुद्धि एवं दुःख के समय द्वेष बुद्धि का परित्याग करने में न आए तब तक आत्मशुद्धि होना निहायत असंभव है ।

कर्म ग्रंथ के अध्ययन से कर्म के मूल राग–द्वेष का ज्ञान होता है, इस सत्य को समझकर, उसको रोकने में समर्थ, सर्वविरति रूप संवर, तप से कर्म क्षय रूपी निर्जरा एवं शुक्लध्यान से सभी कर्मों का क्षय करने के लिये पुरुषार्थ आवश्यक है ।

कर्मग्रन्थादि शास्त्रों की पढाई का सार सर्वविरति एवं जीवन शुद्धि करना है ।

लेश्या

लेश्या यह जैन दर्शन में सुप्रसिद्ध पारिभाषिक शब्द है। काययोग के अंतर्गत कृष्णादि द्रव्य के संबंध से उत्पन्न होने वाले आत्मा के परिणाम विशेष को लेश्या कहते हैं।

स्फटिक रत्न के छिद्र में जिस रंग का धागा पिरोया जाय, रत्न उसी रंग का दृष्टिगोचर होता है। वैसे ही आत्मा के अच्छे बुरे मनोभाव रूपी भाव लेश्या को उत्पन्न करनेवाला जो योगान्तर्गत पुद्गल द्रव्य है, वह द्रव्य लेश्या कहलाता हैं। जिस प्रकार की लेश्या द्रव्य का उद्भव होता है, वैसा ही उसका आत्म परिणाम होता है। उपचारवश उक्त द्रव्य भी लेश्या कहलाता है।

लेश्या 6 प्रकार की हैं: **1) कृष्ण 2) नील 3) कापोत 4) तेजो 5) पद्म 6) शुक्ल लेश्या**।

उपरोक्त प्रत्येक द्रव्य लेश्या स्व-नामानुसार वर्णवाली है। संबंधित वर्णवाली लेश्याएँ हमारे आत्मा में भी उसी तरह के तीव्र, मंद, शुभाशुभ अध्यवसाय उत्पन्न करती है।

लेश्या का स्वभाव

1) **कृष्णलेश्या से युक्त आत्मा**-शत्रुतावश निर्दयी, अति क्रोधी, भयंकर मुखाकृति वाला, तीक्ष्ण कठोर, आत्मधर्म से विमुख और हत्यारा (वध कृत्य करनेवाला) होता है।
2) **नीललेश्या युक्त आत्मा** : मायावी, दांभिक वृत्तिवाला, लांच रिश्वत लेने का आग्रही, चंचल चित्तवाला, अतिविषयी और मृषावादी होता है।
3) **कापोतलेश्या युक्त आत्मा** : मूर्ख, आरंभ-मग्न, किसी भी कार्य में पाप नहीं मानने वाला, लाभालाभ के प्रति उदासीन, अविचारक एवं क्रोधी होता है।
4) **तेजोलेश्या युक्त जीव** : दक्ष, कुशल कर्म करनेवाला, सरल, दानी, शीलयुक्त, धर्मबुद्धि से युक्त एवं शांत होता है।
5) **पद्मलेश्या युक्त आत्मा** : प्राणियों के प्रति अनुकंपा प्रदर्शित करनेवाला, स्थिर, सभी जीवों को दान देनेवाला, अति कुशल, कुशाग्र बुद्धिवाला एवं ज्ञानी होता है।
6) **शुक्ललेश्या युक्त आत्मा** : धर्म बुद्धि से युक्त, सभी कार्यों में पाप से दूर रहने वाला, हिंसादि पापों में अरुचि रखनेवाला और दुर्गुणों के प्रति अपक्षपाती होता है।

प्रस्तुत विषय का अधिक स्पष्टीकरण करने के लिये शास्त्र-ग्रन्थों में जंबुवृक्ष एवं चोर का उदाहरण दिया गया है। वह इस प्रकार है:

जंबुवृक्ष का दृष्टांत

एक बार मार्ग-भूले छह पथिक किसी जंगल में जा पहुँचे। तीव्र क्षुधा और तृषा से उनका बुरा हाल था। अतः वे इष्ट भोजन और जल की खोज में इधर-उधर भटकने लगे। अचानक उन्हें जामुन से लदा एक जंबुवृक्ष दृष्टिगोचर हुआ। लालायित हो, वे वृक्ष के पास गये और ललचाई नजर से जामुन की ओर देखने लगे।

जंबुवृक्ष का दृष्टांत

तब उन में से एक ने व्यग्र होकर कहा : क्यों न इसे जडमूल से उखाड़ दें ताकि निश्चिंत हो कर भर पेट जामुन खाने को मिलेंगे । अर्थात् केवल जामुन के खातिर वृक्ष को ही जडमूल से उखाड़ने की दुष्ट वृत्ति उत्पन्न होना कृष्ण लेश्या कहलाती है । इस तरह अपना स्वार्थ सिद्ध करने के हेतु अन्य के प्राणों की परवाह किये बिना संहार करने की दुष्ट भावना रखने वाला अत्यंत स्वार्थान्ध जीव , कृष्ण लेश्या से युक्त होता है । चित्र में प्रथम क्रमांक के पुरुष को जामुन के लिये वृक्ष को जडमूल से उच्छेदन करता दिखाया है । उसकी पोशाक एकदम काली है । मतलब कृष्ण लेश्या का वर्ण काला होता है ।

इतने में ही दूसरे पुरुष ने कहा : ऐसे विशाल वृक्ष को भला उखाडने से क्या लाभ? साथ ही हमें इसकी कतई आवश्यकता नहीं है । इससे बेहतर तो यह है कि हम इसकी बड़ी–बड़ी टहनियों को तोड़ लें और भरपेट जामुन खाएँ । अर्थात् क्षुद्र जामुन के लिये वृक्ष के महत्वपूर्ण अंग स्वरूप विशाल शाखाओं को ही धराशायी करने का कुटिल विचार यह नील लेश्या का द्योतक है । चित्र में द्वितीय क्रमांक के पुरुष को मध्यम श्याम वर्ण वाला दिखाया है, जो वृक्ष की बड़ी शाखाओं को काट रहा है । इस तरह कई स्वार्थान्ध जीव अपने तुच्छ स्वार्थ के लिये अन्य के महत्वूपर्ण अंगों को नुकसान पहुँचाते हुए जरा भी नहीं हिचकिचाते ।

इतने में तीसरे पुरुष ने कहा : अरे भाई, वृक्ष की बड़ी टहनियाँ तोड़ने से क्या लाभ? उसके

बजाय क्यों न हम जामुनों से लदी–फदी छोटी डालियाँ काट लें । हमें जामुन खाने से मतलब है, न कि टहनियाँ तोड़ने से । और फिर जामुन तो छोटी डालियों पर लगे हुए है ।यह विचार कापोतलेश्या गर्भित है । चित्र में तृतीय क्रमांक के पुरुष को कापोत (कपोत)=कबूतर जैसा अल्प श्यामवर्ण वाला दिखाया है । जो वृक्ष की छोटी–छोटी डाली को काट रहा है ।इस संसार में अपनी स्वार्थ सिद्धि हेतु अन्य जीवों को होने वाली कम ज्यादा हानि की जरा भी परवाह न करने वाले कापोतलेश्या गुण धर्म वाले कई जीव है ।

शास्त्र ग्रंथों में उपरोक्त तीनों ही लेश्याओं को अशुभ माना गया है । जिस तरह उनके वर्ण अशुभ है, उसी तरह उनके रस–गंधादि स्वभाव धर्म भी अशुभ है ।

इतने में चौथे पुरुष ने कहा: यह तो सब ठीक है । लेकिन हमें केवल जामुन खाने से मतलब है । तब वृक्ष की छोटी–छोटी शाखाएँ तोड़ने से क्या लाभ? उसके बजाय जामुन के गुच्छे ही तोड़कर हम काम चला सकते हैं । इससे जामुन भी जी भर खा लेंगे और शाखाएँ तोड़ने का सवाल भी खड़ा नहीं होगा । यह विचार तेजो लेश्या से गर्भित है । हमारे स्वार्थ के लिये संसार के किसी अन्य जीव अथवा प्राणी को बड़ा अथवा मध्यम नुकसान न पहुँचे । इसकी सावधानी बरतनेवाले जीव तेजो लेश्या से युक्त होते हैं । तभी चित्र में चौथे क्रमांक में उगते सूर्य के प्रकाश सदृष्य रक्तवर्णीय पुरुष दिखाया है ।

उसमें से पाँचवे ने गंभीर स्वर में कहा : सो तो ठीक है । किंतु हमें जामुन के गुच्छे का भी कोई प्रयोजन नहीं है, बल्कि हमारा प्रयोजन रस भरे बड़े–बड़े जामुनों से है । ऐसी स्थिति में ताजे जामुन ही क्यों न चुन लें । उक्त विचार पद्मलेश्या का द्योतक है । संसार में कई जीव ऐसे होते हैं, जो अपने स्वार्थ के लिये अन्य जीवों की अल्प प्रमाण में भी हानि न हों इस बात की सावधानी बरतते हुए जीवन व्यतीत करते हैं । वह पद्मलेश्या का ही साक्षात् प्रतीक है । चित्र में पाँचवे क्रमांक में इसी आशय को प्रदर्शित करने के लिये कमल पुष्प की भाँति हल्के पीले वर्णवाला पुरुष दर्शाया है, जो जामुन चुन रहा है ।

किंतु उन सब के मतों को सुनकर छट्ठे पुरुष ने शांत स्वर में कहा : भूमि पर गिरे पके हुये जामुन फलों का आहार कर जब हम तृप्त हो सकते हैं तब अधिक फलों की आवश्यकता हीं नहीं रहती ।ऐसी दशा में फल तोड़कर पाप करने से क्या लाभ? यह विचार शुक्ल लेश्या गर्भित है । अन्य जीवों को लेश मात्र भी हानि न हों और स्वयं की स्वार्थ सिद्धि भी सरलता से हो जाए । संसार में इस विचार के कई जीव होते हैं । ऐसे अध्यवसायवाले जीव शुक्ल लेश्या वाले माने जाते हैं । इसी आशय को प्रकट करने के लिये छट्ठे चित्र में श्वेत वस्त्रधारी पुरुष को भूमि पर पडे जामुन फल चुनता हुआ दिखाया गया है ।

छ: लेश्याओं में से तेजो पद्म एवं शुक्ल लेश्यादि तीन की गणना शुभ लेश्या के अंतर्गत होती है । क्योंकि इनका गुणधर्म यह है कि अन्य जीवों को अति, मध्यम या अल्प प्रमाण में भी हानि नहीं पहुँचे । जबकि कापोत नील एवं कृष्ण लेश्याओ का उल्लेख अशुभ लेश्या के अंतर्गत होता है । इनका अध्यवसाय और गुणधर्म अन्य जीवों को अधिकाधिक कष्ट तथा नुकसान पहुँचाता है । उपरोक्त दृष्टांत से विश्व में रहे समस्त जीव–प्राणियों के शुभाशुभ अध्यवसायों की कोमलता एवं कठोरता का मूल्यांकन भली–भांति कर सकते हैं ।

चोर का दृष्टांत

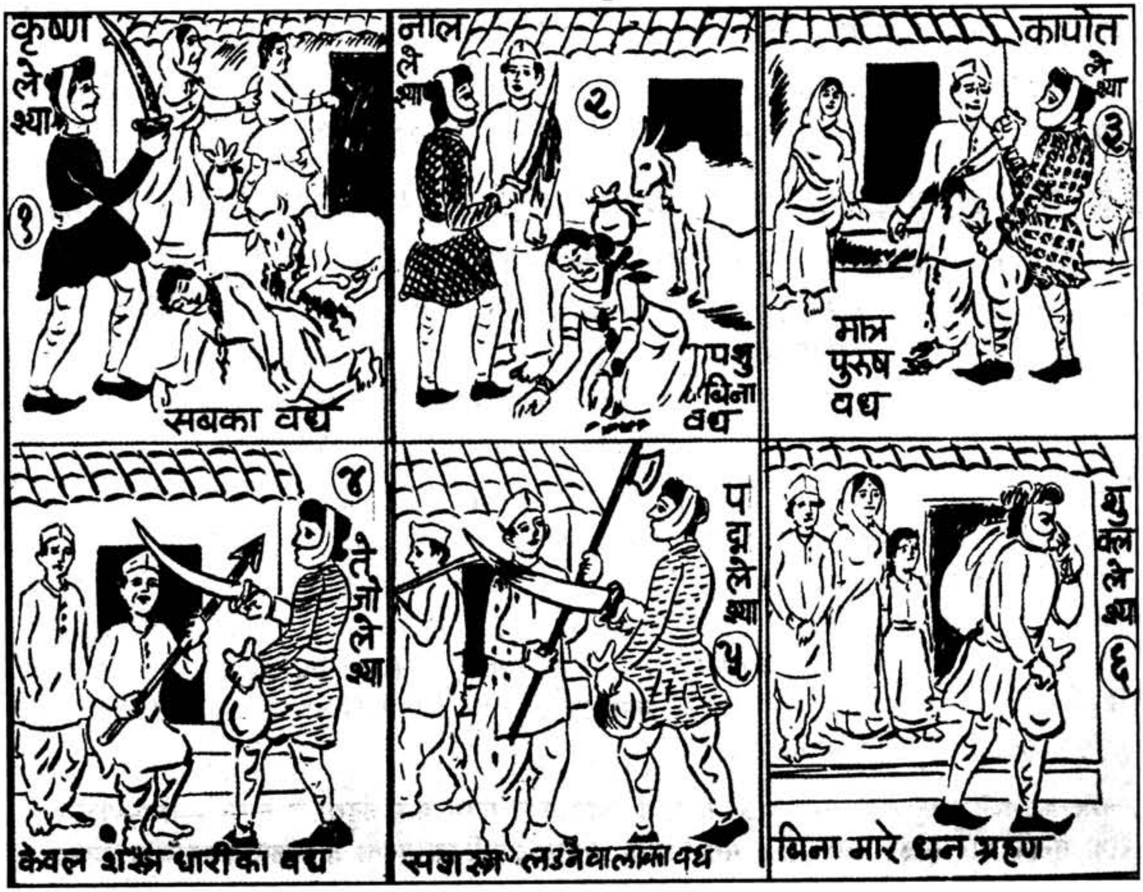

एक बार कई चोर मिलकर किसी नगर में डाका डालने गये । मार्ग में जाते हुए वे परस्पर बाते कर रहे थे ।

एक दुष्टात्मा चोर ने कहा : पुरुष, स्त्री, वृद्ध, बालक अथवा पशु मिल जाए तो हमें उन्हें मौत के घाट उतारकर उनके पास रही धन–संपदा लूट लेनी चाहिये । चोर का यह अति क्रूर कठोर अध्यवसाय कृष्ण लेश्या से गर्भित है ।

दूसरे चोर ने कहा : पशु और अन्य प्राणियों ने हमारा क्या बिगाड़ा है? उन्होंने हमारा कोई अपराध नहीं किया । अत: जिनसे हमारा वैर विरोध है, ऐसे मनुष्य की हत्या करनी चाहिये । अत: चोर का यह मध्यम क्रूर अध्यवसाय नील लेश्या से गर्भित है ।

तीसरे चोर ने कहा: हमें भूल कर भी स्त्री हत्या नही करनी चाहिये । क्योंकि यह कार्य सर्वत्र निंदनीय और वर्जित है । अत: पुरुष मात्र का हनन करना उचित रहेगा । कारण वह क्रूरात्मा होता है । तीसरे चोर का यह कथन मंद क्रूर अध्यवसाय कापोत लेश्या से गर्भित माना गया है ।

चौथे चोर ने कहा:अरे, सभी पुरुष एक से नहीं होते, अत: जो शस्त्रधारी हो, उसी की हत्या करना

उचित है। चौथे चोर का यह अध्यवसाय क्रूर अवश्य है। किंतु उसमें कोमलता का अंश है। अत: यह तेजो लेश्या गर्भित है।

पांचमे चोर ने कहा:शस्त्रधारी पुरुष यदि कायरतावश मैदान छोड़कर भाग रहा हो तो उसकी हत्या करने से भला हमें क्या लाभ होगा? अत: जो शस्त्रधारी पुरुष हमारा सामना करे, उसका वध करना सभी दृष्टि से उचित है।यहाँ चौथे के बजाय पाँचवे चोर के अध्यवसाय में कोमलता का पुट अधिक मात्रा में है। अत: नि:संदेह यह पद्म लेश्या का द्योतक है।

छट्ठे चोर ने कहा:वाह, यह भी कोई बात हुई? एक तो पराये धन पर डाका डालना...चोरी करना और उसकी हत्या भी कर देना वास्तव में यह पाप ही नहीं महापाप है। ऐसा भयंकर पाप करने से हमारी क्या दुर्गति होगी। इसके बारे में भी किसी ने सोचा है? यदि धन ही चाहिये तो छीन लेना चाहिये। हत्या करने से भला क्या लाभ? छठ्ठे चोर की भावना के अध्यवसाय में अधिकाधिक प्रमाण में कोमलता के दर्शन होते हैं। यही शुक्ल लेश्या का साक्षात् प्रतीक है।

शास्त्रों में कहा है कि मृत्यु के समय जो लेश्या होती है, आत्मा उसी लेश्या की प्रधानता वाले भव में पुनर्जन्म लेती है।

लेश्या का अल्पबहुत्व–शुक्ललेश्यावाले सबसे कम, पद्मलेश्यावाले असंख्यगुण अधिक, तेजोलेश्यावाले उसके असंख्य गुण, कापोतलेश्यावाले अनंत गुण अधिक, नीललेश्यावाले विशेषाधिक, कृष्णलेश्यावाले और विशेषाधिक होते है।

लेश्या मे मन–वचन–काया के योग मूल कारण है। जब तक योग का सद्भाव कायम है तब तक ही लेश्या का भी सद्भाव होता है और योग के अभाव में लेश्या का भी अभाव है।

B. नव तत्त्व

1. पुण्य–तत्त्व

विराट विश्व में दिखाई देती विविध विचित्रताओं का मुख्य कारण शुभाशुभ कर्म हैं।

एक सुखी–एक दु:खी, एक राजा–एक रंक, एक सेठ–एक चाकर, एक रोगी–एक निरोगी, एक प्राज्ञ–एक अज्ञ। इन सभी द्वन्द्वों का हमें प्रत्यक्ष दर्शन हो रहा है। लेकिन इनका वास्तविक कारण क्या है? इन प्रश्नों का सही समाधान वर्तमानकालीन व्यावहारिक शिक्षण साहित्य में हमें नहीं मिलता।

जगत की सर्व विचित्रता के हेतुओं को समझने के लिए हमें सर्वज्ञ, श्री अरिहंत परमात्मा निर्दिष्ट कर्म सिद्धांत और आगम ग्रंथों का तलस्पर्शी अध्ययन, मनन, चिंतन करना अत्यंत आवश्यक है।

कर्म क्या है ? वे किस तरह बँधते हैं ? उसका फल कब, किस तरह मिलता है ? और वे आत्मगुणों के प्रकाश को किस तरह आच्छादित करते हैं ? उसके परिणाम से आत्मा को संसार में जन्म–मरण–जरा, आधि–व्याधि और उपाधि के कैसे दर्दनाक दु:ख भोगने पड़ते हैं। इन सभी का विस्तृत विवेचन

कर्म-ग्रंथ, आदि ग्रंथों में बताया गया है।

तत्त्व जिज्ञासुओं की अभिरूचि इन ग्रंथों के अध्ययन मनन और चिंतन के प्रति बढ़े, इस हेतु से प्रस्तुत प्रकरण में सिर्फ पुण्य और पाप तत्त्वों को संक्षेप से बताया है।

इन दो तत्त्वों के अध्ययन से यह स्पष्ट रूप से समझ में आ जाता है कि जीवन संग्राम में सुख-दुःख, हर्ष-शोक, क्रोध-क्षमा, मान-नम्रता, माया-सरलता, लोभ-उदारता आदि विविध भावनाएँ पैदा होने के पीछे क्या कारण है ? जीवन में धूप-छाँव की तरह भिन्न-भिन्न परिस्थितियों का निर्माण क्यों होता है ?

इन सबका एक ही जवाब है, बंधे हुये अपने शुभाशुभ कर्म के कारण ही जीवन में और जगत में ये सारी शुभाशुभ घटनाएँ घटती हैं।

हमें सुख-दुःख, अनुकूलता-प्रतिकूलता देनेवाला और कोई नहीं है, हमारे स्वयं के अच्छे और बुरे कर्म ही है और जीव खुद ही उनके (सुखादि के) कारण भूत शुभा-शुभ कर्म का कर्ता है।

पुण्य तत्त्व के दो अंग :-

एक अंग है **पुण्य क्रिया स्वरुप,** दूसरा अंग है **पुण्य फल स्वरुप**

ये दोनों परस्पर कारण-कार्य रुप हैं। पुण्य की क्रिया करने से जीव को पुण्य-शुभ फल देने वाले 42 प्रकार के शुभ कर्म बँधते हैं।

9 प्रकार की पुण्य की क्रियाएं :-

1. **अन्न पुण्य :** क्षुधा (भूख) शमन के साधनभूत अन्न का दान करना।
2. **जल पुण्य :-** तृषा (प्यास) शमन के साधनभूत जल का दान करना।
3. **वस्त्र पुण्य :-** शील रक्षा के साधनभूत वस्त्र का दान करना।
4. **आसन पुण्य :-** बैठने के लिए साधन रूप आसन-पाट आदि का दान करना।
5. **शयन पुण्य :-** सोने या रहने के साधनभूत शय्या, मकान आदि का दान करना।
6. **मन पुण्य :-** मन से सर्व का भला चाहना, दूसरों के हित का विचार करना।
7. **वचन पुण्य :-** हित, मित, सत्य वचन बोलना, गुणी के गुणों की प्रशंसा करना।
8. **काया पुण्य :-** काया से दूसरों की सेवा, वैयावच्च आदि करना। दूसरों के शुभ कार्य में सहायक होना।
9. **नमस्कार पुण्य :-** नमनीय उत्तम पुरुषों को नमन, वंदन, पूजन करना।

यह नौ प्रकार का दान अपनी पात्रता के अनुसार पुण्य (कर्म) बन्ध का कारण बनता है। सुपात्र को अन्नादि देने से उत्कृष्ट फल मिलता है। अनुकम्पा से दीन-दुःखी को अन्नादिक देने से भी पुण्य बंध होता है।

संक्षेप में, जैसा पदार्थ, जैसा पात्र और जैसा भाव, वैसा पुण्य बंध होता है।

पुण्य क्रिया किये बिना पाप क्रिया रुक नहीं सकती । जब तक जीवन में पाप क्रिया चालु हैं, तब तक पुण्य क्रिया की आवश्यकता है । पाप आत्मा को मलिन करता है । पुण्य आत्मा को पावन बनाता है ।

पुण्य कार्य करने में यह ख्याल रखना अत्यंत जरूरी है कि हमें पुण्य कार्य के बदले में किसी भौतिक सुख या पदार्थ की कामना नहीं करनी चाहिये । केवल आत्मकल्याण के शुभ उद्देश्य से ही पुण्य कार्य करना है । दूसरी इच्छा रखने से पुण्य का फल सीमित और संसार सर्जक बन जाता है ।

जीवन में पुण्य (व्यवहार से) उपादेय है । आत्म विकास के साधन रुप मनुष्य गति, पंचेन्द्रिय जाति, औदारिक शरीर तथा उत्तम कुल–जाति और सुदेव–सुगुरु–सुधर्म की सभी सामग्री आदि की प्राप्ति पुण्य से ही होती है ।

पुण्यानुबंधी पुण्य आत्मा को मोक्ष योग्य सभी सामग्री की अनुकूलता प्रदान करके मार्गदर्शक की तरह अपनी मुद्दत तक रहकर वापस चला जाता है । आत्मा को वह संसार में रोक नहीं सकता ।

पुण्य तत्त्व के 42 भेद

चार अघाती कर्म में से पुण्य के 42 भेद :

1. **वेदनीय कर्म** :– शाता वेदनीय
2. **आयुष्य कर्म** :– देवायु, मनुष्यायु, तिर्यंचायु
3. **गोत्र** :– उच्च गोत्र
4. **नाम कर्म** :– कुल 37

1. **प्रत्येक (7)** :– अगुरु–लघु, निर्माण, आतप, उद्योत, पराघात, उच्छ्वास, तीर्थंकर नाम कर्म।
2. **त्रस दशक (10)** :– त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, यश ।
3. **पिंड प्रकृति (20)** :– **2 गति** :– देव तथा मनुष्य गति

1 जाति :– पंचेन्द्रिय

5 शरीर :– औदारिक, वैक्रिय, आहारक, तैजस, कार्मण ।

3 उपांग :– औदारिक, वैक्रिय, आहारक

1 संघयण :– वज्रऋषभनाराच

1 संस्थान :– समचतुरस्र

1 वर्ण :– शुभ वर्ण

1 गंध :– सुगंध

1 रस :– शुभ रस

1 स्पर्श :– शुभ स्पर्श

2 आनुपूर्वी :– देवानुपूर्वी, मनुष्यानुपूर्वी

1 विहायोगति :– शुभ विहायोगति

पुण्य के 42 भेद की तालिका	
वेदनीय	1
आयुष्य	3
नाम	37
गोत्र	1
कुल	42

4. पाप तत्त्व

पुण्य का विरोधी तत्त्व पाप है ।

आत्मा को मलिन बनाने वाला अशुभ कर्म पाप है और जो कार्य करने से आत्मा को पाप कर्म का बंध होता है, वह भी पाप कहलाता है । तात्पर्य यह है कि पुण्य की तरह पाप तत्त्व के भी दो अंग हैं । पाप क्रिया और पाप फल और वे परस्पर कारण-कार्य रूप हैं ।

दु:खमय संसार में परिभ्रमण कराने वाला कर्म पाप है । मोक्ष पाने में आत्मा को बाधा देने वाला भी मुख्य रूप से पाप ही है ।

1.	**प्राणातिपात** : जीव हिंसा करना ।
2.	**मृषावाद** : झूठ बोलना ।
3.	**अदत्तादान** : चोरी करना ।
4.	**मैथुन** : अब्रह्म सेवन, विषय भोग करना ।
5.	**परिग्रह** :- द्रव्यादि के ऊपर मूर्च्छा-ममत्व रखना ।
6.	**क्रोध** :- गुस्सा करना।
7.	**मान** :- अहंकार, अभिमान करना।
8.	**माया** :- कपट, ठगाई करना।
9.	**लोभ** :- आसक्ति, मेरा-मेरा करना।
10.	**राग** :- मोहवश-यह अच्छा है - ऐसे भाव
11.	**द्वेष करना** :- मोहवश - यह बुरा है, ऐसे भाव
12.	**कलह** : क्लेश, लड़ाई झगड़ा करना ।
13.	**अभ्याख्यान** :- दूसरों के दोष को प्रकट करना, कलंक देना ।
14.	**पैशुन्य :-** चुगली करना ।
15.	**रति-अरति** :- हर्ष व उद्वेग करना ।
16.	**पर परिवाद :-** दूसरों की निंदा करना ।
17.	**माया मृषावाद :-** माया से झूठ बोलना ।
18.	**मिथ्यात्व शल्य** :- सत्य तत्त्व की अश्रद्धा । विपरीत श्रद्धा करना ।

इन 18 प्रकार की क्रियाओं द्वारा जीव को 82 प्रकार के अशुभ-कर्म का बंध होता है । जिसके उदय से जीव को अशाता, रोग, शोक, भय आदि विविध प्रकार की पीड़ा, आपत्ति आदि भोगने पड़ते है।

पाप कर्म के कटु विपाक

1. मूर्खपणा, अंधापन, कृपणता, दरिद्रता ये क्रमश: ज्ञानावरणीय, दर्शनावरणीय, दानान्तराय, लाभान्तराय कर्म के उदय से प्राप्त होते हैं ।
2. भोग्य, उपभोग्य-भोजन, वस्त्रादि सामग्री मिलने पर भी भोगान्तराय और उपभोगान्तराय कर्म के उदय से जीव उन सामग्रियों का भोग उपभोग नहीं कर पाता ।
3. सांसारिक, सामाजिक और धार्मिक कार्यों में शारीरिक शक्ति होने पर भी जीव वीर्यान्तराय के उदय से प्रवृत्ति नहीं कर पाता ।
4. आधि, व्याधि, उपाधि, चिंता, संताप, अशान्ति आदि अनेक प्रकार के दु:ख अशाता वेदनीय कर्म के उदय से आते हैं ।
5. नीच कुल में जन्म, लोगों से तिरस्कार नीच गोत्र के उदय से प्राप्त होता है ।
6. अधर्म में धर्म की, धर्म में अधर्म की ऐसी विपरीत बुद्धि और मान्यता मिथ्यात्व मोहनीय कर्म से होती है । आत्मा का सबसे कट्टर दुश्मन यही है । जो सत्य को जानने में और पाने में बाधा करता है ।
7. क्रोध, मान, कपट, लोभ, मत्सर, शोक, उद्वेग आदि तथा जातीय-संज्ञा ये सभी दुष्ट भावनाएँ और दुष्ट प्रवृत्तियाँ मोहनीय कर्म के उदय से होती हैं ।
8. नरक गति के उदय से जीव को नरक में उत्पन्न होना पड़ता है । नरकानुपूर्वी नरक में उत्पन्न होने के स्थान पर ले जाती है । नरकायुष्य जीव को नरक की स्थिति में अपनी निश्चित मुद्दत तक पकड़ कर रखता है । किये गये क्रूर पापों की सजा वहाँ जीव को भुगतनी पड़ती है
9. कुरुप, बेस्वाद, दुर्गन्ध, कठोर और हिनादिक अंग वाला शरीर मिलना ये भी पाप (अशुभ नाम) कर्म की ही लीला है ।
10. दौर्भाग्य, अपयश, कठोर स्वर, अप्रियता आदि की प्राप्ति अशुभ नाम कर्म के उदय से होती है।

अज्ञानता के कारण जीव हँसते-हँसते पाप कर्म करता है, परन्तु जब उसका फल उदय में आता है, तब रोते रहने पर भी वह नहीं छूटता है ।

पाप से बचो, और पुण्य करो; यही दु:ख से छूटने का और सुख पाने का सही मार्ग है ।

पाप के 82 भेद

(अ.) घाती कर्म :- (45)

ज्ञानावरणीय (5) :- मतिज्ञानावरणीय, श्रुतज्ञानावरणीय, अवधिज्ञानावरणीय, मन:पर्यवज्ञानावरणीय

और केवलज्ञानावरणीय ।

दर्शनावरणीय (9) :-

	(4)	(5)
	1. चक्षु दर्शनावरणीय	1.निद्रा, 2.निद्रा-निद्रा
	2. अचक्षु दर्शनावरणीय	3.प्रचला
	3. अवधि दर्शनावरणीय	4.प्रचला-प्रचला
	4. केवल दर्शनावरणीय	5.थीणद्धि

मोहनीय (26)

1) 1 मिथ्यात्व मोहनीय + 16 कषाय + 9 नोकषाय

1. अनंतानुबंधी	-	क्रोध, मान, माया, लोभ
2. अप्रत्याख्यानीय	-	क्रोध, मान, माया, लोभ
3. प्रत्याख्यानीय	-	क्रोध, मान, माया, लोभ
4. संप्तवलन	-	क्रोध, मान, माया, लोभ
		4x4=16 कषाय

हास्य, रति, अरति, शोक, भय
जुगुप्सा, पुरुषवेद, स्त्रीवेद, नपुसंकवेद = 9 नोकषाय
इस प्रकार (1+16+9) कुल 26

अन्तराय (5) :- दानान्तराय, लाभान्तराय, भोगान्तराय, उपभोगान्तराय, वीर्यान्तराय ।

(आ.) अघाती कर्म (37)

वेदनीय (1) :- अशाता वेदनीय

गोत्र (1) :- नीच गोत्र

आयुष्य (1) : नरकायु

नाम कर्म (34) : -

स्थावर दशक (10) :- स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय, अपयश ।

प्रत्येक (1) :- उपघात

पिण्ड प्रकृति (23) :- **2 गति :-** तिर्यंचगति, नरकगति
4 जाति :- एकेन्द्रिय, बेइन्द्रिय, तेइन्द्रिय, चउरिन्द्रिय

5 संघयण :– ऋषभनाराच, नाराच, अर्धनाराच, कीलिका, छेवट्ठु ।

5 संस्थान :– न्यग्रोधपरिमण्डल, सादी, कुब्ज, वामन, हुंडक ।

1 वर्ण :– अशुभ वर्ण

1 गंध :– दुर्गंध

1 रस :– अशुभ रस

1 स्पर्श :– अशुभ स्पर्श

2. आनुपूर्वी :– तिर्यंचानुपूर्वी, नरकानुपूर्वी

1 विहायोगति :– अशुभ विहायोगति ।

पाप के 82 भेद की तालिका

ज्ञानावरणीय	5	वेदनीय	1
दर्शनावरणीय	9	आयुष्य	1
मोहनीय	26	गोत्र	1
अंतराय	5	नाम कर्म	
		स्थावर प्रत्येक पिंड प्रकृति 10+ 1+ 23 =	34
घाती कर्म	45	अघाती कर्म	37
		45+37 कुल = 82	

इन सब प्रकृतियों की विस्तृत व्याख्याएँ इसी पुस्तक में आगे कर्म विज्ञान के विषय में दी है ।

पुण्य-पाप के 4 प्रकार

1. **पुण्यानुबंधि पुण्य :** जिस पुण्य के उदय में जीव को अच्छी सामग्री के साथ अच्छी बुद्धि मिलती है एवं जीव उस पुण्य का सदुपयोग कर पुन: पुण्य का उपार्जन करे वह पुण्यानुबंधि पुण्य । जैसे धन्ना, शालिभद्र का पुण्य ।
2. **पापानुबंधि पुण्य** : पूर्वोपार्जित पुण्य का उदय होने पर सामग्री तो खूब मिलती है, अच्छी मिलती है लेकिन उसका दुरुपयोग कर पुन: पाप को बाँधे । जैसे ब्रह्मदत्त चक्रवर्ती ने पुण्य से प्राप्त सत्ता का उपयोग ब्राह्मणों की आँखें फोड़ने में किया एवं उससे पाप बांधकर नरक में गया ।
3. **पुण्यानुबंधि पाप :** पाप के उदय को समभाव से सहन करने पर नया पुण्य उपार्जित होता है । जैसे अंजना सती को पाप के उदय से पति वियोग हुआ । परन्तु उस दु:ख में स्वयं दु:खी न बन कर आराधना में लीन रही, उससे पुण्य बंध हुआ । अर्थात् पाप के उदय में स्वच्छ बुद्धि से समभाव में रहना ।
4. **पापानुबंधि पाप :** पाप के उदय में आर्त्तध्यान कर पुन: पाप कर्म को बाँधना । भील–कसाई–मच्छीमार

आदि पाप के उदय से इस भव में दुःखी और पुनः पाप बांधकर नरक में दुःख को पाते हैं, जैसे काल सौकरिक कसाई।

C. श्रावक जीवन के बारह व्रत

1) **स्थूल हिंसा त्याग :** चलते फिरते निरपराधी जीवों को निरपेक्षता से जानबूझकर नही मारना । हिंसक दवाई का उपयोग नहीं करना । खरगोश, हिरन, मछली, आदि का शिकार नहीं करना।

2) **स्थूल झूठ का त्याग :** किसी का प्राण जाये ऐसा झूठ नहीं बोलना ।

3) **स्थूल चोरी का त्याग :** डाका डालना, जेब काटना, घरफोडी, चोरी इत्यादि नहीं करना ।

4) **स्थूल अब्रह्म त्याग :** परस्त्री, वेश्या (बहनो के लिए – परपुरुष) के साथ कभी दुराचार नहीं करना। शादी नहीं होने तक संपूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करना। शादी होने के बाद एक महिने में ---- दिन ब्रह्मचर्य का पालन करना ।

5) **स्थूल परिग्रह त्याग :** धन, धान्य, जमीन, मकान, सोना, चांदी के जेवर आदि कुल मिलाकर -- किलो सोना से ज्यादा अपनी जायदाद (मूडी) नहीं रखना ।

6) **दिशापरिमाण :** भारत के बाहर नहीं जाना (पांच बार की छूट)। उपर 5 कि.मी. से ज्यादा एवम् नीचे 1 कि.मी. से ज्यादा नहीं जाना (जीवन भर के लिए)

7) **भोगोपभोग परिमाण :** एक माह में ------ रात्रि भोजन त्याग, शाम के भोजन के बाद पानी, दवा सिवाय सब का त्याग । मांस, मच्छी, अंडा, शहद, मक्खन, शराब का संपूर्ण त्याग । प्रतिदिन 25 से ज्यादा द्रव्यों का त्याग करुंगा। एक महिनें में अनंतकाय (जमीकंद) का ---- दिन त्याग । होटल, चुनाभट्टी, शस्त्र बनाना, विष, मांस मच्छी अंडे बेचने का त्याग। तालाब, कुआं सुखाना, वन जलाना इत्यादि का त्याग। द्विदल, साबूदाना (अनंतकाय), ब्रेड, केक, बाहर के दहींवडा का त्याग।

8) **अनर्थदंड का त्याग :** दुर्ध्यान करना, गंदी सिनेमा, खराब नोवल पढनें का त्याग। कुत्ता, मुरगी की लडाई नहीं देखनी। होली नहीं खेलना, फटाके नहीं फोडना । एक वर्ष में एक से ज्यादा सर्कस, नाटक, जादू के खेल नहीं देखना। उद्भट (शृंगारी) ड्रेस नहीं पहनना, शिकार नहीं करना, जुआ नहीं खेलना, टी.वी., विडियो, टेपरिकार्डर, आदि को देखना सुनना कम करना ।

9) **सामायिक की प्रतिज्ञा :** प्रतिदिन 1 सामायिक करना। अथवा एक वर्ष में ....सामायिक करना । सामायिक में प्रतिक्रमण, स्वाध्याय, जापमाला, आदि करना।

10) **देशावगासिक व्रत :** साल में कम से कम एक करना। (एकाशना के तप के साथ, दो प्रतिक्रमण और आठ सामायिक करने पर यह व्रत होता है।)

11) **पौषध व्रत :** साल में कम से कम एक बार पौषध (संपूर्ण या आधा दिन का) करना।

12) **अतिथि संविभाग :** पौषध के बाद दूसरे दिन एकाशना करना साधु, साध्वीजी को वोहराकर या

व्रतधारी सदाचारी श्रावक – श्राविका की भक्तिकर एकाशना करना। इस प्रकार हर श्रावक एवं श्राविका को शक्ति अनुरुप बारह व्रतों का स्वीकार करना एक परम कर्तव्य है।

D. मार्गानुसारी के 35 गुण

1. **न्याय संपन्न वैभव** : गृहस्थ को सर्वप्रथम स्वामी द्रोह, मित्र द्रोह, विश्वासघात तथा चोरी आदि निंदनीय प्रवृतियों का त्याग करके अपने वर्ण के अनुसार सदाचार और न्याय नीति से ही अर्जित धन–वैभव से संपन्न होना चाहिए ।
2. **शिष्टाचार प्रशंसक :** शिष्ट पुरुष वह कहलाता है जो व्रत, तप आदि करता है, जिसे ज्ञान वृद्धों की सेवा से विशुद्ध शिक्षा मिली हो, विशेषत: जिसका आचरण सुंदर हो ।
3. **समान कुल और शील वाले भिन्न गोत्रीय के साथ विवाह संबंध :** पिता, दादा आदि पूर्वजों के वंश के समान वंश हो, मद्य, मांस आदि दुर्व्यसनों के त्यागी हो, शीलवंत एवं सदाचारी हो एवं भिन्न गौत्री से संबंध करना चाहिए ।
4. **पाप भीरू :** दृष्य और अदृष्य दु:ख के कारण रूप कर्मों (पापों) से डरने वाला पाप भीरू कहलाता है । जैसे चोरी, परदारागमन, जुआ आदि जो प्रत्यक्ष हानि पहुँचाने वाले हैं ।
5. **प्रसिद्ध देशाचार का पालक :** सद्गृहस्थ को परंपरागत वेश–भूषा, भाषा व सात्विक भोजन आदि सहसा नहीं छोड़ने चाहिए । अत्याधिक भडकीले, अंगों का प्रदर्शन हो तथा देखने वालों को मोह व क्षोभ पैदा हो, ऐसे वस्त्रों को कभी नहीं पहनना चाहिए ।
6. **अवर्णवादी न होना :** अवर्णवाद का अर्थ – निंदा । सद्गृहस्थ को किसी की भी निन्दा नहीं करनी चाहिए। चाहे वह व्यक्ति जघन्य हो, मध्यम हो या उत्तम हो । इससे सामने वाले के मन में घृणा, द्वेष, वैर–विरोध तो पैदा होता ही है, ऐसा करने वाला व्यक्ति नीच गोत्र कर्म भी बान्धता है ।
7. **सद्गृहस्थ के रहने का स्थान :** जो मकान बहुत द्वारवाला न हो, ज्यादा ऊँचा न हो, एकदम खुला भी न हो, चोर, डाकुओं का भय न हो एवं पडोसी अच्छे हो ऐसे मकान में रहना चाहिए ।
8. **सदाचारी के साथ संगति :** सत्संग का बडा महत्व है । जो इस लोक और परलोक में हितकर प्रवृति करते हो, उन्हीं की संगती अच्छी मानी गयी है । खल, ठग, कपटी, भाट, क्रूर, नट आदि की संगति से शील का नाश होता है । नीतिकारों ने कहा है – यदि तुम सज्जन मनुष्यों की संगति करोगे तो तुम्हारा भविष्य सुधर जाएगा और दुर्जन का संग करोगे तो भविष्य नष्ट हो जाएगा । **A man is known by the company which he keeps.**
9. **माता–पिता का पूजक :** उत्तम पुरुष वही माना जाता है जो माता–पिता को नमस्कार करता हो । इनको आत्म हितकारी धर्मानुष्ठान में सहाय करता हो, उनका सत्कार सम्मान करता हो तथा उनकी प्रत्येक आज्ञा का पालन करता हो । मनुस्मृति में कहा है कि दस उपाध्यायों के बराबर एक आचार्य

होता है, सौ आचार्यों के बराबर एक पिता और हजार पिताओं के बराबर एक माता होती है। इस कारण माता का गौरव अधिक है ।

10.उपद्रव वाले स्थान को शीघ्र छोड़ देना : राज्य या दूसरे देश के राज्य की ओर से भय हो, दुष्काल हो, महामारी आदि रोग का उपद्रव हो, गाँव या नगर आदि में सर्वत्र अशान्ति पैदा हो गयी हो तो गृहस्थ को वह स्थान शीघ्र छोड़ देना चाहिए ।

11.निंदनीय कार्य का त्याग : देश, जाति और कुल की दृष्टि से घृणित निन्दित कार्य में प्रवृति नहीं करनी चाहिए ।

12.आय के अनुसार व्यय करना : गृहस्थ को अपनी आय के अनुसार ही खर्च करना चाहिए । जितनी चादर हो उतने ही पाँव फैलाने चाहिए । कमाई के चार भागों में से एक भाग आश्रितों के भरण पोषण में लगाना चाहिए, दूसरा भाग व्यापार में और तीसरा भाग धर्मकार्यों के उपयोग में और चौथा भाग भंडार में (याने बचत खाते में) रखना चाहिए ।

13.संपत्ति के अनुसार वेषधारण : अपनी सम्पत्ति, हैसियत, वैभव, अवस्था, देश, काल और जाति के अनुसार ही वस्त्र एवं अलंकार आदि धारण करना चाहिए ।

14.बुद्धि के आठ गुणों का धनी :

1.शुश्रुषा – धर्मशास्त्र सुनने की अभिलाषा ।

2.श्रवण – धर्म श्रवण करना ।

3.ग्रहण – श्रवण करके ग्रहण करना ।

4.धारणा – सुनी हुई बात को भूल न जाए इस तरह उसे धारण करके मन में रखना ।

5.ऊह – जाने हुए अर्थ के सिवाय दूसरे अर्थों के संबंध में तर्क करना ।

6.अपोह – श्रुति, युक्ति और अनुभूति से विरूद्ध अर्थ से हटना अथवा हिंसा आदि आत्मा को हानि पहुँचाने वाले पदार्थों से पृथक हो जाना ।

7.अर्थ विज्ञान : उहापोह के योग से मोह और संदेह को दूर करके वस्तु के सम्यग् ज्ञान को प्राप्त करना ।

8. तत्त्वज्ञान – जिनेश्वर द्वारा उपदेशित विशुद्ध आत्म–कल्याणकारी तत्त्व युक्त ज्ञान प्राप्त करना ।

15.प्रतिदिन धर्म श्रवण कर्ता : आत्म विकास के माध्यम से मोक्ष प्राप्ति हेतु धर्म श्रवण नित्य करना चाहिए ।

16.अजीर्ण के समय भोजन छोड़ देना : पहले किया हुआ भोजन जब तक हजम न हो, तब तक नया भोजन नहीं करना चाहिए, क्योंकि अजीर्ण समस्त रोगों का मूल है ।

17.समय पर पथ्य भोजन करना : भूख लगने पर आसक्ति रहित अपनी प्रकृति एवं जठराग्नि की पाचन

शक्ति के अनुसार उचित मात्रा में भोजन करना । भक्ष्य-अभक्ष्य का भी विवेक करें । तामसी, विकारोत्पादक पदार्थों का त्याग करें ।

18.परस्पर अबाधित रूप से तीनों वर्गों की साधना : धर्म, अर्थ और काम ये तीन वर्ग हैं । जिससे मोक्ष की प्राप्ति हो वह धर्म है । जिससे लोक के सर्व प्रयोजन सिद्ध होते हो वह अर्थ है । अभिमान और सुखों से सम्बन्धित रसयुक्त प्रीति काम है । अत: इन तीनों की परस्पर अबाधित रूप साधना होनी चाहिए ।

19.अतिथि आदि का सत्कार : घर आए हुए अतिथि का स्वागत करना चाहिए । अतिथि यानि बिना पूर्व जानकारी दिये अचानक आया मेहमान ।

20.अभिनिवेश से दूर : मिथ्या आग्रह से सदा दूर रहना चाहिए । जो व्यक्ति नीतिमार्ग से विमुख हो, जिद्दी और अभिमानी हो, उनसे दूर रहना चाहिए ।

21.गुण का पक्षपाती : सद्‌गृहस्थ को गुणों का और गुणीजनों का पक्षपाती होना चाहिए । गुणीजन जब भी उनके संपर्क में आएं तब उनका आदर करें, उन्हें मान दे और उनकी सहायता करें ।

22.निषिद्ध देश काल चर्या का त्याग : सद्‌गृहस्थ की जीवन चर्या देश और काल के अनुसार होती है । वह ऐसा कोई कार्य नहीं करता, जिससे सामाजिक नियम भंग हो या व्यवहारिक जीवन विकृत होता हो ।

23.बलाबल का ज्ञाता : सद्‌गृहस्थ को अपनी अथवा दूसरों की द्रव्य, क्षेत्र, काल और भाव की शक्ति जानकर तथा अपनी सबलता और निर्बलता का विचार करके सभी कार्य करने चाहिए ।

24.तपस्वीयों व व्रत धारीयों और ज्ञानवृद्धों का पूजक : अनाचार को छोड़कर सम्यक आचार के पालन में दृढ़ता से स्थिर रहनेवालों को व्रतधारी कहते हैं । निश्चयात्मक ज्ञान से जो महान हो वे ज्ञानवृद्ध है । इन दोनों को आसन देना, सेवा करना, उनका सत्कार सम्मान करना चाहिए ।

25.पोष्य का पोषक करना : सद्‌गृहस्थ का यह उत्तरदायित्व है कि परिवार में माता-पिता, पत्नी, पुत्र, पुत्री आदि व अन्य जो उस पर आश्रित हो या सम्बंधित हो, उनका भरण पोषण करें । इससे उन सबका सद्‌भाव व सहयोग प्राप्त होगा ।

26.दीर्घदर्शी : सद्‌गृहस्थ तीक्ष्ण बुद्धि का धनी होता है । वह अपनी प्रतिभा द्वारा सूक्ष्म से भी सूक्ष्म रहस्य को पकड़ लेता है । वह कोई भी कार्य गम्भीरतापूर्वक करता है ।

27.विशेषज्ञ : सार-असार, कार्य-अकार्य, वाच्य-अवाच्य, लाभ-हानि आदि का विवेक करना । तथा नये-नये आत्महितकारी ज्ञान प्राप्त करना, सब दृष्टियों से हितकारी विषय जान लेना विशेषज्ञता है।

28.कृतज्ञ : कृतज्ञ का अर्थ दूसरों के किए हुए उपकारों को याद रखना और यथा शक्ति उनका बदला चुकाने को तत्पर रहना चाहिए ।

29.लोकवल्लभ : सद्गृहस्थ को लोकप्रिय होना जरूरी है । लोकप्रिय वही हो सकता है जो विनय, नम्रता, सेवा, सरलता, दया आदि गुणों से युक्त हो ।

30.लज्जावान : सद्गृहस्थ के लिए लज्जा का गुण परमावश्यक है । लज्जावान व्यक्ति किसी भी पापकर्म को करते हुए संकोच करेगा और प्राण चले जाये पर अंगीकार किये हुए व्रत–नियमों का भंग नहीं करेगा । लज्जा अनेक गुणों की जननी है । वह अत्यन्त शुद्ध हृदय वाली आर्यमाता के समान है ।

''जहाँ शर्म है वहाँ धर्म अवश्य होगा ।''

31.दयावान : दु:खी जीवों का दु:ख दूर करने की अभिलाषा दया कहलाती है । व्यक्ति को जैसे अपने प्राण प्रिय हैं वैसे ही सभी जीवों को अपने प्राण उतने ही प्रिय होते हैं । संकट के समय मनुष्य अपनी आत्मा पर दया चाहता है वैसे ही समस्त जीवों पर दया करें ।

32.सौम्य : सद्गृहस्थ की प्रकृति और आकृति सौम्य होनी चाहिए । क्रूर आकृति और भयंकर स्वभाव वाला व्यक्ति लोगों के अंदर उद्वेग पैदा कर देता है । जबकि सौम्य व्यक्ति से कोई भयभीत नहीं होता, बल्कि प्रभावित होते हैं ।

33.षट् अन्तरंग शत्रुओं के त्याग में उद्यत : गृहस्थ के लिए काम, क्रोध, लोभ, मान, हर्ष और मत्सर यह छ: अंतरंग शत्रु कहे गये हैं । दूसरों की परिणीता अथवा अपरिणीता स्त्री के साथ भोग की इच्छा करना वह है काम । अपनी अथवा पराई हानि को सोचकर या बिना सोचे ही गुस्सा करना, वह है क्रोध । दान देने योग्य व्यक्ति को दान न देना तथा अकारण पराया धन ग्रहण करना, वह है लोभ । किसी के योग्य उपदेश को दुराग्रहवश नहीं मानना, वह है मान । बिना कारण जीवो को दु:ख देकर तथा जुआ, शिकार आदि अनर्थकारी कार्यों में आनंद मनाना हर्ष कहलाता है । और किसी की उन्नति देखकर कूढ़ना, डाह देना मत्सर है । ये छ: हानिकारक होने से त्याग करने योग्य हैं ।

35.इन्द्रिय–समुह को वश करने में तत्पर : अपने इन्द्रिय समुह को यथोचित मात्रा में वश करने का अभ्यास करना चाहिए ।

14. जैन भूगोल

अब हम बहुत प्रचारित अपोलो की चन्द्रयात्रा के संबंध में देखें ।

आज प्रचारतंत्र द्वारा सामान्य रूप से हमें बताया जा रहा है कि वैज्ञानिक चन्द्रमा पर पहुँच गये । गहन विचार और चिंतन के अभाव में बहुत से लोग इसे 'ब्रह्मवाक्यं प्रमाणं' जैसा महत्व दे रहे है ।

किन्तु यह एक प्रपंच मात्र है । इसके सिवाय कुछ नहीं है ।

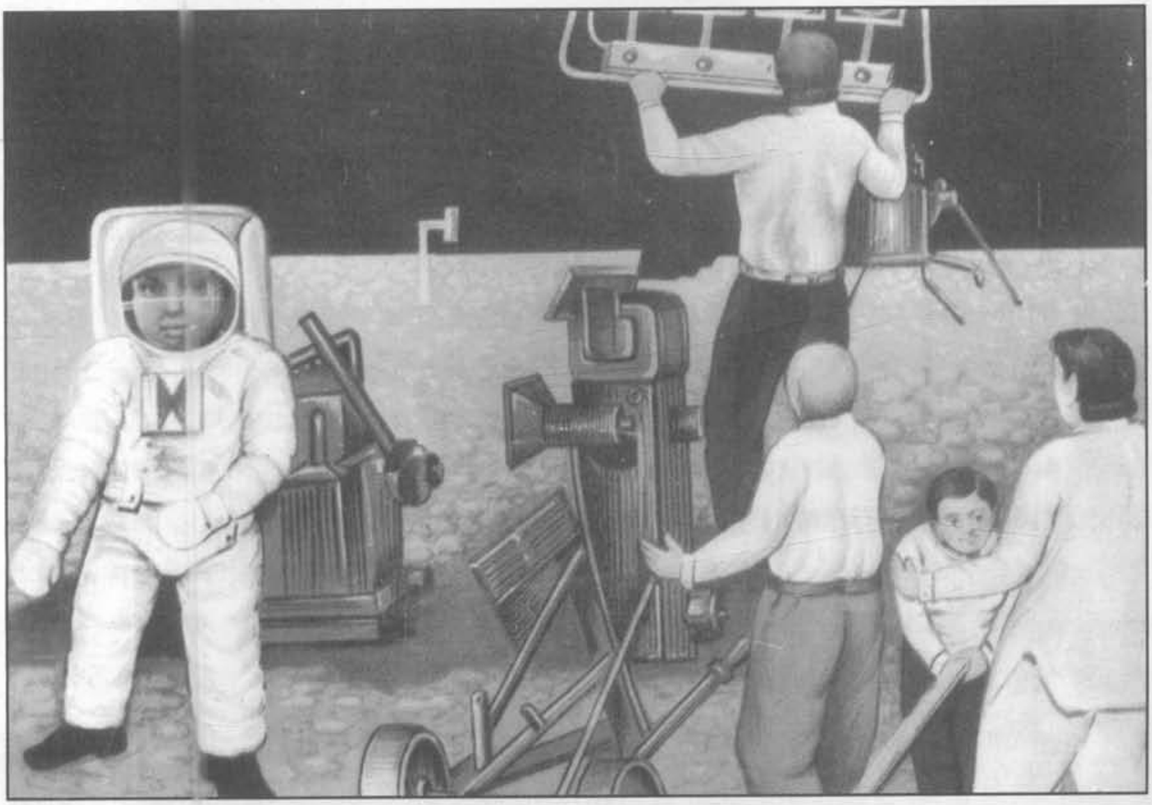

सर्वप्रथम इस बात पर विचार करें कि चन्द्रमा पृथ्वी से कितनी दूरी पर है इस संबंध में वैज्ञानिक एकमत नहीं है, तब चन्द्रयात्रा के संबंध में इतने अधिक प्रचार के पीछे किसी षडयंत्र की गंध आती है ।

स्वयं रशिया एवं अमेरिका में पृथ्वी से चन्द्र की दूरी 7 लाख, 13 लाख और, 22 लाख मील मानने वाले वैज्ञानिक हैं । इसी प्रकार फ्रांस और जर्मनी में पृथ्वी तथा चन्द्र के अंतर को 5 लाख, 13 लाख और, 21 लाख मील मानने वाले वैज्ञानिक हैं ।

अमेरिका की आर्मी सिग्नल कोर के वैज्ञानिकों ने सन् 1946 में चन्द्रमा पर भेजे गये प्रकाश के परावर्तन की रडार तथा अन्य यंत्रो द्वारा गणना की गई तब समय 2.5 सेकेन्ड आया,

जिसके अनुसार दूरी 7 लाख 66 हजार किलोमीटर प्राप्त हुई । जबकि आज जितने भी रॉकेट छोड़े जा रहे हैं, वे 2 लाख 30 हजार मील (3 लाख 68 हजार किलोमीटर) के अन्तर को मानते हुए छोडे जा रहे हैं ।

मजे की बात यह है कि रुस ने चन्द्रमा पर सर्वप्रथम जो रॉकेट भेजा था वह 12,000 मील की गति से भेजा और उसे चन्द्रमा पर पहुँचने में 34 घंटे लगे इससे कुल दूरी 4 लाख 8000 मील हुई जबकि अमेरीका द्वारा छोडा गया रेजरयान प्रति घंटा 6000 मील की गति से 67 घंटे में पहुचा । इस प्रकार यह दूरी 4 लाख 2000 मील हुई ।

अब इन दोनो में से कौन सी बात सत्य मानी जाये? क्योंकि यदि 1 मील का भी फर्क होतो रॉकेट जल जायेगा तथा लक्ष्य से दूर चला जायेगा, जबकि यहाँ तो अन्तर 6000 मील का है ।

पाठ्य पुस्तकों में चन्द्रमा की दूरी 2 लाख 30 हजार मील की पढ़ाई जाती है । किन्तु यह तो कहाँ 2 लाख और कहाँ 4 लाख?

(2) अमेरिकन रिडर्स डायजेस्ट कम्पनी (जिसकी किताबे लगभग 100 से अधिक देश में एवं 30 से अधिक भाषा में निकाली जाती है) की ओर से प्रकाशित 'द वर्ल्ड एटलस' के पृष्ठ क्र.98 पर लिखा गया है कि पृथ्वी के उपर वायुमंडल की जो भिन्न-भिन्न पट्टियाँ है उसमें पृथ्वी से 200 मील पर **आयनोस्फीयर** है जहां तक गई रेडियो तरंगे तथा अन्य तरंगे परावर्तित होकर पृथ्वी पर वापस आ सकती हैं । किन्तु उसके उपर **एक्जोस्फीयर** है जहाँ कोस्मिक किरणों की अधिकता के कारण वहाँ पहुँची हुई **रेडियो तरंगे परावर्तित होकर वापस नहीं आ सकती हैं ।**

यदि अपोलो यान वास्तव में पृथ्वी से दूर **2.5 लाख मील ऊपर** गया हो तो उसके यात्रियों के साथ नासा के वैज्ञानिकों का **संपर्क** किस प्रकार रहा होगा? एपोलो यान के यात्रियों द्वारा टेलिविजन सेट के चित्रों का प्रक्षेपण किस प्रकार किया गया होगा?

नासा के वैज्ञानिकों द्वारा बातचीत की गई, टेलीविजन पर प्रोग्राम दिया जा सका है तो यही बात प्रमाणित करती है कि अपोलो यान पृथ्वी से उपर 190 मील की ऊँचाई से अधिक, **आयनोस्फीयर की सीमा से बाहर** नहीं गया है ।

उनके कहने के अनुसार यदि राकेट 2 लाख 30 हजार मील दूर चन्द्रमा पर गया तो केप केनेडी से नासा संस्था ने आर्मस्ट्रोंग और अन्य यात्रियों से **संदेशों का आदान प्रदान** एवं वार्तालाप कैसे किया ?

(3) अपोलो यान की खिडकी पर **बर्फ और कोहरा** कैसे जम सकता है? क्योंकि वैज्ञानिको की मान्यतानुसार चंद्र पर अत्यंत गर्मी है । ऐसे कई प्रश्न, जब आर्मस्ट्रोंग दिल्ली आये, तब पूछे जाने पर वे निरुत्तर रहे ।

(4) चन्द्रमा से लाई गई **मिट्टी का नमूना** भारत को भी भेजा गया । जिसमें कोई विशेषता नहीं

दिखाई दी । लगभग पृथ्वी के किसी पर्वत की मिट्टी जैसी ही यह मिट्टी भी है । हो सकता है, इस मिट्टी पर कुछ अन्य रासायनिक परिक्षण किए गये हों । यह तो एक कल्पना है । वास्तव में अपोलो यान कहाँ गया, इस संबंध में अगले प्रकरण में विचार किया गया है ।

(5) अब सरलता से समझ में आये ऐसी यह बात भी समझ लीजिये । पृथ्वी का व्यास 7926 मील तथा चन्द्रमा का व्यास 2160 मील माना जाता है ।

इसका अर्थ यह हुआ कि पृथ्वी चन्द्रमा से लगभग 4 गुनी बड़ी हुई और चन्द्रमा पृथ्वी से लगभग 4 गुना छोटा हुआ । अब इसे विचार करें कि पृथ्वी से चन्द्रमा तश्तरी जैसा दिखाई देता है तो चन्द्रमा से पृथ्वी उससे चार गुनी बडी एक थाल के बराबर दिखाई देनी चाहिए । यह तो सरलता से समझ में आने वाली बात है ।

किन्तु अमेरिका से प्रसारित सभी चित्रों में पृथ्वी हमें दिखाई देने वाले चन्द्रमा जितनी ही बडी दिखाई देती है अर्थात् तश्तरी जैसी ही दिखाई देती है । अर्थात् वास्तव में वे जहाँ उतरे थे, वहाँ से चन्द्रमा के ही चित्र लिए हैं जो पृथ्वी के चित्र के नाम से पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं ।

(6) उसके अलावा अन्य विरोधाभासी बातें उन आकाश यात्रियों द्वारा की गई हैं (1) पृथ्वी चांदी के सिक्के के आकार जितनी (2) पृथ्वी सफेद चमकदार गोले जैसी (3) पृथ्वी टेनिस और गोल्फ की गेंद के बीच के आकार की दिखाई दी ।

जब ये यात्री पृथ्वी से 1,40,000 मील की दूरी पर थे, तब उन्हें पृथ्वी चाँदी के सिक्के जितनी बड़ी तथा 1 लाख मील और दूर जाने पर उससे बडी दिखाई दी । इस विरोधाभासी बात को गंभीरता से सोचने की जरूरत है ।

(7) हम सबने पढा है कि चन्द्रमा पर प्रचण्ड गर्मी है । वहाँ बरसात होती नहीं है । लावा भी जहाँ उबल कर एकदम सूख गया है । सीसा पिघल जाये ऐसी तीव्र गर्मी है । इसके बाद भी नील आर्मस्ट्रोंग द्वारा कहा गया कि मेरे जूते छः इंच कीचड में घुस गये तथा उसके नीचे की मिट्टी गीली है। इसमें से कौन सी बात सत्य मानी जाये?

(8) चीन के सेम्युअल शेन्ट्रोन का कहना है कि चन्द्रयात्रा के यात्रियों द्वारा लिए गये चित्रों में रुस एवं अमेरिका का झूठ पकड में आ जाता है । कई चित्र तो देखते ही लगता है कि या तो ये स्टूडियों में लिए गये चित्र होंगे या फिर कैमरे के लेंस की विकृति होगी । अमेरिका दुनिया की आँखों पर पट्टी बंधवा रहा है । पृथ्वी को नारंगी जैसी गोल बताने के लिए ये बनावटी कार्य किए गये हैं ।

चीन के समान, पाकिस्तान भी चन्द्रयात्रा को एक सरासर झूठ मानता है ।

(9) गुजरात समाचार के दि.24-8-1969 के पृष्ठ 5 में दिये गये चित्र में दो आकाशयात्रियों के बीच ध्वज है । दोनों अवकाश यात्रियों की परछाई है जो मान्यता के अनुसार छः गुनी बडी नहीं है । तथा ध्वज एवं उसके दण्ड की तो परछाई ही नहीं है । इससे ज्ञात होता है कि

यह चित्र बनावटी है ।

ये तो कुछ नमूने बताने के तौर से दिए गये हैं । ऐसे कई और तथ्य भी दिये जा सकते हैं । जंबू द्वीप रिसर्च सेंटर के भूतपूर्व डायरेक्टर श्री जयेन्द्रभाई ने ***'अपोलो की चन्द्रयात्रा'*** पुस्तक जिसका प्रकाशन जंबूद्वीप पेढ़ी पालीताणा ने किया है । इसमें ये सारी बाते विस्तार से समझाई गई है।

कई स्कूलों, छात्रों, शिक्षको, पुस्तकालयों, संस्थाओं ने चन्द्रमा पर मनुष्यों (अपोलो अंतरीक्ष यात्रियों) के उतरने के संबंध में शंका करते हुए प्रश्न नासा संस्था से पूछे हैं किन्तु उनके उत्तर नही मिले है । बील कैसींग नाम के व्यक्ति का कहना है कि लगभग 10 करोड अमेरिकनों को चन्द्र पर उतरने की बात पर विश्वास नहीं है ।

इस चन्द्रयात्रा में आर्मस्ट्रोंग चन्द्रमा ऊपर 160 मिनट चले जिसका खर्च 180 अरब रुपये अर्थात 1 मिनट का 1 अरब रुपये से भी अधिक खर्च हुआ, ऐसा बताया जा रहा है । अपोलो यान के उडने के समय जनता को तीन मील दूर खडा रखा गया था । बहुत सी विरोधाभासी बातें अंतरिक्ष यात्रियों के द्वारा दिये गये विवरणों में पढ़ने को मिली है । ये विवरण इस प्रकार है जैसे बच्चे बिना जवाबदारी के कुछ भी ऊटपटांग कहते है ।

पाठक का प्रश्न : चन्द्रयात्रा को झूठी सिद्ध करने के लिए इतने अधिक प्रमाण होते हुए भी हमारे देश के नेता इस पर विचार क्यों नहीं करते हैं?

उत्तर: यह व्यवहार है कि यदि किसी के पास से 100 या 200 रुपये उधार लिए हों, तो उसके दबाव में उसकी प्रशंसा करनी पडती है । उसी प्रकार अन्य अनेक वैज्ञानिकों की बातों को महत्व न देते हुए अमेरिका के मानव सहित अपोलो-8 की प्रारंभ से अन्त तक की छोटी से छोटी बातों, चित्रों तथा प्रशंसात्मक व्यवहार आदि से भारत पर अमेरिका का आर्थिक प्रभुत्व स्पष्ट रुप से जाना जाता है ।

चलिए । चन्द्रयात्रा बनावटी है अब यह सम्पूर्ण रुप से सिद्ध हो गया । अब आगे बढ़ते हैं ।

एक योजन कितने मील के बराबर

शाश्वत पदार्थो का नाप प्रमाणांगुल से होता है ।

1 प्रमाणांगुल = 1 उत्सेधांगुल से चार सौ गुना बड़ा होता है ।

अत: 1 प्रमाणांगुल योजन = 400 उत्सेधांगुल योजन ।

जबकि 1 योजन=4 कोस

अत: प्रमाणांगुल के नाप के अनुसार

1 योजन=1600कोस=1600x2.25 मील =3600 मील

(1 कोस के बराबर 2 मील, 2.25 मील, 2.75 मील माना जाता है ।

इसलिये इसमें हमने 2.25 मील को मानस रूप में लिया है ।)

A. सत्य का परदा खुल रहा है - चन्द्रयात्रा षडयंत्र

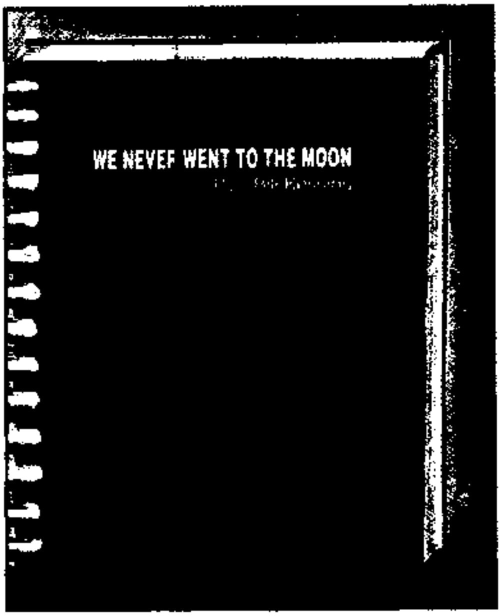

दक्षिण केलिफोर्निया में 'रोकेट डाईन' नाम की अमेरिकन कम्पनी के रिसर्च डिपार्टमेन्ट के तकनिकी विभाग के प्रमुख कार्यकारी 72 वर्षीय मि. बिल केसिंग ने संपूर्ण चंद्रयात्रा के रहस्यमय षडयंत्र के लौह आवरण को, वर्षों की मेहनत एवं प्राण को खतरे में डाल कर 'वी नेवर वेन्ट टु द मून' नामक पुस्तक प्रकाशित कर, अनावृत किया है ।

यह 100 पृष्ठ की पुस्तक है । इसमें अमेरिका के रेगीस्तान जैसा मरूस्थलीय प्रदेश नेवाड़ा राज्य के एक स्टुडियो क्र. 4 में नील आर्मस्ट्रोंग की चन्द्रमा पर उतरने की शूटिंग हुई तथा विश्व के 1 अरब से अधिक लोगों को 1969 में जीवन्त=Live शूटिंग बताकर अमेरिका ने आंखों में धूल झोंकने का कार्य किया है, यह प्रमाणों के साथ, बताया है ।

इस पुस्तक में 62 चित्र है । नेवाड़ा कहाँ है ? उसका नक्शा, इस शूटिंग का नाटक कहाँ किया गया उसका नक्शा, वहाँ के कार्यालय एवं स्टाफ वगैरह सभी के चित्र प्रकाशित हैं ।

बिल केसिंग स्वयं रोकेट बनाने वाले विभाग के प्रमुख हैं । इसलिए स्वयं के सत्यानुभव इस पुस्तक द्वारा प्रकाशित कर चन्द्रयात्रा के षडयंत्र पर डाले गये लौह आवरण को उठा कर समस्त वैज्ञानिक विश्व में हडकम्प मचा दिया है । यह पुस्तक जंबूद्वीप रिसर्च सेन्टर पालिताणा के कार्यालय में है ।

B. चन्द्रमा स्व-प्रकाशित है या पर प्रकाशित ?

पाठ्यपुस्तकों में पढ़ाया जाता है कि चन्द्रमा पर सूर्य का प्रकाश गिर कर परावर्तित होता है । इस कारण चन्द्रमा प्रकाशित दिखता है । चन्द्रमा की उत्पत्ति पृथ्वी से हुई है । पैसेफिक महासागर का हिस्सा पृथ्वी से अलग होकर ऊपर गया । वही चन्द्रमा बना ।

विचारणीय बात है कि यदि चन्द्रमां पृथ्वी का हिस्सा हो तो क्या वह प्रकाश का परावर्तन कर सकता है ? ऐसा तो उसी समय हो सकता है जब चन्द्रमा काँच, धातु अथवा पोलिश किए गये किसी पदार्थ का बना हो । मिट्टी के ढेले पर यदि टोर्च का प्रकाश डाले तो उसका परावर्तन नहीं होता । काँच या किसी पोलिश की गई चिकनी सतह वाली वस्तु पर टोर्च का प्रकाश डालें तो परावर्तन होता है, यह बात समझने योग्य है ।

अब यह बात भी समझने योग्य है कि सूर्य का प्रकाश चन्द्रमा पर पड़े तथा चन्द्रमा का प्रकाश पृथ्वी पर पड़े यह कैसे संभव है ? क्योंकि सूर्य एवं चन्द्रमा के प्रकाश के गुणधर्म अलग-अलग है । इसके लिए एक प्रयोग करके देखे -

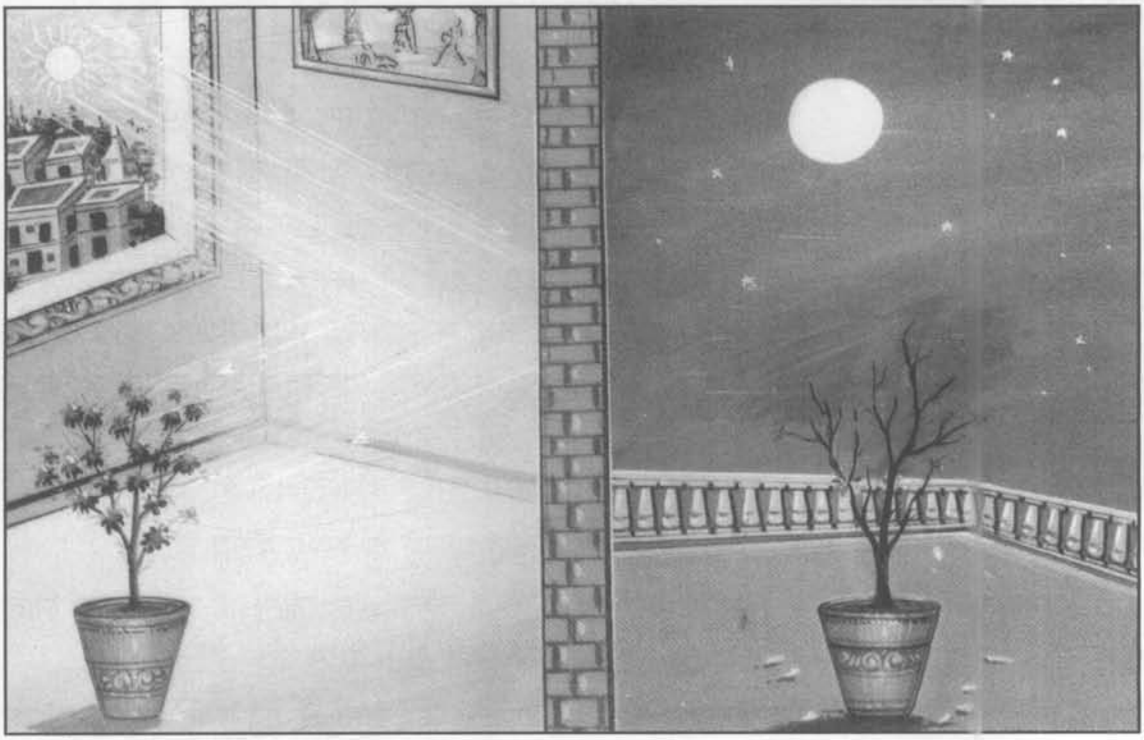

प्रयोग : एक कमरे में पौधे को लें। इसे सूर्य के सीधे प्रकाश में न रख कर परावर्तित सूर्य के प्रकाश में रखो। अर्थात् सीधी धूप में न रखकर खिड़की दरवाजे खुले रख कर छाया में रखने पर भी पौधा बढ़ता है, मरता नहीं।

अब एक पौधे को दिन में अंधकार में रखो। सूर्य का प्रकाश या परावर्तित प्रकाश किसी भी प्रकार उस पर न पड़े। तत्पश्चात् सूर्यास्त के एक-दो घन्टे पश्चात् चन्द्रमां के प्रकाश में उसे रखो तो पौधा मर जाता है । क्यों ?

जब सूर्य के परावर्तित या विकसित प्रकाश में भी पौधा खिलता है तो चन्द्रमा के प्रकाश में वह क्यों मर जाता है । (जबकि कहा जाता है कि चन्द्रमा का प्रकाश सूर्य का परावर्तित है)

इस प्रकार यह सिद्ध होता है कि सूर्य का प्रकाश एवं चन्द्र का प्रकाश दोनों का गुणधर्म अलग-अलग है । अत: जिस प्रकार सूर्य स्वप्रकाशित है उसी तरह चन्द्र भी स्वप्रकाशित ही है ।

C. समुद्र में आने वाले ज्वार-भाटा का कारण

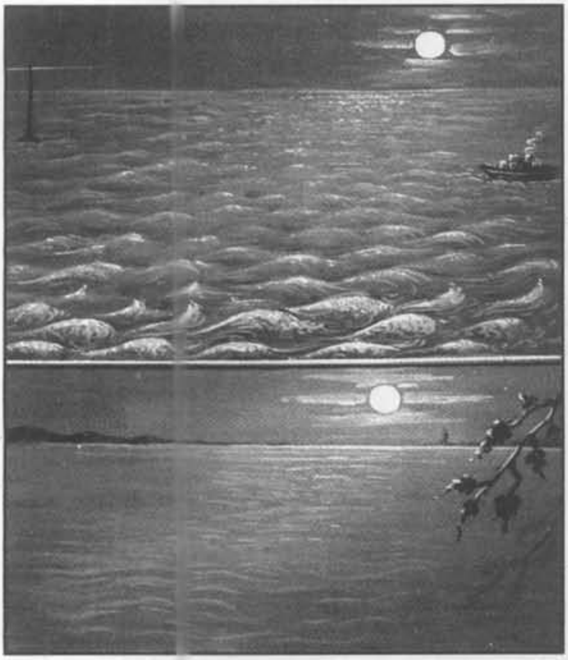

इस चित्र को देखिये । चित्र में समुद्र के ऊपर चन्द्रमा प्रकाशित है, प्रकाश स्तम्भ तथा स्टीमर है । समुद्र में ज्वार आ रहा है । हमें पढ़ाया जाता है, कि चन्द्रमा के कारण समुद्र में ज्वार-भाटा आता है । परन्तु वास्तव में समुद्र में आने वाले ज्वार-भाटा का कारण चन्द्रमा न होकर जंबूद्वीप के बाहर लवणसागर के पाताल कलश है। ये अत्यन्त विशाल पाताल कलश चारो दिशा में चार है तथा उनके बीच लघु पाताल कलश है। इन पाताल कलशों में 1/3 भाग में वायु, मध्य के 1/3 भाग में पानी तथा वायु एवं उपर के 1/3 भाग में पानी रहता है ।

निश्चित समय में कलशों में भरी वायु का संकुचन-प्रसारण होता है इससे समुद्र में ज्वार-भाटा आता है । क्योंकि सभी छोटे बड़े समुद्र अन्ततः लवण सागर से जुड़े है ।

अब यदि चन्द्रमा के कारण ज्वार-भाटा होता है ऐसा माने तो इरान के उत्तर में कास्पियन सागर है जिसका क्षेत्रफल 3,94,299 वर्ग किलोमीटर है तथा लम्बाई 1199 किलोमीटर है । इसका जल खारा है । इसमें कभी भी ज्वार-भाटा नहीं आता । चन्द्रमा का उदय एवं अस्त तो वहाँ भी होता है । पुनः यदि चन्द्रमा के कारण ही ज्वार-भाटा होता हो तो सरोवर, नदी, तालाब, बावडी, कुंआ, घरो के हौज, मटकी आदि में भी ज्वार-भाटा आना चाहिए ।

परन्तु ऐसा कभी नहीं होता है....

सगर चक्रवर्ती ने सिद्धगिरी की रक्षा हेतु लवण सागरको जंबूद्वीप में लाया तथा नजदीक में ही रोक दिया । जिससे जिस-जिस समुद्रो का संपर्क लवण सागर से रहा वहाँ-वहाँ ज्वार भाटा आता है तथा जिनका संबंध नहीं है वहाँ-वहाँ नहीं आता है ।

कास्पियन सागर दक्षिणध्रुव में हजारों मील का विशाल सरोवर है तथा विक्टोरिया झील भी अति विशाल है । परंतु अति विशाल होते हुए भी इन दोनो में कभी भी ज्वार भाटा नहीं आता है क्योंकि ये लवणसागर से जुड़े हुए नहीं है ।

D. सूर्य-चन्द्र कैसे प्रकाशित होते हैं

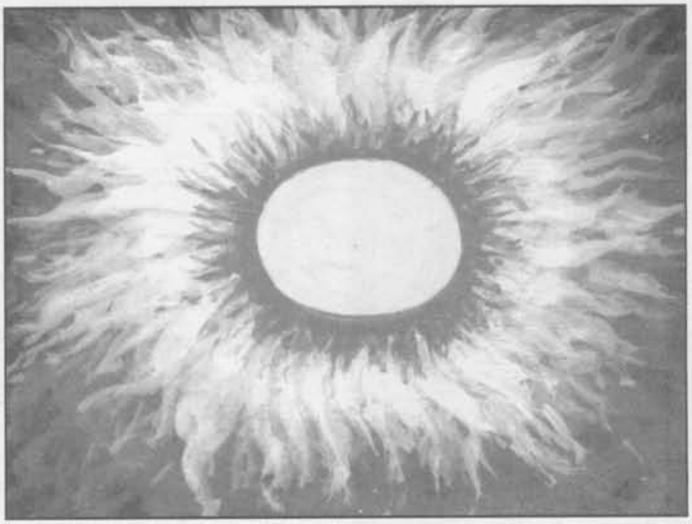

आज का विज्ञान कहता है कि सूर्य आग का दहकता गोला है । यह हाईड्रोजन गैस से भरा है। हाईड्रोजन गैस लगातार हिलीयम गैस में रूपांतरित हो रहा है जिससे सूर्य जल रहा है । इसी से प्रकाश तथा उष्णता हमें प्राप्त हो रही है ।

जरा ध्यान से विचार कीजिये कि हाईड्रोजन गैस हिलीयम में रूपान्तरित हो तो उस हाईड्रोजन के उपर किसका नियंत्रण है ? वह एकदम क्यों नहीं जल जाता? यह सब व्यवस्था कौन करता है ?

और यदि सूर्य जल रहा है तो जैसे जैसे उसके समीप जाये वैसे वैसे उष्णता अधिक लगनी चाहिए । परन्तु ऐसा नहीं होता है । हिमालय, आबु अथवा गिरनार पर जैसे जैसे ऊँचाई पर जाये वैसे-वैसे शीतलता का अनुभव होता है ।

पुन: जैसे-जैसे समय व्यतीत होता जा रहा है वैसे-वैसे उष्णता में कमी होनी चाहिए । किन्तु हजारो लाखों वर्षों पूर्व के इतिहास में उष्णता के प्रमाण का वर्णन आज जैसा ही कहा जाता है ।

ऐसे अनेक प्रश्न अभी भी अनुत्तरिय है । जबकि हमने स्पष्ट बताया है कि सूर्य रत्नों का विमान है । ये रत्न आतप नामक कर्म के उदित होने के कारण, जिस प्रकार रत्न अथवा रेडियम को ईंधन की आवश्यकता नहीं होती है, वे सदा के लिए अपने स्वभाव से ही प्रकाशित होते हैं । उसी प्रकार सूर्य का प्रकाश एवं उष्णता हमेशा के लिए एक जैसी रहती है । सूर्य के रत्नों का गुण ऐसा है कि जैसे-जैसे इसके नजदीक जाये वैसे-वैसे उष्णता कम लगती है । बिलकुल नजदीक पहुँचे तो शीतलता का अनुभव होता है । इसी कारण पर्वतों पर गरमी कम लगती है । क्योंकि सूर्य दहकता गोला नहीं वरन् रत्नों का विमान है । इसी प्रकार चन्द्रमा भी उद्योत नामक कर्मवाला रत्नों का बना विमान है । यह सदा शीतल सौम्य तथा कांतिवाला है । उसे भी किसी ओर के प्रकाश की अथवा ईंधन की आवश्यकता नहीं होती है ।

D. मेरु पर्वत और गतिशील ज्योतिषचक्र

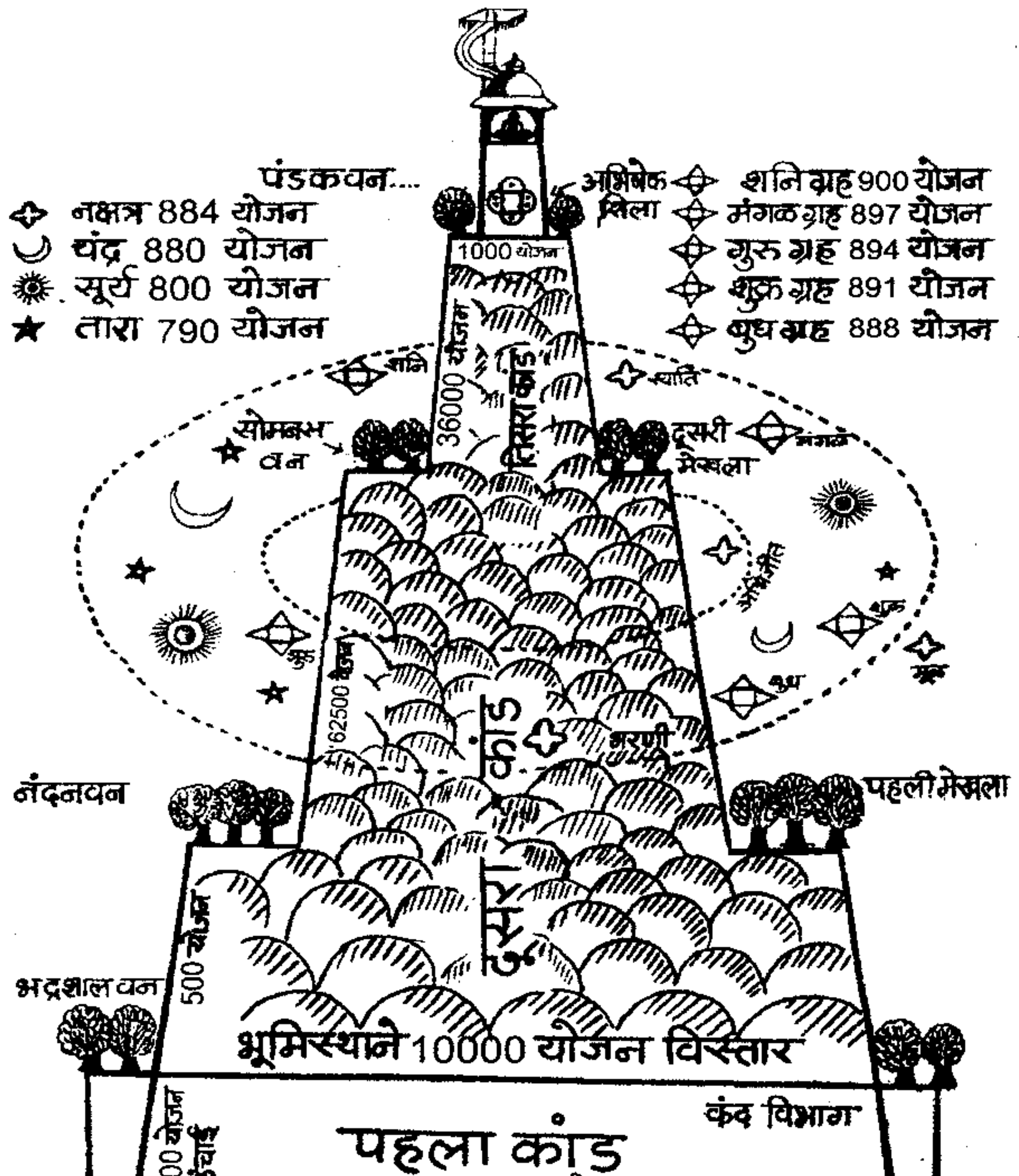

15. सूत्र एवं विधि

A. सूत्र

(अ) स्नातस्या (आ) सकलार्हत् (इ) बडी शांति (ई) संतिकरं

B. अर्थ

(अ) जगचिंतामणि से जयवीयराय

C. विधि

(अ) पक्खी (आ) चौमासिक (इ) संवत्सरी प्रतिक्रमण

16. कहानी

अनुबंध अहिंसा परमो धर्मः

A. सूर्य एवं चन्द्र (प्रथम व्रत)

अहिंसा आत्मसात् होती है तो वैर का त्याग हो जाता है।

जयपुर नाम का नगर था। सुंदर था, समृद्ध था। वहाँ का राजा था शत्रुंजय। पराक्रमी था, यशस्वी था। राजा के दो पुत्र थे, सूर्य और चंद्र। राजा को सूर्य के प्रति अगाध प्यार था। वह सूर्य को गुणवान् और पराक्रमी मानता था, चन्द्र को नहीं। राजा ने सूर्य को युवराज बनाया, चन्द्र को कोई सामान्य पद भी नहीं दिया।

रात्रि के समय चन्द्र अपने कमरे में बैठा सोचता है, पिताजी ने आज सूर्य को युवराज पद दिया...और मुझे एक सैनिक भी नहीं बनाया....। पिताजी ने पक्षपात किया। सूर्य के प्रति पिताजी का प्रगाढ़ राग है, मेरे प्रति द्वेष है। मेरा आज तिरस्कार किया गया....मुझे अब यहाँ नहीं रहना चाहिये। चला जाऊँ दूर देश में.....कि जहाँ मुझे कोई पहचानता न हो।

चन्द्र खड़ा हुआ। कमर पर तलवार बांध ली, थोड़े रूपये ले लिये और गुपचुप वह महल से निकल गया। उसने जयपुर छोड़ दिया....जयपुर–राज्य की सीमा से भी बाहर निकल गया। चलता ही रहा।

आराम करता है जंगल में । वृक्षों के फल खा लेता है, झरनों का पानी पी लेता है ।

चलते चलते वह रत्नपुर नाम के नगर के पास पहुँच गया । नगर के बाहर सुंदर बगीचा था । कुमार बगीचे में गया और एक वृक्ष के तले विश्राम करने बैठा ।

उसके कानों पर मधुर ध्वनि टकराने लगी । ध्वनि धीर–गंभीर सागर जैसी थी । कुमार खड़ा हुआ और आवाज की दिशा में चलने लगा ।

एक तेजस्वी मुनिराज को देखा ।

धर्मोपदेश दे रहे थे, कुछ स्त्री–पुरुष तन्मय हो सुन रहे थे । चन्द्रकुमार भी वहाँ जाकर बैठ गया और उपदेश सुनने लगा ।

मुनिराज ने कहा : 'अपराध करने वाले जीवों की भी हिंसा नहीं करनी चाहिये, तो फिर निरपराधी जीवों की तो हिंसा करने का प्रश्न ही नहीं उठता है । अहिंसा धर्म का पालन करने से जीवात्मा को आरोग्य और सौभाग्य प्राप्त होता है । स्वर्ग और मोक्ष मिलता है ।'

चन्द्रकुमार को मुनिराज का उपदेश अच्छा लगा । प्रवचन पूर्ण होने पर, कुमार ने गुरुदेव को प्रणाम कर कहा : गुरुदेव, मैं अपराधी जीवों को भी नही मारूँगा । राजा का आग्रह होने पर अथवा अपनी वीरता बताने के लिये भी मैं दूसरे जीवों को नहीं मारूँगा । आप मुझे प्रतिज्ञा देने की कृपा करें ।

गुरुदेव ने प्रतिज्ञा दी । कुमार ने प्रणाम किया और वह नगर में गया ।

रत्नपुर नगर का राजा था जयसेन । उसने चन्द्रकुमार के रूप, गुण और पराक्रम देखकर, उसको अपनी सेवा में नियुक्त कर दिया । कुमार ने अपने गुणों से व उचित कर्त्तव्यों के सुंदर पालन से राजा का मन मोह लिया । राजा का चन्द्र के ऊपर संपूर्ण विश्वास हो गया ।

एक दिन राजा ने चन्द्रकुमार को एकान्त में बुलाया और कहा : चन्द्र, देवराज इन्द्र के साथ युद्ध कर सकें वैसे वीर सुभट हैं मेरे पास, परंतु मेरा अनुमान है तेरा पराक्रम उनसे भी ज्यादा है । तेरे बाहु..तेरा सीना...तेरी दृष्टि ...सब तेरे अपूर्व पराक्रम का संकेत देते हैं ।

चन्द्र, एक डाकू है..उसका नाम है कुंभ । वह अति दुष्ट है । शस्त्रसज्ज उनके साथी डाकुओं के साथ वह आता है, कभी गायों का अपहरण कर जाता है, कभी महिलाओं को उठाकर ले जाता है...कभी साधुओं की भी हत्या कर देता है ।

वह कुंभ एक ऐसे दुर्गम किले में रहता है कि जहाँ यमराज भी प्रवेश नहीं कर सकता । किले पर डाकू शस्त्रसज्ज होकर चौकी करते हैं ।

कुमार, क्या तू उस दुर्ग में प्रवेश कर सकता है? और जब वह सोया हो, उस समय उस पर तलवार का प्रहार कर मार सकता है?

चन्द्र ने राजा का प्रणाम कर विनय से कहा : हे पितातुल्य राजेश्वर, युद्ध के अलावा किसी को मैं

नही मार सकता, मेरी प्रतिज्ञा है। और युद्ध में जो भी शस्त्र रहित हो जाता है, जो युद्ध से विरक्त हो जाता है, भयभीत हो जाता है...उनको भी मैं नहीं मारता हूँ।

चन्द्र का धर्ममय और नीतिपूर्ण निर्णय जानकर राजा आनंदित हुआ और चन्द्र को धन्यवाद दिया। चन्द्र ने कहा : महाराज, समय आने पर मै उस डाकू को जिंदा ही पकड़ कर आपके सामने उपस्थित कर दूंगा।

राजा ने चन्द्र को अपने अंगरक्षकों का नेता बनाया है और मंत्री मंडल में प्रमुख स्थान दिया। चन्द्र ने अपने गुप्तचरों को सीमाप्रदेश में भेज दिये और कहा – जब वह कुख्यात डाकू कुंभ अपने राज्य की सीमा में प्रवेश करे, तुरंत ही मुझे सूचित करें।

और, एक दिन समाचार मिला कि पूर्व दिशा की सीमा से कुंभ अपने साथियों के साथ राज्य में प्रवेश कर रहा है।

चन्द्र कुशल सैनिकों के साथ निकल पड़ा। आगे से और पीछे से उसने कुंभ डाकू का रास्ता रोक लिया। कुंभ को मालूम हो गया कि वह बुरी तरह फंस गया है। जैसे जंगल में चारों ओर आग लगी हो और गजराज व्याकुल हो चारों दिशाओं में बचने के लिये दौड़ता है, वैसे कुंभ डाकू चारों दिशाओं में अपने घोड़े को दौड़ाता है...परंतु चारों तरफ शस्त्रधारी सैनिकों को खड़े हुए देखता है। वह निराश हो जाता है। हम थोड़े हैं और सैनिक ज्यादा है। युद्ध में मौत निश्चित है। क्या करुं?

कुंभ सोचता हुआ खड़ा है, इतने में दो हाथों में दो तलवार लिये, काले घोड़े पर बैठा चन्द्रकुमार उसके सामने आ जाता है। सैनिक डाकुओं को चारों ओर से घेर लेते हैं।

कुंभ ने चन्द्रकुमार को देखा। चन्द्र ने कहा : 'दस्युराज, शस्त्र नीचे जमीन पर रख दो और शरण में आ जाओ।'

कुंभ घोड़े पर से नीचे आ गया, शस्त्र जमीन पर रख दिये। वह चन्द्रकुमार के पास आया। चन्द्र घोड़े पर से नीचे उतर गया। दोनों तलवारें सैनिक को दे दी। कुंभ चन्द्र के चरणों में गिर पड़ा। चन्द्र ने दो हाथों से कुंभ को उठाया और अपनी छाती से लगाया। फिर उसने कुंभ को बताया –

कुंभ! मेरा नाम चन्द्र है, मैं महाराज का सेनापति हूँ। यदि तू चोरी...डाका..बलात्कार..अपहरण जैसे कुत्सित कर्म छोड़ देता है, तो मैं महाराजा को विनंती कर तुझे मौत की सजा से मुक्ति दिला सकता हूँ।

कुंभ ने कहा : 'हे वीरपुरुष, मैं आपकी आज्ञा शिरोधार्य करता हूँ। आज से मैं एक भी कुत्सित कर्म नहीं करुंगा।'

'मुझे संतोष हुआ कुंभ। तेरे जैसा पराक्रमी वीर पुरुष प्रजा का अब रक्षक बनेगा। महाराजा भी प्रसन्न होंगे।'

कुंभ और उसके साथियों को लेकर चन्द्रकुमार नगर में आया। महाराज जयसेन ने कुमार का

स्वागत किया । लाख लाख धन्यवाद दिये ।

कुंभ डाकू ने चोरी का सारा माल...राजा को सुपुर्द कर दिया । कुंभ को चन्द्रकुमार ने अपना विश्वासपात्र सहायक सेनानायक नियुक्त किया ।

******

जयपुर में चन्द्रकुमार का बड़ा भाई सूर्यकुमार युवराज था । उसके दुष्ट मित्र सूर्य को उकसाया करते – 'कुमार तुम राजा कब बनोगे? युवराज पद पर ही बूढ़े हो जाओगे?'

सूर्य दीन होकर कहता : क्या करुं ? यह बूढ़ा राज्य छोड़ता नहीं है...और मरता भी नहीं है...

ऐसे नहीं मरेगा बूढ़ा....कुमार, रात्रि के समय पहुँच जा उसके शयन कक्ष में और...

परंतु कुछ बोला नहीं, परंतु उसके मन मे पिता का वध करने की पापवृत्ति पैदा हो गई । दिन–प्रतिदिन यह पाप विचार दृढ़ होता गया । राजा बनने की इच्छा प्रबल होती चली गयी ।

एक रात्रि में एक छोटा तीक्ष्ण छूरा लेकर वह राजा के शयनकक्ष में पहुँच गया । राजा जयसेन सोये हुए थे । सूर्य ने राजा के गले पर छूरे से प्रहार कर दिया ।

जैसे ही सूर्य ने प्रहार किया, पास में सोई हुई रानी की आँखें खुल गयी । उसने सूर्य को देख लिया । पहले सूर्य को पहचाना नहीं..वह जोर–जोर से चिल्लाई...'सैनिकों, जल्दी आओ..वह पापी हत्यारा जा रहा है...' द्वार पर खड़े सैनिक अंदर आ गये । उन्होंने सूर्यकुमार को पकड़ लिया ।

रानी ने तुरंत ही अपना दुपट्टा राजा के घाव पर बांध दिया ।

राजा ने कहा : 'यह घातक कौन है, यह जान लो पहले । उसका वध मत करो'

रानी ने कहा : प्राणनाथ, घातक दूसरा कोई नहीं है, आपका लाड़ला सूर्य है ।

सैनिकों, इस कुलांगार को मैं देशनिकाला देता हूँ । उसको मरे राज्य से बाहर कर दो ।

सैनिकों ने सूर्य के हाथों में बेड़ियाँ डाल दी । वैद्यों ने आकर राजा का घाव साफ किया और औषधोपचार किये ।

राजा ने मंत्रीमंडल को बुलाकर कहा : अब मेरे जीवन का अंत निकट है । आप लोग चन्द्रकुमार की तलाश करो । वह जहाँ भी हो, वहाँ से यहाँ ले आओ । मैं उसको मेरा उत्तराधिकारी बनाऊँगा ।

मंत्रीमंडल को मालूम हुआ कि चन्द्रकुमार रत्नपुर में है – वे रत्नपुर पहुँचे । चन्द्रकुमार से मिले । चन्द्रकुमार को जयपुर की दु:खद घटना सुनाई और महाराज का संदेश भी कह दिया ।

तुरंत ही चन्द्रकुमार महाराज जयसेन को मिला । जयपुर की सारी घटना सुनाई और पिताजी की इच्छानुसार जयपुर जाने की इजाजत मांगी ।

राजा जयसेन ने कुमार को प्रेम से इजाजत दी । भव्य विदाई दी । रत्नजड़ित तलवार भेंट

की...पुत्रवत् प्यार बरसाया ।

राजपुरुषों के साथ चंद्रकुमार जयपुर पहुँचा । सीधा ही वह मृत्युशय्या पर लेटे राजा शत्रुंजय के पास गया । पिता के चरणों में प्रणाम किया । पिता की अवस्था देखेकर वह रो पड़ा । राजा ने कहा :

वत्स, तू यहाँ आ गया, मेरी आत्मा को शान्ति हुई...यह राज्य मैं तुझे देता हूँ बेटे, मैं मोहवश तेरे गुणों को नहीं पहचान सका...' । राजा बोलते बोलते थक गया । मंत्रियों को कहा : आज ही चन्द्र का राज्याभिषेक कर दो...मेरी जिंदगी का भरोसा नहीं है ।

चन्द्रकुमार का राज्याभिषेक कर दिया । राजा शत्रुंजय के मन में सूर्यकुमार के प्रति तीव्र रोष उफन रहा था । 'मैंनें जिस पर अपार प्रेम बरसाया, वही मेरा वध करने पर उतारू हो गया? रोष की भावना में ही राजा की मौत हो गयी ।'

राजा मरकर एक पहाड़ में शेर हुआ ।

सूर्यकुमार गाँव–गाँव, नगर–नगर, वन–वन भटकता हुआ उसी पहाड़ पर पहुँचा । दूर से शेर आया और भयंकर गर्जना करते हुए शेर ने सूर्य को मार डाला ।

सूर्य मरकर उसी पहाड़ पर आदिवासी के वहाँ जन्मा । जब बड़ा हुआ, अनेक कुकर्म करने लगा । एक दिन शेर ने उसको देख लिया..पूर्व जन्म की वैर भावना से प्रेरित होकर उसको मार डाला। आदिवासियों ने मिलकर शेर को मार डाला।

सूर्य का जीव उसी पहाड़ी में वराह के रूप में जन्मा, राजा का जीव भी वराह रूप में उत्पन्न हुआ। दोनों बड़े हुए... लड़ने लगे। तीन वर्ष तक दोनों आपस में लड़ते रहे । शिकारियों ने दोनों को मार डाला।

मर कर दोनों एक वन में हिरण हुए । बड़े होने पर दोनों पूर्व जन्म के वैर के दुर्भाव से प्रेरित हो, लड़ने लगे । एक दिन शिकारी ने दोनों को मार दिया ।

मर कर दोनों हिरण उसी वन में हाथी बने । थोड़े बड़े होते ही दोनों आपस में लड़ने लगे । एक दिन लड़ते लड़ते दोनों हाथी, अपने हस्ती समूह से अलग हो गये, दूर चले गये । शिकारी ने दोनों हाथी को पकड़ लिया ।

शिकारी जयपुर आये और राजा चन्द्र को भेंट दे दिये दोनों हाथी । हस्तीशाला में दोनों को बांध दिये गये । परंतु वहाँ पर भी दोनों लड़ते रहे ।

एक दिन जयपुर में महामुनि सुदर्शन पधारे । सूर्य जैसे तेजस्वी और चन्द्र जैसे सौम्य, वे महात्मा केवलज्ञानी थे ।

वनपालक ने राजा को सूचित किया । राजा चन्द्र मुनिराज के दर्शन करने के लिए तत्पर हुआ । नगर में घोषणा करवा दी । हजारों स्त्री–पुरुष महामुनि के दर्शन–वंदन और उपदेश–श्रवण करने हेतु राजा के साथ नगर के बाहर बगीचे में पहुँचे ।

मुनिराज को भावपूर्ण वंदना कर, राजा–प्रजा सभी उपदेश सुनने के लिये विनयपूर्वक बैठे । केवलज्ञानी महर्षि का उपदेश सुन, सभी आनंदित हुए । राजा ने खड़े होकर विनय से पूछा :

हे श्रेष्ठज्ञानी गुरुदेव, मेरे पास जो दो नये हाथी आये हैं, वे आपस में लड़ते रहते हैं....प्रभो, इसका क्या कारण है?

राजन्, कषाय ही कारण है । एक जीव है तेरे पिता राजा शत्रुंजय का और दूसरा जीव है तेरे भाई सूर्यकुमार का । मुनिराज ने उन दोनो के जन्मों की करुण कथा सुनाई । राजा चन्द्र संसार के प्रति विरक्त हो गया ।

राजकुमार का राज्याभिषेक कर, चन्द्र राजा ने दीक्षा ले ली । उग्र तपश्चर्या की । आयुष्य पूर्ण कर वे देवलोक में देव हुए ।

वे दोनों हाथी लड़ते रहे । मर कर पहली नरक में पैदा हुए ।

चन्द्रराजा का आत्मा, देवलोक का आयुष्य पूर्ण कर पुनः श्रेष्ठ मनुष्यजन्म प्राप्त करता है, साधु बनता है, तपश्चर्या से सभी कर्मों का नाश कर अनन्त सुखमय मोक्ष को पाता है ।

चन्द्र राजा को संसार के श्रेष्ठ सुख और मोक्ष के परम सुख अहिंसा–धर्म के पालन से प्राप्त हुए । इसलिये प्रथम अणुव्रतका सुचारु रूप से पालन करना चाहिये ।

B. राजा हंस (द्वितीय व्रत)

सत्यमेव जयते

सत्य – 1) अच्छा (भला) बोलना, 2) सच्चा बोलना, 3) मीठा बोलना

राजपुरी नगरी के राजा का नाम था हंस ।

हंस राजा प्रजा वत्सल था, धर्मप्रिय था और पराक्रमी था । उसे सत्य बोलने की दृढ़ प्रतिज्ञा थी ।

हंसराजा के पूर्वजों ने रत्नश्रृंग नाम के पर्वत पर भगवान ऋषभदेव का सुंदर जिनमंदिर बनवाया था। वहाँ प्रति वर्ष चैत्र महीने में बड़ा भारी उत्सव मनाया जाता । हंसराजा भी हर साल उस उत्सव में शामिल होता और खुशी मनाता ।

एक बार कुछ एक राजपुरुषों के साथ हंस राजा, भगवान ऋषभदेव के दर्शन करने के लिये रत्नश्रृंग पर्वत की ओर चला ।

अभी आधा रास्ता ही तय किया था कि इतने में भागम्भाग करते हुए आये एक घुड़सवार ने राजा को प्रणाम करके समाचार दिये,

महाराजा, आपके जाने के पश्चात् दस दिन के बाद आपके शत्रु राजा अर्जुन ने नगर पर आक्रमण

कर दिया। जिन सैनिकों ने सामना किया उन्हें उस दुष्ट राजा ने मौत के घाट उतार दिया। राज्य के लोगों में भय फैल गया...आपाधापी और भागम्भाग मच गई। अर्जुनराजा ने राजमहल और राजभंडार पर अपना कब्जा जमा लिया और अपने ही सैनिकों को नियुक्त कर दिये सुरक्षा के लिये...पूरे नगर में घोषणा करवा दी। आज से इस नगरी का राजा अर्जुन होगा। प्रजाजनों को अभयदान है। सभी आनंद से जिएं और व्यापार-धंधा करें।

महाराजा, आपके महामंत्री सुमंत्र नगर में ही एक गुप्त आवास में छुपे हुए हैं। उन्होंने ही मुझे आप तक समाचार भिजवाने के लिये भेजा है। अब आप जो भी उचित समझे वह करें।

राजा के इर्दगिर्द खड़े पराक्रमी सैनिक यह बात सुनकर बौखला उठे.....उनका खून गरम हो उठा...गुस्से में कांपते हुए उन्होंने राजा से कहा : 'महाराजा, अपन को अभी, इसी वक्त यहाँ से वापस लौटना चाहिये...देख लेंगे हम कि उस कायर और पीठ के पीछे हमला करनेवाले अर्जुन की बाहों में कितना बल है। आपकी अनुपस्थिति में एक तस्कर की भांति वह नगर में घुस गया है....हम जाकर के उसे वहाँ से मार भगायेंगे।'

राजा हंस स्वस्थ मन से सैनिकों की बात सुनता रहा। उनके चेहरे पर न तो गुस्सा उभरा.....न ही चिंता का कोई साया उतरा। उन्होंने स्वस्थ मन से कहा :

'मेरे प्रिय सैनिकों, संपत्ति और आपत्ति तो गत जन्म के कर्मों के कारण आती-जाती रहती है। मूर्ख आदमी संपत्ति पाने पर गुब्बारे की भाँति फूल जाता है और आपत्ति में सर पर हाथ देकर आहें भरता है...जो बुद्धिशाली होते हैं...वे आपत्ति और समृद्धि में दोनों दशा में समान भाव धारण करते हैं। इसलिये जिनयात्रा करने का महान पुनीत अवसर छोड़कर, राज्य के लिये वापस लौटना, मुझे तो उचित प्रतीत नहीं होता....इसलिये, यह यात्रा पूरी किये बगैर मैं तो वापस नहीं लौटूंगा। उत्तम पुरुष एक बार जिस कार्य को हाथ में लेते हैं....उसे विघ्नों से डरकर अधूरा नहीं छोड़ते। वे तो विघ्नों की चट्टानों को चकनाचूर करके सिद्धि के शिखर पर पहुँचते हैं।'

राजा की बात सच थी। पर सैनिकों को पसंद नहीं थी। वे जमीन पर निगाहें रखकर खड़े रह गये। राजा ने अपने घोड़े को एड़ी लगाई और रत्नश्रृंग पर्वत की ओर उसे भगा दिया।

करीब करीब सभी सैनिक और राजपुरुष हमारे परिवारों का क्या होगा...इस चिंता में डूबे हुए वापस राजपुरी की ओर लौट आये। केवल एक छत्रधर राजा के साथ गया। पर राजा हंस तो निर्भय, निश्चिंत और प्रसन्न होकर आगे बढ़ता ही रहा।

परंतु राजा रास्ता भटक गया। वह गलत दिशा में चलने लगा। एक जंगल में राजा पहुँचा। राजा ने सोचा 'मेरे सुंदर वस्त्र और कीमती अलंकार देखकर शायद चोर लुटेरे मेरे रास्ते में रुकावट पैदा करेंगे.....फिज़ूल की लड़ाई होगी...इसलिये अच्छा यही होगा कि मैं इस छत्रधर की शाल मेरे शरीर पर ओढ़ लूं और रत्नश्रृंग पर्वत पर जाऊँ।'

राजा ने छत्रधर की शाल लेकर अपने शरीर पर लपेट ली और जंगल के रास्ते पर इधर उधर रास्ता खोजता हुआ आगे बढ़ा। इतने में एक भोलाभोला नन्हा – सा हिरन छलांगे भरता हुआ वहाँ से दौड़ा दौड़ा गया और पास की घनी झाड़ियों में घुस गया। राजा वहाँ सकपका कर खड़ा रहा। उसका घोड़ा भी थक गया था और छत्रधर भी हाँफ रहा था।

हिरन के जाने के कुछ देर बाद ही एक शिकारी हाथ में धनुष पर तीर चढ़ाये हुए आ धमका। उसने चारों ओर देखा..

हिरन दिखा नहीं...न उसके कदमों के निशान...उसने घोड़े पर बैठे हुए राजा की ओर देखा और मुलायम स्वर में पूछा....

भाई, इधर से एक हिरन दौड़ता हुआ गया है...क्या आपने उसे देखा? किस ओर गया वह? कहाँ भाग गया? मैं घंटे भर से उसके पीछे लगा हूँ...वह मेरा शिकार है। राजा सोचता है सच बता दूँगा तो हिरन जिन्दा बचेगा नही और झूठ बोलता हूँ तो पाप लगेगा....मेरी प्रतिज्ञा टूटेगी....इसलिये मुझे सोच समझकर कुछ रास्ता निकालना होगा। राजा ने कहा

अरे भाई तू मेरा हाल पूछ रहा है? मैं रास्ता भूल गया हूँ..इसलिये यहाँ पर आ पहुँचा हूँ।

शिकारी को गुस्सा आ गया'अरे पागल, मैं तुझे पूछ रहा हूँ कि वो घबराया हुआ हिरन किधर दौड़ गया?'

राजा ने कहा : 'मेरा नाम हंस है भाई'

शिकारी आगबबूला हो उठा : हिरन किधर गया...बोल न?

राजा बोला : 'दोस्त, मैं राजपुरी का रहनेवाला हूँ।'

शिकारी झल्लाया : अरे मूर्ख...मैं तुझसे पूछता हूँ कुछ....और तू जवाब देता है कुछ....क्या बहरा हो गया है?

राजा ने कहा : 'मैं तो क्षत्रिय वंश का हूँ'

शिकारी चिढ़ गया....'अरे तू तो सचमुच बहरा है...'

राजा बोला. .. 'तू मुझे रास्ता बता...मैं उस नगर को चला जाऊँगा'

शिकारी तमतमाते हुए पैर पटककर कर 'बहरे....तू जिन्दगी भर तक बहरा ही रहना.....चिल्लाता हुआ वहाँ से चल दिया। राजा अपने रास्ते पर आगे बढ़ा।

आगे उसी रास्ते पर एक साधु मुनिराज को उसने आते देखा। राजा ने दूर से ही उन्हें प्रणाम किया और रास्ता छोड़कर एक ओर खड़ा रहा। साधु मुनिराज के जाने के पश्चात् राजा आगे बढ़ा। मुनिराज पैदल चल रहे थे जबकि राजा घोड़े पर सवार था।

कुछ दूर जाने पर सामने से यमदूत जैसे काले पहाड़ से दो लुटेरे हाथ में खुली तलवार उछालते हुए आते दिखाई दिये । उन्होंने राजा के पास आकर के कहा :

ओ मुसाफिर ! यहाँ से कुछ दूरी पर शूर नामका एक पल्लीपति रहता है..कई दिनों के आराम के पश्चात् आज वह चोरी करने के लिये निकला था । इतने में उसे इस जंगल में एक सिरमुंडे हुए साधु का अपशकुन हुआ और वह वापस लौट आया । उसे उस सिरमुंडे पर भारी गुस्सा चढ़ा । उसने हमें उस सिरमुंडे को मार डालने के लिये भेजा है...तूने उसे सिरमुंडे साधु को देखा है इधर क्या ?

राजा ने अपने मन में सोचा :

यदि मैं खामोश रहूँ या उड़ाऊ जवाब दूंगा तो ये लुटेरे सीधे रास्ते जायेंगे और साधु को मार डालेंगे । मुझे इनको दूसरे रास्ते पर ही रवाना कर देना चाहिये....हालांकि, मुझे झूठ तो बोलना पड़ेगा...पर ऐसे मौके पर सत्य से असत्य वचन ज्यादा हितकारी होगा..कल्याणकारी होगा । यह सोचकर राजा ने उन दो डाकुओं से गलत रास्ता बताकर कहा : 'हाँ, वह सिरमुंडा इधर के रास्ते से ही गया है

डाकू लोग उल्टे रास्ते पर भागे और इधर राजा अपने रास्ते पर आगे बढ़ा । चलते-चलते रात हो गयी । राजा ने एक पेड़ के नीचे विश्राम करने का सोचा । घोड़े को पेड़ से बांधकर, जमीन साफ करके उस पर लेट गया । इतने में पास की झाड़ियों में जैसे कोई कानाफूसी कर रहा हो...वैसी फुसफुसाहट सुनाई दी । राजा लेटे-लेटे बात सुनने की कोशिश करने लगा ।

आज से तीसरे दिन संघ यहाँ से गुजरेगा । संघ में करीबन हजार जितने स्त्री पुरुष हैं । काफी मालदार लोग हैं...ढेर सारा धन होगा । अपनी गरीबी दूर हो जायेगी । बरसों तक फिर कमाने की चिंता नहीं ।

दूसरी आवाज उभरी : पहले हमें उस संघ के रक्षकों को मार देना पड़ेगा क्योंकि सशस्त्र चौकीदार साथ में है..संघ की रक्षा के लिये ।

तीसरा कोई बोला : फिर सारा धनमाल हम आपस में बांट लेंगे ।

राजा हंस यह कानाफूसी सुनकर सोचता है : लगता है ये लोग डाकू हैं । किसी तीर्थयात्री संघ को लूटने की योजना बना रहे हों, ऐसा मालूम पड़ता है । पर मैं इधर अकेला हूँ । संघ की रक्षा कैसे कर पाऊँगा? और फिर मुझे यह भी तो पता नहीं है कि संघ किस ओर से आ रहा है...वर्ना तो वहाँ पहुँचकर संघ को मैं खुद सावधान कर देता ।

राजा की आँखों में नींद नहीं है..वह जगता हुआ लेटा है । इतने में दूसरी ओर से मशाल का प्रकाश दिखाई दिया । कुछ सैनिक उस ओर से आ रहे थे । राजा ने सैनिकों को देखा...सैनिकों ने राजा को देखा । तुरंत आकर उन्होंने राजा को घेरा । उन्हें लगा : 'यह कोई डाकू लगता है' । उन्होंने राजा को जगाया : चल रे..उठ । कौन है तू?

राजा खड़ा हुआ । सैनिकों ने मशाल के उजाले में राजा के सुंदर प्रभावशाली चेहरे को देखा । 'अरे..यह तो कोई अच्छा आदमी मालूम पड़ता है...' उन्होंने मुलायम स्वर में राजा से पूछा :

'ओ मुसाफिर, तूने कुछ चोरों को इधर आते जाते देखा क्या? उन्हें बातें करते सुना क्या? क्योंकि कुछ डाकुओं ने मिलकर एक पदयात्री संघ को लूटने का षड़यंत्र बनाया है...इसी जंगल में वे छुपे हैं ।'

राजा ने पूछा : 'पर तुम कौन हो?'

सैनिकों ने कहा : 'यहाँ से दस योजन दूर श्रीपुर नाम का नगर है...वहाँ के राजा का नाम गाधी है । वह राजा जैन धर्म का पालन करता है । उसने हमें उन डाकुओं को पकड़ने के लिये भेजा है..इसलिये तू यदि कुछ जानता हो तो फटाफट बता दे..ताकि हम उन बदमाशों को पकड़ के ले जायें ।'

राजा सोचता है : 'यदि मैं सच बता दूँ कि सामने के पेड़ों के झुरमुट में चोर छुपे हैं...ये सैनिक उन डाकुओं को मौत के घाट उतार देंगे । उस हत्या का, हिंसा का पाप मेरे को लगेगा । और यदि नहीं बताता हूँ तो वे डाकू संघ को लूट लेंगे...संघ के यात्रियों को मारेंगे । बड़ा अनर्थ हो जायेगा । तो मैं अब क्या करुँ?'

राजा ने सैनिकों से कहा : पराक्रमी सुभटों, मैंने तो यहाँ किसी चोर को देखा नहीं है....और चोरों को पकड़ने के लिये तुम्हारा यहाँ पर रुकना मुझे उचित प्रतीत नहीं होता है....मेरी बात मानो तो जहाँ पर संघ का पड़ाव है...तुम सबको वहीं पहुँच जाना चाहिये । वहाँ संघ के साथ रहकर संघ की रक्षा भलीभांति कर सकोगे । आखिर चोर भी वहीं आयेंगे, यदि वे संघ को लूटना चाहते हैं तो । तुम तुरंत वहाँ पहुँच जाओ..संघ को सुरक्षा मिलेगी...तुम्हें यश मिलेगा और संघ–रक्षा का पुण्य भी मिलेगा ।

मुसाफिर, तेरी बात सही है...हम संघ के पास ही पहुँच जायेंगे । कहकर सैनिक वहाँ से कूच कर गये ।

इधर वे डाकू पेड़ों की झुरमुट से बाहर आ गये । राजा हंस के पास आये और प्रणाम कर कहा : ओ वीर पुरुष ! तुम्हें तो पता हीं था कि हम इन पेड़ों के पीछे छुपे हुए हैं....तुमने हमारी बातें भी सुनी ही होगी । फिर भी, तुमने राजा के सैनिकों को हमारे बारे में कुछ नहीं कहा । हमारा पता नहीं दिया । तुमने हम सबको जीवनदान दिया है । तुम हमारे उपकारी आदरणीय बन गये हो । तुम्हारी बुद्धि को भी धन्य है । तुमने संघ को तो बचाया ही..हमारे भी प्राण बचाये । हम तुम्हारे चरणों में प्रतिज्ञा करते हैं कि आज से कभी भी चोरी या डकैती के काम नहीं करेंगे ।

चोर अपने रास्ते पर चले गये....राजा ने शांति से विश्राम किया । सुबह में घोड़े पर बैठकर छत्रधर के साथ राजा आगे बढ़ा । अभी तो कुछ रास्ता तय किया था कि अचानक कुछ घुड़सवार सैनिकों का काफिला सामने आया । राजा ने अपना घोड़ा खड़ा रखा । उन सैनिकों के सरदार ने पूछा :

ओ राहगीर..तूने राजपुरी के राजा हंस को यहाँ कहीं देखा है?

क्यों भाई तुम्हें उस राजा का क्या काम ।

अरे, वह हमारे महाराजा अर्जुन का दुश्मन है हम उसे पकड़ने के लिये तलाश कर रहे है । जिन्दा या मरा हुआ हम उसे पकड़कर अपने राजा के पास ले जाना चाहते हैं । राजा ने अपने मन मे सोचा

वैसे भी यह जीवन एक दिन समाप्त हो जाने वाला है..इस असार जीवन का क्या मोह रखना ? क्यों झूठ बोलना? उसने कहा :

'सैनिकों, मैं खुद ही राजा हंस हूँ....' और कमर में छुपाई हुई तीक्ष्ण कटारी हाथ में लेकर वह खड़ा रहा । मन में श्री नवकार मंत्र का स्मरण करने लगा ।

सैनिक लोग एक कद आगे बढ़े ही थे, राजा को पकड़ने के लिये कि इतने में आकाश में ढोल–नगारे बजने लगे....फूलों की बारिश होने लगी, आकाशवाणी हुई :

'ओ सत्यवादी राजा, तेरी जय हो...तेरी विजय हो ।' एक तेजस्वी देव वहाँ प्रगट हुआ...उसने हंसराजा से कहा :

'ओ सत्यशील पराक्रमी राजा, तेरी सत्यवादिता से मैं तेरे पर प्रसन्न हुआ हूँ । मैं इस वन का अधिष्ठायक यक्षराज हूँ । इन दुष्ट सैनिकों को यहीं पर बांधकर रखता हूँ । और तू आ, मेरे इस विमान में बैठ जा...तुझे जिस तीर्थ की यात्रा करनी है....जिन भगवान ऋषभदेव के दर्शन करना है...वहाँ हम दोनों चलेंगे ।'

राजा हंस भावविभोर हो उठा । विमान में बैठ गया । छत्रधर से उसने कहा...'तू घोड़े को लेकर अपने नगर में चला जा....मैं वहाँ पहुँच जाऊँगा ।'

यक्षराज ने राजा को अपने ही आसन पर पास में बिठाया ।

अल्प समय में ही विमान 'रत्नश्रृंग' पर्वत पर उतरा । यक्षराज ने भगवान ऋषभदेव की नयनरम्य प्रतिमा के समक्ष दिव्य नृत्य किया । दिव्य नाटक किये । राजा ने बड़े उल्लास व भक्ति से स्तवना की ।

यात्रा कर के यक्षराज के साथ राजा, उस जगह पर वापस लौटा, जहाँ पर कि यक्षराज ने उस शत्रु सैनिकों को बंदी बनाकर रखे थे । राज ने उनके बंधन खोल दिये । यक्षराज ने अपने चार आज्ञांकित यक्षों को बुलाकर आज्ञा की कि, तुम्हें हमेशा उस सत्यवादी राजा की सेवा करनी है....इसे प्रसन्न रखना है । उसके शत्रुराजा को भगाकर, उसका राज्य वापस उसे दे देना ।

यक्षराज ने हंसराजा की विदाई ली और वह अदृश्य हो गया ।

हंसराजा को उठाकर यक्षसेवकों ने राजपुरी के राजमहल में रख दिया ।

शत्रुराजा अर्जुन को तो उन्होंने पहले से ही मार भगाया था । नगर के लोगों ने अपने असली राजा के दर्शन करके भारी हर्ष व्यक्त किया । बड़ा महोत्सव मनाया ।

हंसराजा का आयुष्य पूरा हुआ ।

मर कर के वह देवलोक में देव हुआ ।

सत्य बोलने का कितना प्रभाव है ।

हमें भी असत्य का त्याग करके सत्य वचन ही बोलना चाहिये...झूठ मत बोलो ।

सच्चा बोलो...अच्छा बोलो...मीठा बोलो.....

''सत्यं वद प्रियं वद । नैव वद सत्यमप्रियं'' अप्रिय (जैसे अंधे को अंधा कहना) हो और अहितकारी हो (जैसे अगर राजा हंस मुनि की सही दिशा चोरों को बता देते) ऐसा सत्य वचन भी असत्य गिना जाता है।

C. भावी तीर्थंकर ग्वाले देवपाल की कथा

भरतक्षेत्र संस्कारों से भरपूर क्षेत्र है । इसकी भूमि पवित्र है । इस पवित्र भूमि पर कई महापुरुषों ने जन्म लेकर विश्व का कल्याण करने के लिए विचरण किया है । यह भूमि रत्नों की खान है । इसकी रज (रेत) में सौरभ तथा संस्कार के बीज है । यह अनेक मनमोहक नगरों से सुशोभित है । भरतक्षेत्र का अचलपुर नगर सचमुच अचल था । इसका यह नाम भाव सूचक था । अनेक उदार तथा गुणसंपन्न धन कुबेर यहाँ बसते थे । देव-गुरु-धर्म की यहाँ अच्छी प्राप्ति थी । लोग लक्ष्मी के पुजारी नहीं, किंतु गुणों के पुजारी थे । ऐसा अचलपुर सौ कलाओं से विभूषित था । जिसकी सत्ता तथा कीर्ति, न्याय तथा नीति, गुण तथा धर्म चारों दिशाओं में फैले हुए थे । यशोगाथा जिसकी चारों ओर गाई जा रही थी, ऐसा प्रजा वत्सल तथा प्रतापी सिंहरथ नाम का राजा राज करता था, जिसके रूप-रंग युक्त तथा गुणों से अलंकृत कनकमाला तथा शीलवती नाम की दो रानियाँ थी तथा मनोरमा नाम की एक पुत्री थी । पुत्री रूप की अंबार व गुणों का भंडार भी थी । गुण बिना का केवल रुप किसी समय अनर्थ कर देता है । अत्यंत कठिनाई में डाल देता है ।

उसी नगर में राजा का अत्यंत मान प्राप्त जिनदत्त नाम का सेठ रहता था । वह दयालु, उदार तथा मानवता के गुणों से विभूषित था । दुःखी जनों के दुःखों का साथी था । गरीबों के लिए उसके भंडार खुले थे । ऐसे करुणावान जिनदत्त सेठ के एक क्षत्रिय वंशी तथा कृतज्ञ देवपाल नाम का नौकर ढोर चराने का काम करता था । उस सेठ के परिचय से वह जैन धर्म की ओर श्रद्धालु बना था, तथा जंगल में एक बार सद्गुरुओं के समागम से जैन धर्म तथा अरिहंत का स्वरूप उसने समझा था । विश्व के सभी धर्मों से जैनधर्म उच्च तथा संपूर्ण है, ऐसी समझ उसके खून के प्रत्येक बूँद में थी । धर्म रहित जीवन उसको निष्फल लगता था । जीवन को किस प्रकार जीना, यह सिखाने वाला यदि कोई है तो धर्म कला है, ऐसी श्रद्धा उसके दिल में पक्की हो गई थी । उत्तम व्यक्तियों के संसर्ग से मानव क्या नहीं पा सकता? अथवा तो कहना चाहिए कि कल्याण इच्छुक आत्माएँ सब कुछ पा सकती है ।

वर्षा ऋतु का दिन था । आकाश में बादल छाएँ हुए थे । मेघ सिंह की तरह गर्जना कर रहे थे । बिजली आकाश में थोडी थोडी देर के बाद चमक रही थी । मूसलाधार वर्षा हो रही थी । पानी खूब जोरदार

बह रहा था । नदी का पानी समुद्र को मिलने के लिए मानों उत्सुक बना हो, इस प्रकार बहुत वेग से बह रहा था । ऐसे डरावने समय में देवपाल नदी के किनारे के एक भाग पर गायों को चराने के लिए ले गया था । उस समय गायें नदी के तट के आसपास घास चर रही थी । नदी का जल प्रवाह जोर से आवाज करता हुआ बह रहा था । देवपाल लकडी के सहारे एक ओर खडा-खडा बरसात के दृश्यों को देख रहा था । इतने में पानी जोरदार बहने से नदी के किनारे का एक भाग एकदम गिर गया । देवपाल की नजर उस ओर पडी । दूर से चमकदार वस्तु को देखा तो उसके पास गया । उसके ऊपर की धूल हटाई तो उसमें युगादिदेव आदिनाथ की जिन प्रतिमा को देखा । आनंद से उसके शरीर के रोम-रोम खडे हो गए । वह मन में अपनी आत्मा को धन्य तथा पुण्यशाली मानने लगा । '' अहो ! कैसा सुंदर मेरा भाग्य ! वन में यकायक मुझे श्री जिनेश्वर भगवान के दर्शन हुए । संसार समुद्र को तैरने के लिए मुझे उत्तमोत्तम साधन आसानी से मिल गया । अब तो इस देवाधिदेव को किसी अच्छे स्थान पर स्थापित करूँ । ऐसा संकल्प करके नदी के किनारे पर ही एक पर्णकुटी बनाकर उसमें प्रभुजी को बिराजमान किया, फूल इत्यादि से पूजा करके, प्रभु के सन्मुख दृढ निश्चय किया, कि जब तक इन तीन जगत के नाथ के दर्शन नहीं करूँ, तब तक मुँह में अन्न या जल नहीं लूँगा ।

फिर तो रोज सुबह नदी में स्नान आदि करके, प्रभुजी का अभिषेक करके, पुष्प फलादि चढाकर देवपाल भोजन करता था । इस प्रकार कितने ही दिन बीत गए । एक बार नदी में फिर पानी बढ गया जिससे वह सामने वाले किनारे प्रभुजी की झोंपडी में नहीं जा सका और पूजा नहीं हो सकी । खाने के लिए मना करने पर सेठ ने कारण पूछा तो देवपाल ने सेठ को सारी बात बताई तो सेठ को आनंद और धर्मिष्ठ नौकर पर संतोष हुआ । सेठ ने उसको कहा कि '' तू अपने घर-दहेरासर में पूजा करके भोजन कर लें जिससे तेरे नियम का पालन हो जाएगा । देवपाल ने मना करते हुए कहा कि मुझे उस नदी किनारे के भगवान की

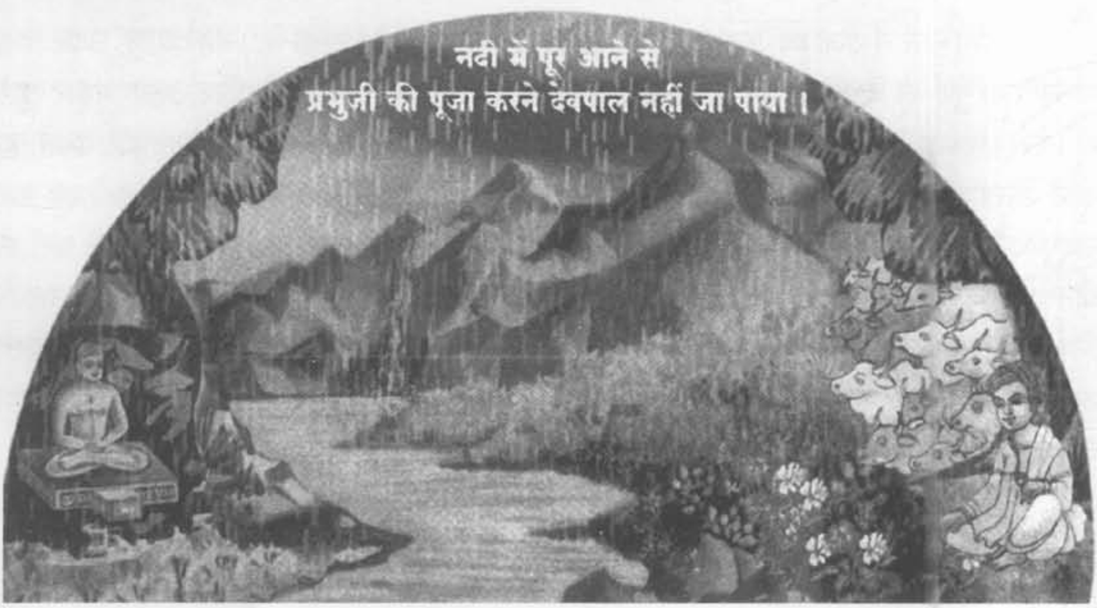

ही पूजा करने की प्रतिज्ञा है ।

सेठ ने उसकी दृढता की प्रशंसा की । कई दिन बीत गए किंतु बरसात ज्यादा होने से नदी का पानी उतरा नहीं । सात दिन तक उसने उपवास किए उससे और निरंतर जिनेश्वर की पूजा के ध्यान की भावना से उसके क्लिष्ट कर्मों का क्षय हुआ । आठवें दिन नदी का पानी उतरने पर वह प्रभुजी की पूजा करने के लिए गया । झोंपडी के पास ही एक विकराल सिंह बैठा हुआ देखकर वह क्षणभर विचार में पडा किंतु प्रभुजी का मुख देखते ही, निर्भय होकर वह झोंपडी वाले मंदिर में पहुंच गया और प्रभुजी की दुःखी हृदय से स्तुती करने लगा ।

हे प्रभु ! आपके दर्शन बिना मेरे सात-सात दिन निष्फल गए । आज का दिन और आज का पल धन्य है जिसके कारण मुझे आपके दर्शन हुए । देवपाल का सत्व तथा उसकी भक्ति देखकर प्रगट हुई बिंब की अधिष्ठायिका देवी ने उसकी प्रशंसा करके इच्छित माँगने को कहा, तब देवपाल ने कहा कि ''हे देवी ! मेरे जीवन में एक ही माँगना है कि मुझे श्री जिनेश्वर भगवान की सेवा भक्ति अखंड रूप से प्राप्त हो । इसके सिवाय अन्य कुछ भी माँगना नहीं है ।'' ''देवपाल ! इसमें तुने क्या माँगा । मैं तो इस लोक के सुख तुझे देने के लिए आई हूँ । अतः दूसरा कुछ माँग ।'' '' देवी, मुझे इस लोक के सुखों की नहीं, लेकिन मोक्ष सुख के लिए यह प्रभु भक्ति की जरुरत है ।'' ''देवपाल ! उसमें मेरी सहायता है हीं, किंतु देव का दर्शन निष्फल नहीं जाता, जिससे मैं तुझे वरदान देती हूँ कि तू इस नगर का थोडे दिनों में राजा बनेगा, और मेरे योग्य कोई कार्य सेवा की आवश्यकता हो तो मुझे याद करना । मैं उपस्थित हो जाऊँगी ।'' यह कहकर देवी अदृश्य हो गई । देवपाल पूजा करके भोजन के लिए घर आया, सेठ ने उसको खीर से पारणा करवाया ।

सातवें दिन वहाँ के राजा की अचानक मृत्यु हो गई । उसके एक पुत्री के सिवाय कोई संतान न होने के कारण नए राजा की तलाश के लिए मंत्रियों द्वारा पंचदिव्य का आयोजन किया गया । मंगल कलश लेकर हथिनी पूरे शहर में घूमकर जंगल में पहुँची तथा वहाँ ढोरों को चरा रहे देवपाल पर अभिषेक किया ।

देवपाल को हाथी पर बिठाकर राजमहल में ले जाकर राजा बनाया गया । देवपाल राजा राज्य व्यवस्था चलाने लगा किंतु उसी गाँव में नौकर और ढोरों को चराने वाला होने के कारण उसे कोई महत्त्व नहीं देता था और उसकी कोई आज्ञा नहीं मानता था । स्वयं के सेठ को मंत्री का पद देने के लिए बुलाया तो वह भी नहीं आया । कुछ अधीनस्थ राजाओं ने उसका राज्य लेने के लिए आक्रमण किया । तब उसने देवी को याद किया, देवी प्रगट हुयी । देवपाल ने देवी को कहा कि ''मुझे राज्य तो दिलवाया, किंतु यह मेरे काम की वस्तु नहीं है । उसके बजाय तो प्रभु की भक्ति तथा नौकर का काम अच्छा था । अत: यह राज्य मुझे नहीं चाहिए ।'' तब देवी ने कहा कि ''यह कोई राज्य छोडने का कारण नहीं है । तो देवपाल ने कहा कि, ''जहाँ मेरी आज्ञा कोई नहीं मानते हो, तो वहाँ मैं राज्य किस प्रकार चलाऊँ ?'' देवी ने कहा कि'' उसका उपाय मैं बताती हूँ । तू किसी कुम्हार से एक मिट्टी का बडा हाथी बनवाना । लोगों के झुंड हाथी को देखने के लिए आएंगे । उन सब के सामने तू हाथी पर सवारी करना । हाथी तुरंत चलने लगेगा और तेरी इच्छा के अनुसार गति करेगा । ऐसा चमत्कार देखकर लोग तेरे चरण छुएंगे तथा तेरे कहने के अनुसार कार्य करेंगे, किंतु तू भगवान की पूजा करना छोडना मत ।''

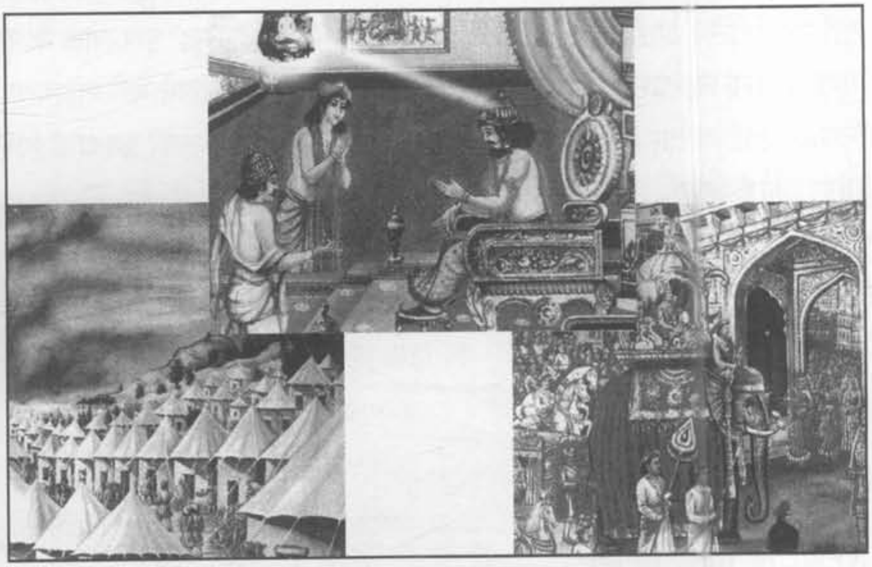

देवपाल देवी की सूचना के अनुसार कार्य करवाकर मिट्टी के हाथी पर बैठने लगा, तब दूसरे लोग उसको देखकर हँसने लगे और सोचने लगे कि आखिर तो यह रबारी जाति का है । राज्य दरबार में इतने सारे जीवित हाथी है, फिर भी यह मिट्टी के हाथी पर बैठा है । किंतु देवपाल तो देवी के कहने के अनुसार, मिट्टी के हाथी पर चढकर ''चल हाथी चल'' बोला कि हाथी चलने लगा तथा देवपाल राजा बाहर आदिनाथ भगवान की प्रतिमा का दर्शन करने के लिए गया । उसने पंचांग प्रणिपात से भगवान को नमस्कार किया । वह देखकर लोग, प्रधान मंडल सभी विस्मित तथा भयभीत होकर राजा की आज्ञा मानने लगे। शत्रु राजा को भी ये सभी समाचार मिले, वे भी डरकर उसकी शरण में आए ''जहाँ चमत्कार वहाँ नमस्कार ।'' ''छोटी उम्र के इस राजा कि महान कीर्ति हुई ।

अपने सेठ को देवपाल राजा ने मंत्री के पद पर स्थापित किया । उसकी सलाह के अनुसार राजा राज्य पालन में तत्पर तथा धर्म ध्यान में आदर वाले हुए । उसने जिन शासन की अच्छी प्रभावना की । अनेक आत्माओं को धर्म के अभिमुख बनाए । पूर्व राजा की कन्या के साथ उनका विवाह हुआ । सुख से

उनका समय बीतने लगा ।

एक बार उस नगर के उद्यान में केवलज्ञानी दमसार महामुनि का पदार्पण हुआ । देवपाल राजा भी मंत्री, रानी इत्यादि के साथ वंदन करने के लिए गए । नमस्कार करके बैठे । सोने के कमल पर बैठे हुए दमसार केवली भगवंत ने धर्म देशना दी, जिसमें जिनेश्वर की भक्ति का वर्णन किया और बताया की उत्कृष्ट द्रव्य पूजा करने से अच्युत देवलोक तथा भावपूजा से अंतमुहूर्त में मोक्ष फल की प्राप्ति हो सकती है । द्रव्य पूजा तथा भावपूजा के बीच में मेरु तथा सरसों जितना अंतर है । इत्यादि जिनेन्द्र भक्ति की महिमा सुनकर राजा ने उन गुरु से सम्यग् दर्शन सहित अरिहंत भगवंत के धर्म को स्वीकार किया तथा नगर में सोने का जिनेश्वर भगवान का मंदिर बनवाया और उसमें बाहर की झोपडी में से प्रतिमा मंगवाकर केवलज्ञानी के हाथों से प्रतिष्ठा करवाई तथा अन्य भी उसमें प्रतिमाएं स्थापित की । सर्व पर्वों इत्यादि में स्नात्र महोत्सव करवाता था तथा साधर्मिक भक्ति, दीन दु:खियों को दान, तीर्थयात्रा इत्यादि विधिपूर्वक करता था । इस प्रकार श्रद्धापूर्वक प्रथम अरिहंत पद की भक्ति करते हुए उसने तीर्थंकर नाम कर्म बांधा। देखो बालकों, एक रबारी के जीव ने कैसे उत्कृष्ट भाव तथा श्रद्धा से प्रभु की भक्ति, पूजा सेवा की जिससे उसने तीर्थंकर नामकर्म बांध लिया । हम भी ऐसे ही भावपूर्वक भगवान की पूजा–सेवा करें तो तीर्थंकर नामकर्म बांध सकते हैं ।

एक बार राजा के साथ रानी महल के गवाक्ष में खडी थी । राज्य मार्ग से एक लकडहारा लकडों का ढेर लेकर चला आ रहा था जिसको देखते ही रानी मूर्च्छित होकर गिर पडी । थोडी देर में शीतलोपचार से होश आया, रानी ने कहा कि उस लकडहारे को यहाँ बुलाओ । राजा ने तुरंत उसको बुलवाया, तब रानी ने उसको पूछा कि क्या तुम मुझे पहचानते हो ? लकडहारे ने कहा कि मैं नहीं जानता। तब रानी ने राजा को कहा कि राजन्, पूर्व भव में मैं इस लकडहारे की पत्नी थी । हम जंगल में जाकर लकडे काटते थे और उनको बेचते थे । आप जिस भगवान की रोज पूजा करते हो, उन भगवान को मैंने झाडी में देखा था ।

एक बार किसी मुनिराज को मैंने पूछा कि "एक पद्मासन वाले भगवान जंगल में हैं । तो उन्होंने कहा कि तू रोज उनके दर्शन करना जिससे तेरा कल्याण होगा । तू नियम ग्रहण कर लें, जिससे तुझे सदा दर्शन का लाभ मिलेगा और प्रमाद में दर्शन से वंचित नहीं रहना पडेगा । इस कठियारे को मैंने और मुनिश्री ने बहुत कहा किंतु उसने नियम नहीं लिया, मैंने नियम ले लिया । मैं रोज दर्शन तथा प्रतिमा पर पुष्पादि अर्पण करती थी । वह लकडहारा अभव्य का जीव होने के कारण, उसने प्रभु पर श्रद्धा नहीं की तथा हँसी मजाक करते हुए उसने उन भगवान को नमन नहीं किया । उसके बाद मेरी मृत्यु होने पर मैं प्रभु के प्रताप से यहाँ के राजा की कन्या हुई तथा यह लकडहारा अब भी लकडों का भार उठाकर अपना जीवन निर्वाह करता है । उम्र अधिक होने के कारण शरीर जर्जरित हो गया है । दुष्कर्म के कारण दु:ख से पेट भरता है, दु:खों का अनुभव करता है किंतु धर्म के बिना जीव की कौन संभाल लें ? न धन मिला, न धर्म मिला । जीवन फालतू गया ।" यह सुनकर सभी को आश्चर्य हुआ । लकडहारे को भी राजा ने धर्म तथा अरिहंत

की भक्ति करने के लिए प्रेरणा दी किंतु उस पापी ने उस पर श्रद्धा नहीं की, क्योंकि अभवि तथा दूरभवी व्यक्ति भगवान पर थोडी भी श्रद्धा नहीं कर सकते । केवल भवि जीव हों वे ही श्रद्धा कर सकते है, तथा धर्म को प्राप्त कर सकते हैं । धर्म रुपी रत्न के लिए अयोग्य जानकर देवपाल राजा ने उसको छोड दिया और देवपाल राजा स्वयं वैराग्य भाव में वृद्धि वाला हुआ । अनुक्रम से अपने पुत्र देवसेन को राज्य सौंपकर अपनी रानी के साथ चंद्रप्रभु गुरु से दीक्षा ली । तप करते हुए 11 अंग तथा नौ पूर्वोका ज्ञान प्राप्त किया तथा प्रथम पद अरिहंत की भक्ति करते हुए शाश्वत–अशाश्वत प्रतिमाओं का हृदय से ध्यान किया । अरिहंत प्रभुओं की जन्म, दीक्षा इत्यादि भूमियों की ये गीतार्थ देवपाल राजर्षि स्पर्शना करते हुए वंदन करते हैं । इस प्रकार अरिहंत पद की आराधना करके छट्ठ–अट्ठम इत्यादि तप करके निरतिचार चारित्र का पालन करके मृत्यु पाकर प्राणत नामक दसवें देवलोक में गए और वहाँ इन्द्र बनें, रानी मनोरमा भी साध्वी का जीवन पालन कर उसी देवलोक में देवता के रुप में उत्पन्न हुई । वहाँ से च्यव कर महाविदेह क्षेत्र में देवपाल राजा का जीवन तीर्थंकर बनेगा तथा उनकी रानी मनोरमा का जीव उनका गणधर बनेगा।

इस कथा का सार यह है कि बिल्कुल अनपढ, गँवार और ढोरों को चराने वाले नौकर को जिनेश्वर भगवान की प्रतिमा की पूजा के प्रताप से उसी भव में हाथी, घोडे, रथ आदि से समृद्ध राज्य मिला, राजकन्या पत्नी के रूप में मिली, उसने जिनशासन की प्रभावना की । लोग उसको देखकर धर्म के प्रभाव में आए । उसने तीर्थंकर नाम कर्म बाँधकर लोकोत्तर पुण्य उपार्जन किया । इसी प्रकार विवेकी समझदार आत्माओं को भी श्री जिनशासन की प्रभावना करनी चाहिए । दूसरा यह कि लकडहारे की पत्नी पूजा करने के प्रभाव से दूसरे भव में राजपुत्री बनी और उसके बाद गणधर पद को प्राप्त करेगी, तथा जो धर्म की मजाक करता था वह पति लकडहारा दरिद्र–गरीब अवस्था को प्राप्त करके दुःखी हुआ । यह पाप व पुण्य का प्रत्यक्ष फल देखकर तुम्हें भी प्रभु की पूजा अवश्य करनी चाहिए। बिना प्रभु के दर्शन कीये मुँह में पानी भी नहीं डालना चाहिए, जिससे अपना तथा दूसरे अनेकों का कल्याण हो ।

D. महणसिंह की कथा

व्रत पालन की दृढता और प्रतिक्रमण की पावन शक्ति प्रदर्शित करता हुआ महणसिंह का चरित्र, धर्म की चुस्तता के कारण इस भव और परभव में होनेवाले कल्याण का परिचय देता है । दिल्ली के धर्मपरायण महणसिंह की सत्यवादी के रूप में सर्वत्र ख्याति फैली हुई थी । वे आचार्य देवसुंदर सूरि और आचार्य सोमसुंदरसूरि के भक्त थे। एक बार उन्होंने षड्दर्शनों और चौरासी गच्छों के सर्व साधु–संन्यासियों को आमंत्रित किया था। चौरासी हजार टके (तत्कालीन सिक्के) खर्च करके सभी का अभिवादन किया था । इस मंगल प्रसंग पर पंन्यास देवमंगल गणि महोत्सव के दूसरे दिन दिल्ली पहुँच चुके थे, तब उस दिन भी महणसिंह ने नगर प्रवेश महोत्सव एवं लघु संघ पूजा की थी । इस धर्म कार्य में उन्होंने छप्पन हजार टके खर्च कये थे ।

षड् दर्शन के पोषक महणसिंह की दानगंगा धर्म के मार्ग पर अविरत बहती रहती थी । यह देखकर

किसी द्वेषी ने दिल्ली के बादशाह फिरोजशाह तुगलक के कान भरे कि महणसिंह के पास लाखों रुपयों की विपुल धनराशि है । किसी न किसी बहाने से उसे दंडित करके इसका धन हडप लो ।

बादशाह फिरोजशाह ने महणसिंह को उपस्थित होने का आदेश दिया । उन्होंने महणसिंह को प्रश्न किया '' तुम्हारे पास कितना धन है ?'' श्रावक महणसिंह ने नम्रतापूर्वक उत्तर दिया, ''जहाँपनाह ! मुझे गिनती करनी पडेगी । कल मैं सारा धन गिनकर आपको निवेदन कर दूँगा ।'' अपनी संपत्ति की गणना करके महणसिंह बादशाह फिरोजशाह के पास आया और कहा ''मेरे पास चौरासी लाख की पुरानी मुद्राएँ है ।'' बादशाह महणसिंह की ऐसी सच्चाई पर खूब प्रसन्न हुए । उन्होंने एक पाई भी नहीं छिपाई थी । बादशाह ने महणसिंह को सोलह लाख मुद्राएँ राजकोष में से देकर उन्हें करोडपति बना दिया । महणसिंह के प्रति द्वेष महसूस करने वाले बादशाह के मन में आदर का सागर उमड पडा । अपने राज्य में करोडपति बसते हैं, इस बात का गौरव बादशाह को लेना था । बादशाह ने अपने हाथों से उनकी हवेली पर ''कोटी ध्वज'' फहराया । पूज्य मुनिवरों तथा महणसिंह के परिवार का सम्मान किया ।

एक बार बादशाह को अन्य प्रदेश में जाने का हुआ तब अपने रिसाले में महणसिंह को भी साथ में लिया । रास्ते में सूर्यास्त होने में थोडा समय शेष था अत: महणसिंह ने अपने घोडे को एक ओर ले जाकर अपने पास रखे हुए प्रतिक्रमण के उपकरण निकालें । चरवले से भूमि का प्रमार्जन करके कटासना बिछाया और प्रतिक्रमण करने लगे । दिन भर में जानते-अजानते मन-वचन-काया से जो कोई भी पाप हुए हो तो उनकी शुद्ध भाव से क्षमा माँगी । प्रतिक्रमण पूर्ण हो जाने पर वे बादशाह के साथ होने के लिए आगे बढें ।

दूसरी ओर रिसाला आगे बढाता हुआ बादशाह दूसरे गाँव में पहुँचा, तब रिसाले के साथ महणसिंह को नहीं देखा । उनकी खोज करने के लिए सैनिकों को चारों ओर भेजा । महणसिंह को क्या हुआ होगा ? इसकी भारी चिंता सताने लगी । इतने में महणसिंह अपने अश्व पर आ पहुँचे । बादशाह ने पूछा - ''महणसिंह ! आप कहाँ थे ? आपको खोजने के लिए मैंने लोगों को दौडाया है ।'' महणसिंह बोलें ''जहाँपनाह ! मेरे विषय में इतनी चिंता करने के लिए आपका मैं बडा आभारी हूँ । लेकिन मैं जहाँ था वहाँ पर सुरक्षित था, मेरा नियम है कि सूर्यास्त का समय हो जाए तब जिस स्थान पर मैं होता हूँ वहीं पर प्रतिक्रमण करना । बरसों से मैं इस नियम का अचूक पालन करता चला आ रहा हूँ । (बच्चों! इन महणसिंह की प्रतिक्रमण नियम की कैसी दृढता ! जिस प्रकार मुसलमानों के नमाज का समय होता है तब वे जहाँ होते हैं, वहीं नमाज पढने बैठ जाते हैं, उसी प्रकार महणसिंह भी वहाँ जिस जगह पर थे, वहीं प्रतिक्रमण करने बैठ गए, उसी प्रकार हमे भी पाठशाला और धार्मिक पढाई का समय आदि का ध्यान रखना चाहिए। स्कूल और परीक्षा का बहाना लेकर छोड नहीं देना चाहिए।)'' इस प्रकार जंगल में आप अकेले बैठो, तो उससे प्राणों को कितना खतरा होता है इसका आपको अनुमान नहीं है । अपने शत्रुओं का पार नहीं है और वैर लेने के लिए वे चारों और घूम रहे हैं । आपको पकड कर मार डालें तो क्या होगा ? आप भविष्य में ऐसा साहस न करें ।'' महणसिंह ने कहा ''धर्म के लिए जीवन है । धर्म करने से मृत्यु आ जाए तो वह भी

स्वीकार्य है। जंगल हो या श्मशान, मकान हो या मैदान–सूर्यास्त के समय मैं अवश्य ही प्रतिक्रमण करता हूँ।''

महणसिंह की धर्मनिष्ठा से प्रसन्न बने हुए बादशाह ने आदेश निकाला कि महणसिंह प्रतिक्रमण करने बैठें तब एक सौ सैनिक उन्हें संरक्षण प्रदान करें। वह रिसाला वापस दिल्ली लौटा। एक बार बादशाह ने महणसिंह के नियम की दृढता की कसौटी करने के लिए झूठे अपराध में उन्हें पकडवा कर हाथ–पाँव में बेडियाँ पहिनाकर अंधेरे कारावास में डाल दिया। बाहर सशस्त्र सुभट पहरा लगाते थे। बादशाह को देखना था कि महणसिंह अब क्या करते हैं ? अपने नियम का पालन कैसे करते है? महणसिंह ने कैदखाने के प्रहरी को कहा ''प्रतिक्रमण के समय तू यदि मेरी बेडियाँ खोल दे तो तुझे मैं नित्य दो स्वर्ण मुद्राएँ दूँगा। इस प्रकार महणसिंह बिना कष्ट से एक माह तक प्रतिक्रमण करता रहा। कही से बादशाह को इसका पता चल गया। तब वे महणसिंह की निष्ठा और श्रद्धा से प्रभावित हुए। महणसिंह को उन्होंने कारावास से मुक्त किया और उनका सन्मान करके उन्हें राज्य का कोषाध्यक्ष बनाया।

बच्चों ! आपको भी इस महणसिंह के दृष्टांत से प्रेरणा लेकर प्रतिक्रमण नित्य अवश्य करना चाहिए। महणसिंह तो जंगल और कारावास में भी प्रतिक्रमण करना नहीं चूकते थे, तो आपको कम से कम उपाश्रय अथवा घर में अवश्य प्रतिक्रमण करना चाहिए।

प्रतिक्रमण में रखने की सावधानी : विशेष तो पर्युषण के आठ दिनों के प्रतिक्रमण में तथा उसमें भी संवत्सरी के प्रतिक्रमण में कई लडके आदि हँसते रहते हैं, हँसी मजाक करते हैं, तथा अनेक प्रकार के उपद्रव करके अन्य जनों को प्रतिक्रमण करने में अंतराय–बाधा पहुँचाते हैं। ऐसे लोग देव–गुरु–धर्म की आशातना करके बहुत बडा और अत्यंत कष्टदायक पाप कर्म बाँधते है और ऐसा उपद्रव–शैतानी करने से ज्ञानावरणीय कर्म का बंध भी होता है, अत: बच्चों ! आपको यह बात विशेष रुप से ध्यान में रखनी है कि प्रतिक्रमण में ऐसी शैतानी मस्ती न करें। दूसरे जो भी ऐसा करेंगे, वे भरेंगे, परंतु हमें तो सावधना रहना है।

प्रतिक्रमण न हो सके तो साधु म.सा. के उपाश्रय में जाकर गुरुवंदन करें। दोषों की आलोचना–क्षमापना करके पच्चक्खाण लें। धर्म शास्त्रों का श्रवण–साधुओं के शरीर की शुश्रुषा – भक्ति करें। रात्रि में गुरु भगवंतों को अब्भूट्ठिओ खामके वंदन नहीं किया जाता, परंतु दो हाथ जोडकर, मस्तक झुकाकर मात्र ''मत्थएण वंदामि'' और वापस लौटते समय ''त्रिकाल वंदना'' कहा जाता है।

बच्चों ! आप सायंकाल में प्रतिक्रमण न कर सको तो सामायिक अवश्य करना, वह भी न कर सको तो ''सात लाख'' सूत्र बोलकर संक्षेप में पाप का प्रायश्चित करना न भूलें। प्रतिक्रमण–सामायिक करने से क्या लाभ होता है ? इसका वर्णन आपको पूर्व में पहले ही समझा दिया गया है।

जैनेत्तर ग्रंथों में भी सायं संध्यावंदन करना चाहिए ऐसी मान्यता है। भागवत पुराण में तो यहाँ तक लिखा है, कि जिसे संध्या वंदन का ज्ञान नहीं है, जो संध्या वंदन नहीं करते, ऐसे लोग जीवित अवस्था में शुद्रवत् है और मरने के पश्चात् कुत्ते की योनि में जन्म लेते हैं।

17. प्रश्नोत्तरी

1.	सूत्र (ORAL)	: नवकार से सात लाख तक
2.	अर्थ (WRI.)	: नवकार मंत्र
3.	काव्य (ORAL)	: प्रार्थना – चत्तारि मंगलं एवं प्रभु स्तुतियाँ अष्टप्रकारी पूजा के दोहे एवं नवांगी पूजा के दोहे। चैत्यवंदन – श्री सीमंधर स्वामी एवं शत्रुंजय तीर्थ का चैत्यवंदन स्तवन – श्री सीमंधर स्वामी एवं शत्रुंजय तीर्थ का स्तवन स्तुति – श्री सीमंधर स्वामी एवं शत्रुंजय तीर्थ की स्तुति
4.	पच्चक्खाण (ORAL)	: नवकारसी।
5.	विधि (WRI)	: गुरुवंदन, सामायिक, चैत्यवंदन।
6.	प्रश्नोत्तरी (ORAL)	:

प्रश्न – 1 :– सही जोडी बनाईए

(ए)	(बी)
जय वीयराय	जिन मुद्रा
नमुत्थुणं	मुक्ताशक्ति मुद्रा
काउस्सग्ग	योग मुद्रा
सुदर्शनपुर	कोषावेश्या
पाटलीपुत्र	मदनरेखा
रत्नजड़ित	फुलमाला
ढंढणकुमार	हरिश्चंद्र
रत्नचुराना	देवकी
श्मशान	किसान
स्वप्न	लक्ष्मीवती

प्रश्न – 2 :– खाली जगह पूर्ण कीजिए

1. .... "भूख से कम खाना" कहलाता है।
2. स्वाध्याय .... प्रकार के है।
3. बाह्य तप से भी .... का फल कई गुणा ज्यादा है।
4. भद्दिल ग्राम में .... सेठ रहते थे।
5. हरिश्चंद्र राजा ने .... के घर पर काम किया था।
6. .... की निर्मल गंगा में स्नान करके शुद्ध और भार रहित हो जाना चाहिए।
7. श्री कांत राजा ने .... न ली।
8. भगवान के पिता .... स्वप्न देखते है।
9. ज्ञान पंचमी .... को आती है।
10. तीर्थ की .... से बचना चाहिए।

प्रश्न – 3 :– सही (✓) या गलत (✗) का निशान करें।

1. तीर्थ क्षेत्रं कृतं पापं, अन्य क्षेत्रे विनश्यति
2. वैशाख सुदि 11 को मौन एकादशी आती है।
3. तीर्थयात्रा विधि तथा विवेक पूर्वक करनी चाहिए।
4. तीर्थभूमि पर किये पाप वज्र के लेप जैसे होते हैं।
5. तलेटी से रामपोल तक 3745 पगथिए हैं।
6. शत्रुंजय के 15वें उद्धार के समय आदिनाथ दादा ने 7 श्वासोश्वास लिए थे।
7. शत्रुंजय पर्वत शाश्वत है।
8. शत्रुंजय की नव टुंक में 143 मंदिर है।
9. गिरिवर दर्शन विरला पावे पूर्व संचित कर्म खपावे।
10. फागण सुद तेरस को भाडवा डुंगर की महिमा है।

प्रश्न – 4:– सही (✓) या गलत (✗) का निशान करें।

1. पर्युषण महापर्व में चैत्य परिपाटी एक ही देरासर की करनी चाहिए।
2. नवकार को पुरा गिनने से 500 साल तक के नरक के दुःख नहीं भोगने पडते हैं।
3. पुरुष को दायी और स्त्री को बायी तरफ खडे रहकर पूजा करनी चाहिए।
4. उपाश्रय संबंधी दश त्रिक बताई गई है।
5. एक वर्ष में टीवी देखेने से 1211 घंटों का समय बिगडता है।
6. टी.वी. याने टोटल विकास
7. दान के पांच प्रकार में से अनुकंपादान तीसरे नं. का है।
8. पानी के एक बिंदु में बहुत सारे जीव है।
9. पिताजी घर में हृदय समान है एवं माताजी घर में मस्तक समान है।

प्रश्न – 5 :– प्रश्नों के उत्तर लिखिए

1. टी.वी के बारे में एक चिंतक ने क्या कहा है ?
2. संसार का पक्षपात कैसे छुट सकता है ?
3. अपने भगवान सबसे महान क्यों हैं ?
4. जैन धर्म में बताए हुए सात क्षेत्र कौन कौन से हैं ?
5. दान के पांच प्रकार कौन से हैं ?
6. गुरुभगवंत को वंदन करने से क्या लाभ है ?
7. हमारे गुरु कौन है – संक्षिप्त में बताएँ ?
8. कौन से सूत्र में कितनी प्रार्थनाएं बताई गई है ?
9. पूजा करते समय कितनी शुद्धि होनी चाहिए?
10. कितने प्रकार की त्रिक हमारे शास्त्र में दिखाई गई है ?
11. तीर्थ कितने प्रकार के है, कौन कौन से ?
12. नवकार के एक अक्षर के स्मरण से कितने सागरोपम का पाप नष्ट हो जाते हैं ?
13. गिरीराज में बडी टुंक पर कितने प्रतिमाजी बिराजमान है ?

14. नवकार मंत्र की महिमा के कितने दृष्टांत हमारी बुक में दिए गए है ?
15. बाह्य तप कितने प्रकार का है ?
16. अभ्यंतर तप कितने प्रकार का है ?
17. स्वाध्याय कितने प्रकार का है ?
18. आरती क्यों उतारते हैं ?
19. भगवान किसे कहते हैं ?

<u>प्रश्न – 6 :– प्रश्नों के उत्तर दिजीए</u>

1. प्रभु दर्शन से क्या लाभ है ?
2. स्वस्तिक का महत्व समझाओ ?
3. प्रभु की इन्द्रादि देव सेवा क्यों करते हैं ?
4. सुदर्शना राजकुमारी का दृष्टांत लिखिए ?
5. भील भीलनी का दृष्टांत लिखिए ?
6. हमारी बुक में कौन कौनसी कहानी बताई गई है ? नाम बताइए ?
7. अभ्यंतर तप के नाम बताइए ?
8. पर्युषण महापर्व के 5 कर्तव्य लिखिए ?
9. पुष्प पूजा करते समय हमको क्या भावना होनी चाहिए ?
10. अभक्ष्य और महाविगइ के कितने प्रकार है ?
11. हमें विनय विवेक में कौन कौनसी बातों का ध्यान रखना चाहिए ?
12. अभयदान के बारे में समझाईए ?
13. उचित दान के बारे में समझाईए ?
14. दर्शन के उपकरण बताईए ?
15. चारित्र के उपकरण बताईए ?
16. ज्ञान के उपकरण बताईए ?
17. हमारी बुक में नरक की कौन कौनसी सजा बताई गई है ?
18. हमें जीवदया किस प्रकार से पालनी चाहिए ?
19. दीक्षा की महता बताती हुई कहानी शोर्ट में बताइए ?
20. मम्मण शेठ का दृष्टांत शोर्ट में बताइए ?
21. दो प्रकार के तीर्थ की व्याख्या बताइए ?
22. पांच महाव्रत कौन कौन से हैं ?
23. परमात्मा के पास कौन कौनसी प्रार्थनाएं हमको करनी चाहिए – 5 प्रार्थनाओं का नाम लिखें ?
24. विधि शुद्धि समझाईए ?
25. अंग शुद्धि समझाईए ?
26. प्रणाम त्रिक में कौन कौन से प्रणाम आते हैं ?

18. सामान्य ज्ञान

A. GAME

निम्न तीर्थों के राज्य और मूलनायकजी इस फूल में बिखरें हुए हैं, कृपया इन्हें ढूंढिए :

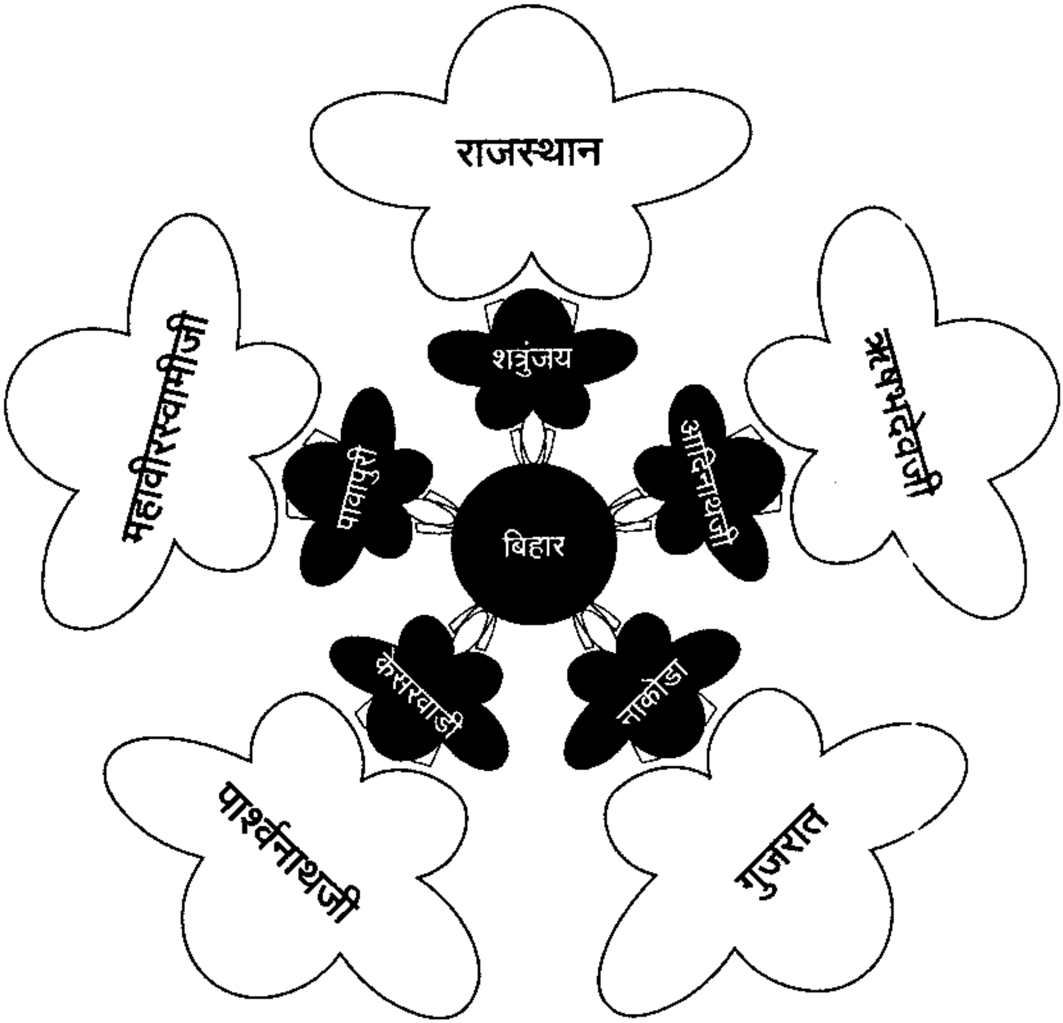

तीर्थ	मूलनायक	राज्य
1. शत्रुंजय		
2. नाकोडा		
3. पावापुरी		
4. केसरवाडी		

नव तत्त्व

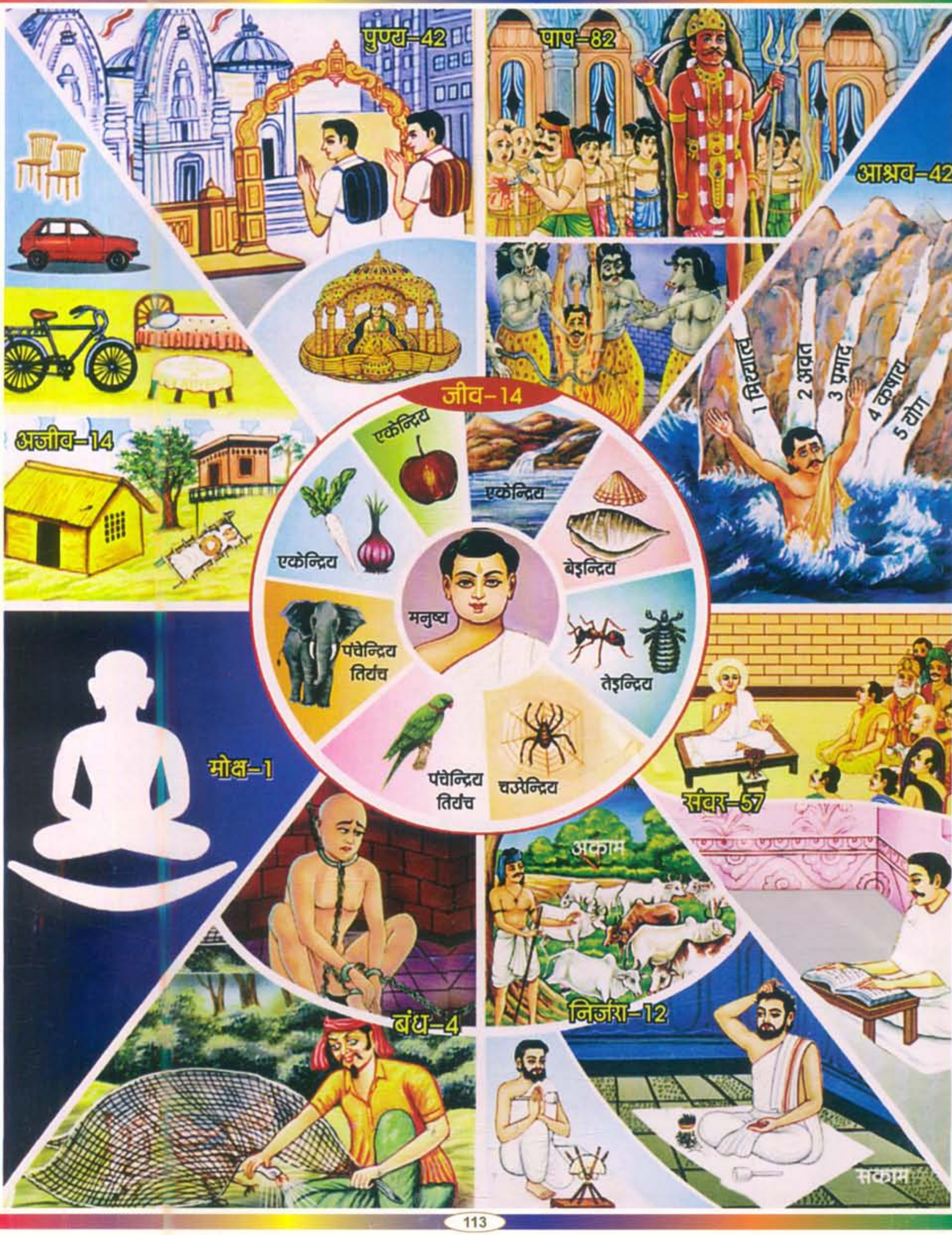
पुण्य-42
पाप-82
आश्रव-42
1 मिथ्यात्व
2 अव्रत
3 प्रमाद
4 कषाय
5 योग
अजीव-14
जीव-14
एकेन्द्रिय
एकेन्द्रिय
एकेन्द्रिय
बेइन्द्रिय
तेइन्द्रिय
चउरेन्द्रिय
पंचेन्द्रिय तिर्यंच
पंचेन्द्रिय तिर्यंच
मनुष्य
मोक्ष-1
संवर-57
बंध-4
निर्जरा-12
अकाम
सकाम

जीव के भेद-1

पाँच स्थावर

वनस्पतिकाय के 6 भेद

जीव के भेद-2 बेइन्द्रिय से पंचेन्द्रिय

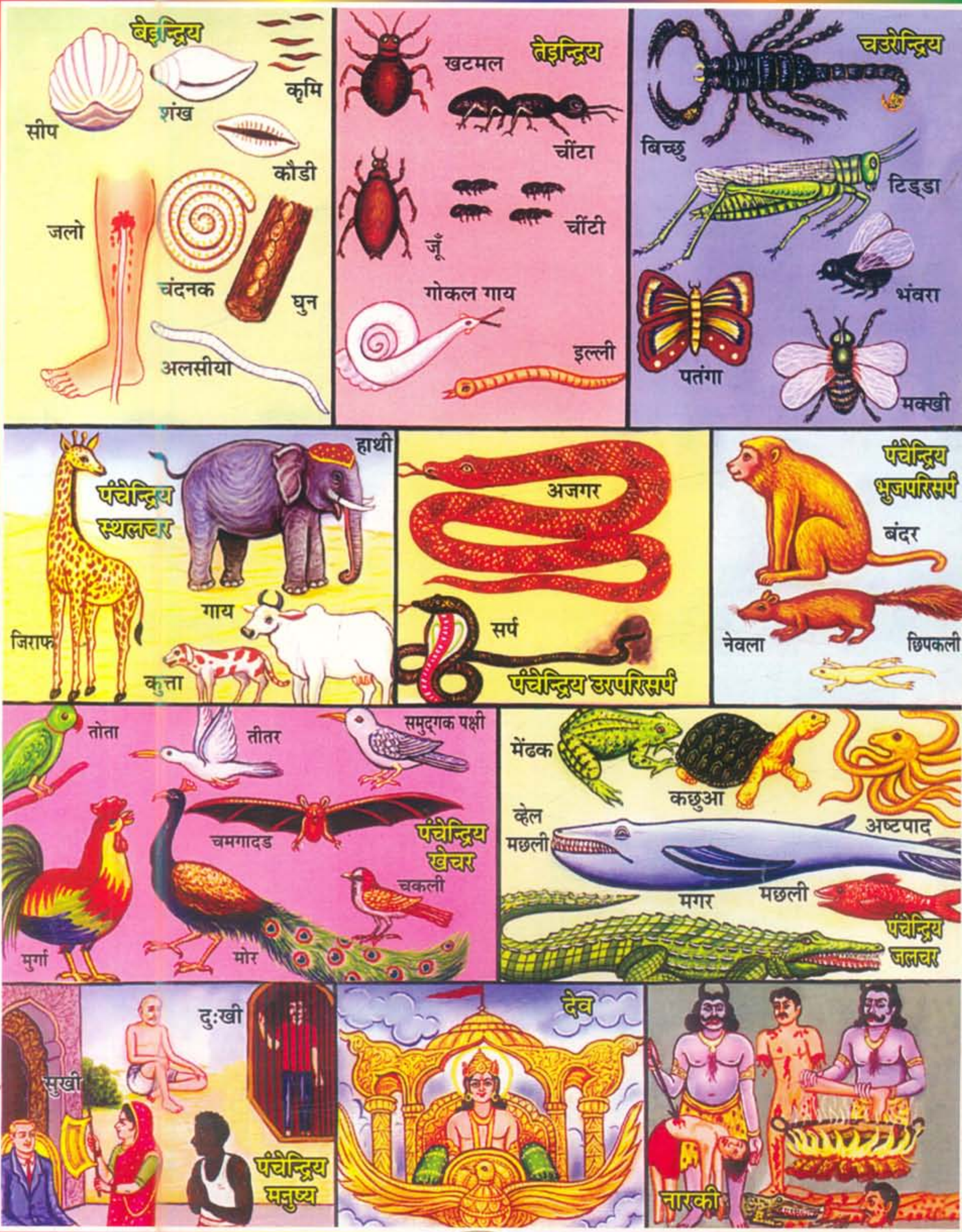

जीव के लक्षण तथा पर्याप्तियाँ

जीव की छः पर्याप्तियाँ

शिवमस्तु सर्वजगतः,

पर-हित-निरता भवन्तु भूतगणाः ।

दोषाः प्रयान्तु नाशं,

सर्वत्र सुखी भवतु लोकः ॥

- एक पुण्यशाली परिवार

बीज से अंकुर, अंकुर से पौधा, पौधे से तरूवर बने.........

क्र.	स्थल	संस्कार वाटिका	संचालक
1.	चेन्नई-साहुकारपेट	श्री वर्धमान कुंवर जैन संस्कार वाटिका	श्री वर्धमान जैन मंडल, साहुकारपेट
2.	चेन्नई-पुरुषवाक्कम	श्री जैन संस्कार वाटिका	श्री पुरुषादानीय पार्श्वनाथ जैन श्वे. मू. पू. संघ, पुरुषावाक्कम
3.	चेन्नई-पट्टालम	श्री जैन संस्कार वाटिका	श्री एकता जैन एसोसिएशन, पट्टालम
4.	चेन्नई-वेपेरी	श्री वीर संस्कार वाटिका	श्री संभवनाथ जैन वेपेरी मंडल, वेपेरी
5.	चेन्नई-रॉयपुरम	श्री सुमतिनाथ जैन संस्कार वाटिका	श्री सुमतिनाथ जैन श्वे. मू. संघ ट्रस्ट, चेन्नई
6.	चेन्नई-भारती नगर	श्री जैन संस्कार वाटिका	श्री संभवनाथ जैन ट्रस्ट
8.	चेन्नई-ट्रिप्लीकेन	श्री जैन संस्कार वाटिका	श्री नाकोडा नवयुवक मंडल, श्री सरस्वती महिला मंडल, ट्रिप्लीकेन
7.	चेन्नई-मेईलापुर	श्री वासुपूज्य जैन संस्कार वाटिका	श्री वासुपूज्य जैन युवक मंडल, चेन्नई
9.	चेन्नई - पोरूर	श्री शत्रुंजय-गिरनार संस्कार वाटिका	श्री मुनिसुव्रतस्वामी जैन समिति, पोरूर
10.	तमिलनाडु-मदुराई	श्री आदिनाथ जैन संस्कार वाटिका	श्री आदिनाथ जैन धार्मिक पाठशाला, मदुराई
11.	तमिलनाडु-तिरूनेलवेली	श्री सुपार्श्वनाथ जैन संस्कार वाटिका	श्री सुपार्श्वनाथ जैन मंडल, तिरूनेलवेली
12.	तमिलनाडु-तिरूचि	श्री पार्श्व जैन संस्कार वाटिका	श्री जैन मित्र मंडल, तिरूचि
13.	तमिलनाडु-कोयंबतुर	श्री सुपार्श्वनाथ संस्कार वाटिका	श्री राजस्थान जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संघ, कोयंबतुर
14.	तमिलनाडु-ईरोड	श्री वासुपूज्य जैन संस्कार वाटिका	श्री जैन संघ, ईरोड
15.	हैदराबाद-गौशामल	श्री शंखेश्वर पार्श्वनाथ जैन संस्कार वाटिका	श्री पार्श्व संस्कार मंच, हैदराबाद
16.	हैदराबाद-फीलखाना	श्री महावीर कुंवर जैन संस्कार वाटिका	श्री पार्श्व संस्कार मंच, हैदराबाद
17.	हैदराबाद-कोठी	श्री अजित पार्श्व जैन संस्कार वाटिका	श्री अजित पार्श्व जैन युवा मंडल, कोठी
18.	आंध्रप्रदेश-सिंकदराबाद	श्री सहस्त्रफणा पार्श्व जैन संस्कार वाटिका	श्री पार्श्वनाथ जैन मूर्तिपूजक संघ
19.	आंध्रप्रदेश-विजयनगरम्	श्री संभवनाथ जैन संस्कार वाटिका	श्री संभवनाथ जैन मंडल
20.	आंध्रप्रदेश-आदोनी	श्री जैन संस्कार वाटिका	श्री जैन संघ, आदोनी
21.	कर्नाटक-बल्लारी	श्री वासुपूज्य जैन संस्कार वाटिका	श्री जैन संघ, बल्लारी
22.	कर्नाटक-हुबली	श्री जैन संस्कार वाटिका	श्री जैन संघ, हुबली
23.	कर्नाटक- मैसूर	श्री वासुपूज्य जैन संस्कार वाटिका	श्री जिनदत्तसूरि जैन दादावाडी ट्रस्ट, मैसूर
24.	कर्नाटक-होसपेट	श्री आदिनाथ जैन संस्कार वाटिका	श्री आदिनाथ जैन श्वेताम्बर संघ
25.	कर्नाटक-बीजापुर	श्री जगवल्लभ पार्श्वनाथ जैन संस्कार वाटिका	श्री वात्सल्य ग्रुप
26.	कर्नाटक-अरसीकरै	श्री वासुपूज्यस्वामी जैन संस्कार वाटिका	श्री वासुपूज्यस्वामी जैन श्वेताम्बर मूर्तिपूजक संघ
27.	कर्नाटक-टुमकुर	श्री अजितनाथ जैन संस्कार वाटिका	श्री जैन संघ, टुमकुर
28.	कर्नाटक-दावणगिरि	श्री सुपार्श्वनाथ जैन संस्कार वाटिका	श्री सुपार्श्वनाथ जैन मूर्तिपूजक जैन संघ, दावणगिरि
29.	कर्नाटक-रानीबेन्नूर	श्री सुविधिनाथ-सुमति बाल संस्कार वाटिका	श्री जैन संघ, रानीबेन्नूर
30.	कर्नाटक-धारवाड	श्री जैन संस्कार वाटिका	श्री जैन संघ, धारवाड
31.	कर्नाटक-हुविनाहड़गली	श्री अजितनाथ जैन संस्कार वाटिका	श्री जैन संघ, हविनाहड़गली
32.	मुम्बई-विरार	आध्यात्मिक संस्कार वाटिका	सम्यक ग्रुप, विरार
33.	मध्यप्रदेश - राजनांदगांव	श्री सुलोचना संस्कार वाटिका	श्री जिनदत्तसूरि सेवा संघ, राजनांदगाँव
34.	महाराष्ट्र-रत्नगिरी	श्री सुमतिनाथ जैन संस्कार वाटिका	श्री सुमतिनाथ जैन मंडल, रत्नगिरि
35.	महाराष्ट्र-चन्द्रपुर	श्री शांति-सुलोचन संस्कार वाटिका	श्री श्वेताम्बर जैन मंदिर ट्रस्ट, चंद्रपुर
36.	महाराष्ट्र - इस्लामपुर	श्री वासुपूज्य जैन संस्कार वाटिका	श्री वासुपूज्य जैन संघ, इस्लामपुर
37.	महाराष्ट्र-कराड	श्री जैन संस्कार वाटिका	श्री जैन संघ, कराड़
38.	पुना-चिंचवड़गांव	श्री ज्ञान संस्कार वाटिका	श्री जैन संघ, चिंचवड़गांव
39.	उड़ीसा-खीरयार रोड़	श्री जैन संस्कार वाटिका	श्री जैन संघ, खरीयार रोड
40.	राजस्थान - पाली	श्री जैन संस्कार वाटिका	सकल मूर्तिपूजक जैन संघ,पाली
41.	केरल-कोचिन	श्री जैन संस्कार वाटिका	श्री जैन संघ, कोचिन
42.	राजस्थान-जोधपुर	श्री पार्श्व कुंवर जैन संस्कार वाटिका	श्री जैन संघ, जोधपुर

धार्मिक पाठशाला में आने से.....

1) सुदेव, सुगुरु, सुधर्म की पहचान होती है।

2) भावगर्भित पवित्र सूत्रों के अध्ययन व मनन से मन निर्मल व जीवन पवित्र बनता है और जिनाज्ञा की उपासना होती है।

3) कम से कम, पढाई करने के समय पर्यंत मन, वचन व काया सद्विचार, सद्वाणी तथा सद्वर्तन में प्रवृत्त बनते हैं।

4) पाठशाला में संस्कारी जनों का संसर्ग मिलने से सद्गुणों की प्राप्ति होती है "जैसा संग वैसा रंग"।

5) सविधि व शुद्ध अनुष्ठान करने की तालीम मिलती है।

6) भक्ष्याभक्ष्य आदि का ज्ञान मिलने से अनेक पापों से बचाव होता है।

7) कर्म सिद्धान्त की जानकारी मिलने से जीवन में प्रत्येक परिस्थिति में समभाव टिका रहता है और दोषारोपण करने की आदत मिट जाती है।

8) महापुरुषों की आदर्श जीवनियों का परिचय पाने से सत्त्वगुण की प्राप्ति तथा प्रतिकुल परिस्थितिओं में दुर्ध्यान का अभाव रह सकता है।

9) विनय, विवेक, अनुशासन, नियमितता, सहनशीलता, गंभीरता आदि गुणों से जीवन खिल उठता है।

बच्चा आपका, हमारा एवं
संघ का अमूल्य धन है।
उसे सुसंस्कारी बनाने हेतु
धार्मिक पाठशाला अवश्य भेंजे।